स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

रजत जयन्ती वर्ष
25 YEARS

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agri search with a human touch

दलहन आलोक

राजभाषा पत्रिका अंक : षोडशम् 2018

भाकृअनुप
ICAR

भाकृअनुप–भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान

कानपुर 208 024

INDIAN INSTITUTE OF PULSES RESEARCH
IIPR
भादअस

राजभाषा पत्रिका

vad % "kkM'ke 2018

दलहन आलोक

HkkÑvuqi&Hkkjrh; nygu vuqla/kku laLFkku
dkuiqj 208 024

izdk'kd % डॉ. नरेन्द्र प्रताप सिंह, निदेशक
भाकृअनुप–भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान
कानपुर 208 024

lEiknu] :ikdu ,oa lTtk % डॉ. राजेश कुमार श्रीवास्तव

QkVksxzkQh % श्री राजेन्द्र प्रसाद

fgUnh izdk'ku lfefr % डॉ. नरेन्द्र प्रताप सिंह, अध्यक्ष
डॉ. आदित्य प्रताप
डॉ. राज कुमार मिश्रा
डॉ. जी.के. श्रीवास्तव
श्री हसमत अली
डॉ. राजेश कुमार श्रीवास्तव, सदस्य सचिव

efnzr % सितम्बर, 2018

izdk'ku la[;k % 06/2018

if=dk esa izdkf'kr jpukvksa dh ekSfydrk] rkfdZdrk ,oa lR;rk gsrq ys[kd.k mÙkjnk;h gSaA

मुद्रण : एपीपी प्रेस, 33 नेहरू रोड, सदर कैण्ट, लखनऊ 226 002 फोन (0522) 2481164

निदेशक की कलम से....✍

विविधता हमारे देश का शृंगार है। इतनी विविधता के बावजूद हमारे देश में अद्वितीय एकता है और इस एकता की एक मजबूत कड़ी है हिंदी। किसी भी देश के विकास में राजभाषा का महत्वपूर्ण योगदान होता है क्योंकि ज्ञान का आदान–प्रदान, संचार और संरक्षण भाषा द्वारा ही किया जाता है। आज विकास की गति में हमारी राजभाषा हिंदी सूत्रधार का कार्य कर रही है। हमारे संविधान निर्माताओं ने इस सत्य को पहचाना था और इसीलिए हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकारा था। अतएव एकता की इस कड़ी को और अधिक मजबूत करना प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है। विचारणीय है कि प्रतिभाओं के मुखर होने में निज भाषा का प्रबल योगदान होता है। जितना अधिक हम अपनी भाषा में सोचकर अपनी भाषा में व्यक्त करेंगे, उतना ही अधिक स्पष्ट एवं प्रभावी ढंग से हम अपने विचार एवं विषय को प्रकट कर सकते हैं। यही हमारी उन्नति का संवाहक होगा। अतः हमें अपनी राजभाषा हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग करना होगा, निजी कार्यों में और सरकारी कामकाज में भी।

संस्थान में राजभाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार एवं प्रयोग को आगे बढ़ाने के लिए बहुआयामी प्रयास किए गए हैं। इसी क्रम में हिन्दी में, मौलिक वैज्ञानिक लेखन, कार्यालीन पत्राचार और सृजनात्मक अभिव्यक्ति को बढ़ावा दिया गया है। तकनीकी क्षेत्रों के साथ–साथ, गैर तकनीकी क्षेत्रों में भी हिन्दी के प्रयोग में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। परिणामस्वरूप, संस्थान द्वारा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन एवं हिन्दी के प्रयोग को अनेक स्तरों पर सराहा गया है।

संस्थान द्वारा प्रत्येक वर्ष "दलहन आलोक" का प्रकाशन हिन्दी को बढ़ावा देने का एक उत्कृष्ट प्रयास है। इसके प्रकाशन में सभी का सहयोग अविस्मरणीय है। मूझे पूर्ण विश्वास है कि पत्रिका का यह अंक भी राजभाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार हेतु बहुउपयोगी सिद्ध होगा। मैं उन सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों/कर्मचारियों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने अपने रचनात्मक सहयोग से हिन्दी का मान बढ़ाया है।

संस्थान की राजभाषा पत्रिका "दलहन आलोक" निरंतर प्रगति की ओर उन्मुख है पत्रिका यूँ ही पल्लवित पुष्पित होती रहे, इसी शुभकामना के साथ.....

नरेन्द्र प्रताप सिंह

¼ujUn izrki flag½

सम्पादकीय

हर्ष का विषय है कि संस्थान की राजभाषा पत्रिका ''दलहन आलोक'' निरन्तर प्रगति की ओर उन्मुख है। इस पत्रिका के माध्यम से संस्थान का यह प्रयास रहा है कि सभी लोगों में सृजनात्मक हिन्दी लेखन की अभिरुचि बढ़े और राजभाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लक्ष्य को पूरा किया जा सके।

पत्रिका के इस अंक में नवीन प्रौद्योगिकी को समाहित करते हुए जानकारी से परिपूर्ण तकनीकी एवं वैज्ञानिक लेख सम्मिलित हैं। इस प्रकार हिन्दी भाषा के माध्यम से वैज्ञानिक उपलब्धियों को जन–जन तक पहुँचाना ही हमारा उद्देश्य है।

इसके अतिरिक्त, सामान्य अभिरुचि के लेख व कविताएं, आदि पाठकों के ज्ञानवर्धन के साथ–साथ मनोरंजन भी करेंगी। हमारा भरसक प्रयास है कि पत्रिका आपको रुचिकर लगे। आपके अमूल्य विचार एवं सुझाव इस पत्रिका को और अधिक समृद्ध बनाने में सहायक सिद्ध होंगे।

दलहन आलोक को इस स्तर तक पहुँचाने के लिए हम संस्थान के निदेशक एवं समस्त सहयोगियों के आभारी हैं, जिनके अथक प्रयास से पत्रिका का प्रकाशन सम्भव हो सका।

सभी को हमारा हार्दिक धन्यवाद !

lEikndx.k

अनुक्रमणिका

- निदेशक की कलम से
- सम्पादकीय

oKkfud@rduhdh vkys[k

1. ग्वार : एक बहुउद्देशीय फसल 1
2. दलहन खेती में जीवाणु खाद का महत्व 3
3. मूँग, उर्द एवं मसूर की बीजोत्पादन तकनीक 5
4. पौधों के रोग, रोगजनक एवं पहचान की विधियाँ 8
5. जैविक खेती के लिए वरदान फार्म एवं केंचुआ खाद 13
6. भूमि सुधार में हरी खाद का महत्व 16
7. कीटों द्वारा बैसिलस थ्यूरिंजिएन्सिस के विषाक्त पदार्थों के प्रति प्रतिरोध का प्रबंधन 18
8. जैव सुरक्षा : एक महत्वपूर्ण मुद्दे के तहत कार्टाजेन प्रोटोकॉल 21
9. राजमा की पोषक उपयोगिता एवं उसका महत्व 23
10. चना की गुणवत्ता एवं स्वास्थ्य लाभ में योगदान 24
11. बीज अंकुरण परीक्षण की आवश्यकता क्यों ? 26
12. बसंत/ग्रीष्मकालीन उर्द व मूँग की उन्नत खेती 29
13. थर्मल असममित इण्टरलेस्ड पी.सी.आर.: जीनोम अनुक्रम ज्ञात करने की विधि 32
14. बीजों के परिवर्धन से पाएं ज्यादा उपज 34
15. सूक्ष्म जीवाणुओं की जैविक खेती में भागीदारी 37
16. जीवों में प्रोटीन संश्लेषण 40
17. सक्षम कोशिका के निर्माण का सिद्धान्त 42
18. मसूर की खेती से पाएं अधिक लाभ 43
19. जीनोम एडिटिंग की क्रिसपर कैस 9 तकनीकी 46

lkekU; vfHk#fp

20. पानी पिएँ तो रखें ध्यान 47
21. डिजिटल पुस्तकालयों की प्रासंगिकता 54
22. साइबर विस्तार : आधुनिक कृषि सूचना तंत्र 56

23. लेजर लेवलर : संसाधन संरक्षण के लिए एक उपयोगी यंत्र 57
24. दलहन उत्पादन प्रौद्योगिकियों के प्रसार में आधुनिक सूचना संचार तकनीक का योगदानः सफल अनुभव 60
25. ग्रामीण आय सम्वर्धन 63
26. जड़त्व का सिद्धान्त 66
27. मनुष्य का आचरण एवं व्यवहार – एक दृष्टि में 69
28. सौ ऊँट – समस्या हल करने की सीख देती कहानी 70

dfork,

29 जलवायु परिवर्तन 71
30. अन्न का भाव 72
31. परम ज्ञान 73
32. सुगन्ध माटी की 75

fofo/kk

33. राजभाषा कार्यान्वयन समिति 76
34. हिन्दी दिवस का आयोजन 77
35. वर्ष 2017 में दिए गए राजभाषा पुरस्कार 78
36. संस्थान के हिन्दी प्रकाशन 79
37. दृश्यावलोकन 81
38. नवीनतम गतिविधियाँ

ग्वार : एक बहुउद्देशीय फसल

f'kolod ,o ,e-ih- flag

ग्वार (*सायमोटिसस टेट्रागोनोलोबा*) एक प्राचीन, बहुउद्देशीय, गहरे जड़ तंत्र वाली, सूखा प्रतिरोधी फसल है। इसकी खेती असिंचित व बहुत कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। इसको उगाने से 25–30 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि को उपलब्ध हो जाती है। ग्वार के बीजों में अत्यधिक प्रोटीन तथा उच्च गुणवत्ता वाला गैलक्टोमैनन ग्वार गोंद मिलने के कारण यह एक व्यवसायिक फसल के रूप में जानी जाती है।

भारत ग्वार को सबसे ज्यादा उगाने वाला एवं उत्पादन करने वाला देश है तथा यहाँ इसकी उत्पादकता 567 कि.ग्रा. /हेक्टेयर है। भारत के ग्वार के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल के 80 प्रतिशत क्षेत्रफल में 60 प्रतिशत ग्वार का उत्पादन राजस्थान राज्य में होता है परन्तु यहाँ इसकी उत्पादकता सबसे कम है। इसके अलावा, ग्वार की खेती हरियाणा, गुजरात, पंजाब तथा मध्य प्रदेश में होती है। ग्वार की खेती वैसे तो सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है परन्तु अधिक पैदावार के लिये समतल दोमट मिट्टी तथा उत्तम जल निकास की व्यवस्था वाली भूमि सर्वोत्तम होती है।

ग्वार के बीज में पाये जाने वाले एण्डोस्पर्म से औद्योगिक गोंद प्राप्त किया जाता है और इसका यही एक गुण है। जिसने ग्वार को विश्वभर में मान्यता प्रदान की है। इस गुण के होने से ग्वार की फसल श्रेष्ठतम् फसलों में शामिल हो गयी है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान संकट की परिस्थितियों में जब कागज निर्माण में काम आने वाले स्टार्च के स्थान पर किसी दूसरे पदार्थ की आवश्यकता को महसूस किया गया, तभी से ग्वार गोंद का उपयोग उद्योगों में बढ़ने लगा। स्टार्च की तुलना में ग्वार गोंद अधिक संयोजक प्रकृति का होने के कारण इसका उपयोग बहुतायत से होने लगा है। इन्हीं गुणों के कारण ग्वार की फसल पर किये जाने वाले शोध एवं अध्ययन पर अधिक जोर दिया जाने लगा है।

Xokj d mi;kx

1- Xokj xkn

ग्वार गोंद उच्च आणविक भार वाला एक बहुलक कार्बोहाइड्रेट है जो कि मैनोज और गैलेक्टोज की बहुत सारी शर्करा इकाइयों के एक साथ जुड़ने से बना हैं। इस गोंद का सबसे महत्वपूर्ण गुण यह है ठण्डे पानी में तेजी से घुलकर बहुत उच्च विस्कासिता वाला घोल बना लेता है। ग्वार गोंद बहुत ही गुणकारी होता है। यह अआयनिक, उदासीन पॉली सैकराइड है एवं जल तंत्र के लिये विस्कासिता प्रदान करता है। इन्हीं गुणों के कारण ग्वार गोंद का उपयोग निम्नलिखित उद्योगों में प्रचुरता से किया जाता है :

foLQkVd % पानी के साथ मिलकर ग्वार गोंद एक गाढ़ा चिपचिपा पदार्थ बनाता है जो कि पानी के प्रवाह को रोग देता है और इसीलिये इसका प्रयोग विस्फोटकों में प्रूफिंग कारक के रूप में किया जाता है।

VDlVkby ¼jxkbZ NikbZ m|kx½ % ग्वार गोंद और इसके व्युत्पन्नों का उपयोग साइजिंग और रेशों को छापने के लिये किया जाता है। प्रिन्टिंग पेस्ट को गाढ़ा करने में भी इसका प्रयोग होता है।

dkxt m|kx % कागज एवं सख्त बोर्ड निर्माण में इसका उपयोग लुग्दी बनाने में एक गीले संयोजक पदार्थ के रूप में किया जाता है। ग्वार गोंद की लुग्दी से बनने वाले कागज इत्यादि की पारगम्यता को कम करता है।

ry d dvk e [knkbZ % कुओं की खुदाई की प्रक्रिया में काम आने लवो ड्रिल के लिये ग्वार गोंद एक स्नेहक एवं शीतलक का काम करता है और इसका उपयोग खुदाई के दौरान आवश्यक ऊर्जा को कम करने के लिए भी किया जाता है।

[kk| m|kx % ग्वार गोंद तथा इससे बनने वाले पदार्थों का उपयोग खाद्य उद्योग पदार्थों को पृथक करने तथा उनको स्थाई बनाये रखने में किया जाता है। किसी पदार्थ की विस्कासिता को बनाये रखने व लम्बे समय तक रख–रखाव के लिये काम आने वाले सस्पेडिंग पदार्थ के रूप में भी ग्वार गोंद का उपयोग किया जाता है। इसका प्रयोग फ्रोजन खाद्य पदार्थ, बेकिंग उद्योग, दुग्ध उद्योग, नूडल निर्माण एवं पेय पदार्थों के उद्योग में भी किया जाता है।

Ükkxj i!lk/ku % ग्वार गोंद का उपयोग शैम्पू, लिपिस्टिक, हेयर स्प्रे, टूथपेस्ट आदि निर्माण में किया जाता है। साबुन निर्माण में भी घोल को गाढ़ा करने के लिये इसका उपयोग बहुतायत से होता है।

vU; mi;kx % आग बुझाने, स्याही, चॉंक बनाने तथा पाइप की दीवारों के बीच बहाव को बढ़ाने के लिये, एल्युमिनियम रिफ्लेक्टर्स में प्रदूषण नियंत्रण, फोटोग्राफी एवं जूता उद्योग में ग्वार गोंद एवं इससे बनने वाले पदार्थों का उपयोग किया जाता है। ग्वार गम उद्योग मुख्य रूप से जोधपुर, अहमदाबाद, भिवानी, श्रीगंगानगर और बाड़मेर में स्थित है।

2- i'k/ku d fy; vkgkj

pkjk % ग्वार, जानवरों के लिये पोषक चारा प्रदान करता है। इसमें प्रोटीन प्रचुर मात्रा में होती है तथा सकल पाचन योग्य पोषक (टीडीएन) तत्व की मात्रा कम होती है। इसके हरे चारे में लगभग 16 प्रतिशत कच्चा प्रोटीन, 46 प्रतिशत टीडीएन, 11.12 प्रतिशत डीसीपी और 60 प्रतिशत पाचक शुष्क पदार्थ पाया जाता है परन्तु चारे के पोषक तत्व, परिपक्वता की अवस्था के साथ बदलते रहते हैं। पुष्पन की अवस्था पर ग्वार जानवरों को खिलाना बहुत अच्छा होता है। ग्वार का चारा पोषक होता है तथा इसको गेहूँ के भूसे के साथ मिलाकर अच्छी किस्म का साइलेज बनाया जाता है।

Xokj vkgkj % प्रोटीन की अधिकता होने के कारण ग्वार के उबले हुये बीज जानवरों को खिलाये जाते हैं। ग्वार गम के उद्योग के उत्पाद में बाहरी बीज कवच एवं जैविक पदार्थ पाया जाता है जिसे ग्वार आहार कहते हैं। ग्वार आहार में लगभग 16 प्रतिशत कच्ची प्रोटीन पायी जाती है। मवेशियों के साथ–साथ इसका उपयोग मत्स्य पालन में भी किया जाता है। ग्वार मील में शेष पदार्थों के रूप में ग्वार गोंद तथा ट्रिस्सिनरोधी दो विषैले कारक पाये जाते हैं तथा ग्वार आहार को पकाने से इसके आवश्यक तत्वों में वृद्धि हो जाती है। इसका उपयोग मुर्गी पालन में मुर्गी के भोजन के रूप में सीमित मात्रा (10 प्रतिशत) में किया जाता है।

3- ekuo mi;kxFk

ग्वार की फलियों का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है। इसकी स्वादिष्ट सब्जी कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहा, विटामिन ए एवं सी का प्रमुख स्रोत है। राजस्थान में कच्ची फलियों को सुखाकर आलू के चिप्स के समान तला जाता है। अपरिपक्व हरी फलियों को सुखाकर, नमक मिलाकर लम्बे समय तक रखा जाता है।

gjh [kkn % हरी खाद के रूप में ग्वार का उपयोग किया जाता है। इसके लिये फसल को अप्रैल–मई के महीने में बोया जाता है और फूल आने से पहले खेत को जोत कर फसल को जमीन में दबा दिया जाता है। नहर से सिंचित क्षेत्रों में इसका उपयोग हरी खाद के रूप में व्यापकता से किया जाता है। ग्वार में नमी की मात्रा 70–80 प्रतिशत होती है। अन्य दलहनी फसलों की तरह, ग्वार के पौधों की जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले बैक्टीरिया गाँठों का निर्माण करते हैं और लगभग 30–40 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं।

nokb;k d mi;kxFk% विभिन्न बीमारियों के लिये दवाइयाँ बनाने में ग्वार का उपयोग किया जाता है। विभिन्न प्रकार की गोलियाँ बनाने में ग्वार गोंद का प्रयोग किया जाता है। मधुमेह एवं कॉलेस्ट्राल के नियंत्रण में इसका प्रयोग किया जाता है। क्योंकि यह भूख को घटाता है इसलिये इसका उपयोग शारीरिक सन्तुलन तथा अतिरिक्त वसा को घटाने में किया जाता है। रतौंधी के इलाज के लिये ग्वार की पत्तियों का उपयोग किया जाता है। इसके बीज का उपयोग, दस्तावर एवं चेचक के लिये कीमोथेरेप्टिक कारक के रूप में किया जाता है। उबले हुये बीजों का उपयोग प्लेग, बड़े हुये यकृत, सिर की सूजन एवं हड्डी टूटने के कारण आयी सूजन को दूर करने के लिये किया जाता है। पौधों को जलाकर उसकी राख को तेल के साथ मिलाकर उसका मिश्रण जानवरों के फोड़ों–फुंसियों पर लगाया जाता है।

ग्वार के विभिन्न प्रकार के उपयोगों को देखते हुये पिछले काफी अरसे से देश में सघन व समन्वित प्रयासों के फलस्वरूप लगभग 30 प्रजातियों का विकास किया गया। इसके साथ–साथ फसल उत्पादन व व्याधि एवं कीटों की रोकथाम से सम्बन्धित महत्वपूर्ण जानकारी विकसित की गयी। ग्वार की उन्नतशील किस्मों में गोंद की अधिक मात्रा होने के साथ–साथ रोगों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विद्यमान है। विद्यमान उन्नतशील किस्मों तथा उत्पादन प्रौद्योगिकी का यदि तीव्रता से प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिए जिससे किसान ग्वार की भरपूर फसल उत्पादन प्राप्त की जा सके।

दलहन खेती में जीवाणु खाद का महत्व

d|l|e 'kek ,o ih-, l- c l|

भारतीय कृषि पद्धति में दलहनों की खेती एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। उत्पादन के दृष्टिकोण से दलहन की खेती में विश्व में भारत प्रथम स्थान रखता है परन्तु साथ ही साथ इसकी खपत भी एक बड़े स्तर पर है। कृषि क्षेत्र में दलहन के उत्पादन में बढ़ोत्तरी के लिए रसायनिक खादों का प्रयोग लगातार एक बड़े स्तर पर किया जा रहा है। अधिक मात्रा में रसायनिक उर्वरक का कृषि में प्रयोग जमीन, भूमिगत जल, मानव स्वास्थ्य, फसल की गुणवत्ता व पर्यावरण हेतु बहुत नुकसानदायक है। कृषि में लगातार अधिक मात्रा में रसायनों के प्रयोग से जमीन जहरीली हो चुकी है। कृषि में प्रयोग होने वाले रसायनों का पर्यावरण के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव पड़ रहा है। रसायनिक खादों के प्रयोग से मृदा की प्राकृतिक उर्वरा–शक्ति दिन–प्रतिदिन कम होती जा रही है। आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यह महसूस किया जा रहा है कि रसायनिक उर्वरक एवं विभिन्न कृषि रसायनों (कीटनाशक, फफूंदनाशक एवं खरपतवारनाशक) के प्रयोग से मृदा, जल, एवं वायु सभी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, जो शरीर में किसी न किसी रूप में जाकर विभिन रोगों (विकृतियों) को जन्म दे रहे हैं। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो गया है कि इन रसायनिक उर्वरक के विकल्प के रूप में जीवाणु खाद का प्रयोग किया जाए। जीवाणु खाद में दलहनी फसलों के लिए मुख्य रूप से *"राइजोबियम कल्चर"* अनाज और सब्जी वाली फसलों के लिए *"एजोटोबैक्टर कल्चर"* और धान फसल के लिए नील हरित शैवाल *(ब्लू ग्रीन एल्गी)* कल्चर प्रयोग किए जाते है। पुरे विश्व में आज जैविक खेती को रसायनिक खेती का विकल्प माना जा रहा है। भारतीय कृषि में, जीवाणु खाद का प्रयोग एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अधिक से अधिक मात्रा में जीवाणु खाद का उपयोग कर रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग से बचा जा सकता है। जीवाणु खाद वे सूक्ष्म जीव हैं जो मृदा में पोषक तत्वों को बढ़ा कर उसे उर्वर बनाते हैं। प्रकृति में अनेक जीवाणु और नील हरित शैवाल पाए जाते हैं जो या तो स्वयं या कुछ अन्य जीवों के साथ मिलकर वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करते हैं (वातावरण में मौजूद गैसीय नाइट्रोजन को अमोनिया में परिवर्तित करते हैं)। कृषि क्षेत्र में पौध वृद्धिकारक जड़ीय जीवाणु (पी.जी.पी. आर.) एक वरदान के रूप में उभर के सामने आये है। पौध वृद्धिकारक जड़ीय जीवाणु पौधों के जड़ों में पाए जाने वाले लाभकारी जीवाणु होते है। ये जीवाणु पौधों की जड़ों में सांझेदारी बनाकर रहते हैं तथा फसलों की वृद्धि और उत्पादन में मदद करते हैं। इसी प्रकार, प्रकृति में अनेक कवक और जीवाणु पाए जाते हैं जिनमें मृदा में बंद्ध फॉस्फेट को मुक्त करने की क्षमता होती है। कुछ ऐसे कवक भी होते हैं जो कार्बनिक पदार्थों को तेजी से विघटित करते हैं जिसके फलस्वरूप मृदा को पोषक तत्व प्राप्त होते हैं। अतः जैविक खादें नाइट्रोजन के यौगिकीकरण, फॉस्फेट की घुलनशीलता और शीघ्र पोषक तत्व मुक्त करके मृदा को उपजाऊ बनाती हैं। जीवाणु खाद्य, वैज्ञानिक तरीकों से मृदा में उपस्थित लाभकारी सूक्ष्म जीवों का चुनाव कर उचित देख–रेख में प्रयोगशाला में तैयार की जाती है।

thok.k [kkn d çdkj ,o ykHk

thok.k [kkn

जीवाणु खाद विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीव के पौध वृद्धि कार्य के अनुसार तैयार किये जाते हैं। बाजार में निम्न प्रकार की पी.जी.पी.आर. आधारित जीवाणु खाद उपलब्ध हैं – राइजोबियम कल्चर, एजोटोबेक्टर कल्चर, एजोस्पारिलम कल्चर, नील हरित शैवाल, फास्फेटिका कल्चर, एजोला फर्न माइकोराइजा।

jkbtkfc;e dYpj% राइजोबियम एक पौध वृद्धि लाभकारी जीवाणु है जो दलहनी फसलों की जड़ों में गुलाबी रंग की गाँठ बनाकर रहते हैं। वायुमंडल में नत्रजन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है परन्तु पौधे इन्हें प्रत्यक्ष रूप से ग्रहण नहीं कर सकते। सूक्ष्म जीवाणुओं में इन्हें पौधों के उपयोगी स्वरुप में बदलने की क्षमता होती है, जिन्हें पौधे आसानी से ग्रहण कर सकते हैं। ये जीवाणु वायुमंडल में उपस्थित नत्रजन को लेकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। अलग–अलग दलहनी फसलों के लिए अलग प्रकार के राइजोबियम जीवाणु होते हैं।

एजोटोबैक्टर जीवाणु खाद: एजोटोबैक्टर जीवाणु मृदा में स्वतंत्र रूप से पाए जाते हैं। ये जीवाणु वायुमंडल में उपस्थित नत्रजन को पौधों तक उपलब्ध कराते हैं। एजोटोबैक्टर जीवाणु खाद बिना दलहनी फसलों में प्रयोग की जाती है। ये जीवाणु खाद बीजों के अंकुरण में भी सहायता करते हैं एवं इनके प्रयोग से जड़ों में होने वाले फफूंद रोग से भी बचाव होता है। इस कल्चर का प्रयोग गेंहू, जौ, मक्का, बैगन, टमाटर, आलू एवं तिलहनी फसलों में करते हैं।

फास्फेट विलेयक जीवाणु (पी.एस.बी.): फास्फेट विलेयक जीवाणु एक लाभकारी जीवाणु होते हैं जिनमें अघुलनशील यौगिक में उपस्थित अकार्बनिक फास्फोरस को घुलनशील फास्फोरस में परिवर्तित कर पौधों को प्रत्यक्ष रूप से फास्फोरस ग्रहण कराने की क्षमता होती है। बैक्टीरिया की एक विविध सारणी जैसेः स्यूडोमोनस, एजोटोबैक्टर एवं एक्टिनोमाईसिटीज इत्यादि और एस्पर्जिलस तथा पेनिसिलियम जैसे कवक मिट्टी में फास्फोरस की घुलनशीलता को बढ़ाकर पौधों के लिए उपलब्ध रूप में प्रदान करने के साथ–साथ इसका खनिजीकरण करने में सक्षम होते हैं। अतः मृदा में उपलब्ध फास्फोरस के इस सीमित मात्रा का सदुपयोग करने के लिए इन्हें जैव उर्वरक के रूप में प्रयोग करके अत्यधिक लाभ उठाया जा सकता है।

एजोस्पिरिलम कल्चर: एजोस्पिरिलम जीवाणु कोशिकायें पौधों की जड़ों में स्वतन्त्र रूप से रहती है तथा वायुमंडल में उपस्थित नत्रजन का स्थिरीकरण कर पौधों को उपलब्ध कराती हैं। एजोस्पिरिलम कल्चर खरीफ मौसम में पाई जाने वाली फसलों के लिए विशेष उपयोगी होता है। एजोस्पिरिलम जीवाणु में कई प्रकार के पादप हार्मोन्स होते हैं, जो पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक है। एजोस्पिरिलम जड़ों के विस्तार एवं फैलाव में भी सहायक होते हैं, जिससे पोषक तत्वों, खनिजों एवं जल के अवशोषण क्रिया में वृद्धि होती है जिन फसलों में अधिक पानी की मात्रा दी जाती है वहाँ ये विशेष लाभकारी होते हैं।

नील हरित शैवाल: नील हरित शैवाल प्रकाश संश्लेषण करने वाला एक लाभकारी प्रोकेर्योटिक जीवाणु होते हैं। ये शैवाल खेतों में मिट्टी के सदृश्य सूखी पपड़ी के रूप में होते हैं तथा धान के खेती के लिए विशेष लाभकारी होते हैं।

जैव नियंत्रक सूक्ष्मजीव: बैक्टीरिया, कवक एवं एक्टीनोबैक्टीरिया की प्रमुख प्रजातियाँ पादप मूल रोग के रोकथाम के लिए जैव–नियंत्रक के रूप में कार्य कर सकते हैं। जैव नियंत्रक जीवाणुओं का आमतौर पर प्रति जीवाणु विकिकरण क्षमता का परीक्षण किया जाता है जो स्थानीय जीवाणुओं की विरोधात्मक परभक्षी प्रवृति, परजीविता एवं प्रतिस्पर्धा से उत्पन्न होती है। यद्यपि जो जीवाणुओं रोगों और कीटों में दैहिक प्रतिरोध को प्रेरित करते हैं, उन्हीं में प्रतिकूल परिस्थितियों में सफल रहने की क्षमता सबसे ज्यादा होती है। सूक्ष्म–जीवाणुओं की विविधता, रोगजनक जीवाणु और संक्रमण में कमी, पौध–वृद्धि उत्प्रेरक और दैहिक प्रतिरोध को प्रेरित करती है जिसके कारण कई क्षेत्रों की मिट्टी में रोग जीवाणु, मेजबान पौधों और अनुकूल जलवायु की उपस्थिति में भी रोग की गंभीरता को कम कर देती है।

जीवाणु खाद का लाभ

(1) कृषि क्षेत्र में जीवाणु खादों के प्रयोग से मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ती है तथा पर्यावरण संतुलित रहता है।

(2) अघुलनशील लाभकारी पोषक तत्व जिन्हें पौधे प्रत्यक्ष रूप से ग्रहण नहीं कर सकते, उन्हें घुलनशील पोषक तत्त्वों में परिवर्तित कर पौधों को पोषक तत्व ग्रहण करने में मदद करते हैं।

(3) जीवाणु खाद के प्रयोग से पर्यावरण पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता तथा पर्यावरण संतुलित बना रहता है।

(4) जीवाणु खाद मृदा में बचे कार्बनिक अपशिष्टों को सड़ाकर मृदा में कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा बनाए रखते है।

(5) जीवाणु खाद में पौधों में पाए जाने वाली बीमारियों के रोगजनक से लड़ने की क्षमता होती है।

(6) जीवाणु खाद प्रतिकूल स्थितियों में भी पौधों की स्थिरता बनाए रखने में सहायता करती है।

(7) जीवाणु खाद के प्रयोग से रसायनिक उर्वरकों की बचत होती है।

अंततः उपर्युक्त वर्णन से यह सिद्ध होता है कि उन्नत कृषि एवं बागवानी के लिए लाभदायक जीवाणुओं की गतिविधियों एवं क्रियाशीलता में वृद्धि करके इनका महत्वपूर्ण योगदान प्राप्त कर सकते हैं। इन जीवाणुओं के द्वारा पौध पोषण, रोग नियंत्रण एवं विभिन्न अजैव दबाव इत्यादि के नियंत्रण में पौधों की सहायता करके खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ पर्यावरण परिदृश्य में भी सफलता प्राप्त की जा सकती है।

मूँग, उर्द एवं मसूर की बीजोत्पादन तकनीक

Vh-,u- frokjh ,o y[ku oek

देश में दलहनों की पोषण सुरक्षा हेतु भरपूर पैदावार होना अपरिहार्य है जिसके लिए विभिन्न दलहनी फसलों में अच्छे जमाव एवं पर्याप्त पौध संख्या का होना अति आवश्यक है जो कि गुणवत्तायुक्त बीज के बिना कतई सम्भव नहीं है। अतः किसानों को सस्ते दर एवं समय पर गुणवत्तायुक्त बीज प्राप्त करने हेतु यदि उन्हें स्वयं उन्नत बीज उत्पादन की तकनीक का ज्ञान करा दिया जाए तो वे स्वयं भी उन्नतशील प्रजातियों के बीज अपने खेतों पर तैयार कर सकते हैं तथा इन बीजों को समुचित भण्डारण विधि अपनाकर अगले बुवाई सत्र के लिए उपयोग में ला सकते हैं। उपरोक्त के संदर्भ में ही मूंग, उर्द व मसूर के बीज उत्पादन तकनीकी निम्नानुसार वर्णित है जो किसानोपयोगी होगी :

ex ,o mn chtkRiknu

cht lkr% आधार बीज उत्पादन के लिए प्रजनक या आधार बीज तथा प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए आधार बीज मान्य स्रोत से प्राप्त करना चाहिए।

[kr dk p;u% मूँग तथा उर्द के लिए यह आवश्यक है कि चयनित खेत में पिछले दो मौसमों में इनकी फसल न ली गयी हो। जिस खेत में वही किस्म उगाई गयी थी और वह आनुवांशिक शुद्धता तथा रोगों की स्थिति की दृष्टि से प्रमाणीकरण मानकों के अनुरूप थी, ऐसा खेत चुना जा सकता है। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

iFkDdj.k% मूँग व उर्द के खेतों से बीज फसल की दूरी आधार बीज उत्पादन के लिए 10 मी. तथा प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए 5 मी. पर्याप्त है।

[kr dh r;kjh% एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके 2–3 जुताई देशी हल या हैरो से करें।

ex ,o mn d fy, cvkb d io% रोगरोधी प्रजातियों का चयन करें। गर्मी में गहरी जुताई करने से मृदाजनित रोग तथा सूत्रकृमि से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है।

ex ,o mn d fy, cokb d le;% कार्बेन्डाजिम + थीरम (12 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) की दर से बीजोपचार फसल की पौध अवस्था में मृदाजनित रोगों से बचाव करता है।

cokb% बुवाई जुलाई के प्रथम पखवाड़े में, 30–45 से.मी. की दूरी पर पंक्तियों में करें। इसके लिए 10–15 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। सिंचाई की सुविधा होने पर बसंत ऋतु (मध्य फरवरी) में बुवाई की जा सकती है, जिसके लिए पंक्तियों की दूरी 20–25 से.मी. बीज 20–25 कि.ग्रा. बीज/हेक्टेयर लगता है। पौधे से पौधे कर दूरी 10 से.मी. रखी जाती है।

mUur'khy itkfr;k

मूँग की उन्नतशील प्रजातियां (बसंत एवं ग्रीष्म)	उपयुक्त क्षेत्र	औसत बीज दर प्रति हेक्टेयर	औसत उत्पादन क्षमता (कुन्तल/हेक्टेयर)
सम्राट, मेहा, आई.पी.एम.–02–3 जन कल्याणी, एच.यू.एम–12, एच.यू.एम.–6, शिखा, विराट	उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र (मध्य एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, प. बंगाल, झारखण्ड एवं असम तथा उड़ीसा का आंशिक क्षेत्र)	**खरीफ** : 15–20 कि.ग्रा./हे.. **ग्रीष्मकालीन** : 20–25 कि.ग्रा./हे..	10–14 कुन्तल/हेक्टेयर

उर्द की उन्नतशील प्रजातियां (बसंत एवं ग्रीष्म)	उपयुक्त क्षेत्र	औसत बीज दर प्रति हेक्टेयर	औसत उत्पादन क्षमता (कुन्तल/हेक्टेयर)
उर्द खरीफ– उत्तरा, उजाला, के.यू. 309, नरेन्द्र उर्द 1, बिरसा उर्द 1, डब्ल्यू.बी.यू. 108 **उर्द बसंत/ग्रीष्म–** डब्ल्यू बी.यू. 109, के.यू. 91–2	उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र (मध्य एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, झारखण्ड एवं असम तथा उड़ीसा का आंशिक क्षेत्र)	**खरीफ** : 15–20 कि.ग्रा./हे. **ग्रीष्मकालीन** : 20–25 कि.ग्रा./हे.	10–14 कुन्तल/हेक्टेयर

उर्वरक: 15–20 कि.ग्रा. नत्रजन तथा 40–45 कि.ग्रा. फॉस्फोरस की प्रति हेक्टेयर मात्राएँ पर्याप्त होती हैं, जो 100 कि.ग्रा. डाई अमोनियम फॉस्फेट (डीएपी) प्रति हेक्टेयर देने से पूरी की जा सकती है।

सिंचाई: आवश्यकतानुसार 3–4 सिंचाई करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

(क) खरपतवार नियंत्रण: 2–3 बार निकाई–गुड़ाई करने से खरपतवारों की रोकथाम हो जाती है अन्यथा बुवाई से पूर्व जुताई करते समय भूमि में 1 कि.ग्रा. ट्रेफ्लॉन (1000 ली. पानी में घोलकर) प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देना चाहिए।

(ख) रोग नियन्त्रण: वर्षा ऋतु की फसल में पीले मोजैक रोग का आक्रमण अधिक होता है। अतः 1 ली. मेटासिस्टॉक्स (1000 ली. पानी में) प्रति हेक्टेयर का छिड़काव रोगवाहक मक्खी की रोकथाम के लिए बुवाई से 20–25 दिन बाद करना चाहिए, जो 2–3 बार (10–15 दिन के अन्तर पर) दोहराया जाय।

(ग) कीट नियन्त्रण: रोएँदार गिडार का प्रकोप होने पर 1 ली. थायोडान 35 ई.सी. (1000 ली. पानी में) प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करना चाहिए।

अवांछनीय पौधों का निकालना: भिन्न पौधों को दो बार (पुष्पण व परिपक्व अवस्था पर) निकालना चाहिए। इसके साथ ही रोगग्रस्त पौधों को निकालकर जला अथवा गड्ढे में गाड़ देना चाहिए।

कटाई, गहाई आदि: उर्द की फसल की अधिकांश फलियां पककर काली पड़ जाने पर कटाई की जाती है, जबकि मूँग में फलियों की 2–3 बार तुड़ाई की जाती है। फलियों को डंडों से पीटकर या दांय चलाकर दाने निकाले जाते हैं, जो लगभग 8–9 प्रतिशत नमी स्तर तक सुखाने के बाद भंडारित किए जाते हैं।

भंडारण: किसान अपने घरों पर सूखे एवं ठण्डे कमरों में मिट्टी के कुठले में सूखे बीजों को कीटनाशक दवाओं के साथ डालकर अच्छी तरीके से उन्हें बन्द कर दें जिससे उनमें नमी न जा सके। इस क्रिया सें बीज अगले बुवाई सत्र तक सुरक्षित मिल जाते हैं।

मसूर बीजोत्पादन

बीज स्रोत: आधार बीज उत्पादन के लिए मान्य स्रोत से प्रजनक या आधार बीज प्राप्त किया जाता है। बोने से पहले बीज थैलों पर लगे लेबिल व टैग से किस्म की जाँच कर लें और टैग व लेबिल को संभालकर रखें।

खेत का चयन: मसूर बीज की बीज फसल के लिए ऐसा खेत चुना जाए, जिसमें पिछले दो मौसमों में मसूर की फसल न ली गयी हो। यदि आवश्यक हो तो ऐसा खेत चुना जा सकता है जिसमें पिछले मौसम में वही किस्म प्रमाणित बीज से उगाई गई थी। खेत की भूमि उत्तम हो तथा उसमें जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

पृथक्करण: आधार बीज उत्पादन में 10 मी. तथा प्रमाणित बीज उत्पादन में 5 मी. अन्य मसूर के खेतों से दूरी पर्याप्त है।

खेत की तैयारी: एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद 2–3 जुताई देशी हल या हैरो से करें।

बुवाई के पूर्व: मृदाजनित रोगों तथा सूत्रकृमि से होने वाले नुकसान से बचने के लिए गर्मी में गहरी जुताई करें।

बुवाई का समय: मिट्टीजनित रोगों के नियन्त्रण के लिए कार्बेन्डाजिम+थीरम (12 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) अथवा ट्राईकोडर्मा + कार्बोक्सिन (41 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से बीजोपचार करें।

बुवाई: मसूर की बुवाई का उचित समय अक्टूबर का तीसरा सप्ताह है, जिसके लिए 25–30 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त है। देर से बुवाई में बीज की मात्रा अधिक लगती है और उपज घट जाती है। बुवाई 25–30 से.मी. की दूरी पर पंक्तियों में करनी चाहिए।

उर्वरक: यदि मृदा में पोषक तत्वों की कमी हो तो 150–200 कि.ग्रा. डाई अमोनियम फॉस्फेट (डीएपी) तथा 50–100 कि.

मसूर की उन्नतशील प्रजातियां	उपयुक्त क्षेत्र	औसत बीज दर प्रति हेक्टेयर	औसत उत्पादन क्षमता (कुन्तल/हेक्टेयर)
प्रिया, नूरी, शेरी (डीपीएल 62) आईपीएल 406, मलिका नरेन्द्र मसूर 1, पन्त मसूर 234, पन्त मसूर 4, पन्त मसूर 406, पूसा वैभव	उत्तरी पश्चिमी मैदानी व मध्य क्षेत्र उत्तर प्रदेश उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	छोटे दाने वाली : 35–40 कि.ग्रा./हे. बड़े दाने वाली : 50–60 कि.ग्रा./हे.	20–25 कुन्तल/हेक्टेयर

ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (एमओपी) प्रति हेक्टेयर देना चाहिए।

flapkbZ% आवश्यकतानुसार 2–3 हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

Qly lqj{kk

¼d½ [kjirokj fu;a=.k% प्रारम्भिक अवस्था में दो बार निकाई–गुड़ाई करने से खरपतवारों की रोकथाम हो जाती है।

¼[k½ jksx fu;U=.k% उकठा रोग की रोकथाम उचित फसल चक्र अपनाकर की जा सकती है। बीज को बोने से पहले 3 ग्राम थीरम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए।

¼x½ dhV fu;U=.k% पत्ती तथा फली खाने वाले कीड़ों से बचाव के लिए थायोडान (35 ई.सी.) या मोनोक्रोटोफॉस (100 ई.सी.) के 250–300 मि.ली. (1000 ली. पानी में घोल) प्रति हेक्टेयर पानी में प्रयोग करें।

vokNuh; ikS/kksa dk fudkyuk% भिन्न पौधों व खरपतवारों को दो बार (पुष्पण व परिपक्व अवस्था पर) निकालना चाहिए। लेकिन चटरी मटरी के पौधों को फसल पकने से पहले अवश्य निकाल देना चाहिए।

dVkbZ] xgkbZ vkfn% जब फलियाँ सूख जाएँ तो कटाई करके 2–3 दिन धूप में सुखाने के बाद गहाई की जाती है। बीज को अच्छी तरह सुखाकर (8–10 प्रतिशत नमी स्तर तक) भंडारित करें।

Hk.Mkj.k% किसान अपने घरों पर सूखे एवं ठण्डे कमरों में मिट्टी के कुठले में सूखे बीजों को कीटनाशक दवाओं के साथ डालकर अच्छी तरीके से उन्हें बन्द कर दें जिससे उनमें नमी न जा सके। इस क्रिया सें बीज अगले बुवाई सत्र तक सुरक्षित मिल जाते हैं।

fgUnh mu lHkh xq.kksa ls vyadr gS ftuds cy ij og fo'o dh lkfgfR;d Hkk"kkvksa dh vxyh Js.kh esa vklhu gks ldrh gSA

eSfFkyh'kj.k xqIr

पौधों के रोग, रोगजनक एवं पहचान की विधियाँ

ekfudk feJk] vkj-d- feJk] ubZemíhu] lnhi 'kek ,o d".k dekj

सामान्यतः हम एक पौधे को स्वस्थ उस समय तक ही कहते हैं, जब तक वह अपने समस्त सामान्य उपापचयी कार्यों को निरन्तर पूरा करता रहता है और अपनी क्षमता के अनुसार अनुमानित पैदावार देता रहता है। लेकिन जब एक पौधा इन क्रियाओं को करने में असमर्थ होता है जिससे उसमें कई भिन्न लक्षण उत्पन्न हो जाते है, परिणामस्वरूप वह अपनी ही जाति के अन्य दूसरे पौधों से भिन्न दिखाई देता है। इस स्थिति में पौधे को रोगी कहा जाता है। इस असामान्यतया (रोग) के कारण ही पौधा अस्वस्थ हो जाता है एवं उपज घट जाती है। अधिकांश रोगों द्वारा पौधे के रोगी अंग अथवा संपूर्ण पौधे की मृत्यु हो जाती है। पौधे की किसी एक अंग की क्रिया पर रोग का प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि रोगजनक ने सबसे पहले पौधे के किस भाग पर संक्रमण किया था। जड़ के ऊतकों में होने वाली रोगजनक अभिक्रियाओं अथवा विगलन द्वारा मृदा से जल एवं पोषक तत्वों के अवशोषण पर प्रभाव पड़ेगा। जिसके फलस्वरूप पौधों का वायवीय भाग भी प्रभावित होगा। पादप रोगों को उनके द्वारा उत्पन्न किए लक्षणों द्वारा अथवा पौध की बीमार अवस्था द्वारा पहचाना जाता है। रोग एवं उनके लक्षण की अलग–अलग अवस्थाएं होती हैं। वैज्ञानिकों की सोच एवं शोध के अनुसार पौधे एवं रोगजनक के बीच हुई पारम्परिक क्रियाओं के परिणाम को ही रोग कहते हैं।

पौधों में लगने वाले अनेक प्रकार के रोग एवं उनके कारकों का सही समय पर पहचान एवं उनका निदान करने से ही हम फसलों को स्वस्थ्य रख सकते हैं एवं उनका अच्छा उत्पादन ले सकते हैं। सदियों से ही पौधों में अनेक प्रकार के जैविक (कवक, जीवाणु, विषाणु, सूत्रकृमि, प्रोटोजोआ, माइकोप्लाज्मा आदि) एवं अजैविक (तापमान, विषैली वर्षा, वायु, पोषक पदार्थ असंतुलन, विषैले तत्व, जल प्राप्यता की चरम सीमायें आदि) कारकों द्वारा काफी क्षति होती है। फंफूदी, जीवाणु, विषाणु एवं सूत्रकृमि जैसे जैविक कारकों द्वारा दुनिया में विभिन्न फसलों में लगभग 20 से 25 प्रतिशत तक उत्पादन हानि होती है। इस नुकसान को कम करने के लिए फसलों में लगने वाले प्रमुख रोग, उनकी सटीक पहचान एवं उनकी रोकथाम अति आवश्यक है। पौधों में लगने वाले रोगों की सटीक पहचान प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष विधियों से की जाती है। बीमारियों के प्रत्यक्ष पहचान में आण्विक एवं सीरोलॉजिकल विधियाँ शमिल हैं जिनका उपयोग उच्च थ्रुपुट विश्लेषण के लिए किया जाता है। इन विधियों से बैक्टीरिया, कवक एवं वायरस जैसे रोगकारकों की सटीक पहचान की जाती है। दूसरी तरफ अप्रत्यक्ष तरीकों से विभिन्न मापदण्डों जैसे कि रोगजनकों के संरचनात्मक रूप, आकार, तापमान परिवर्तन, प्रत्यारोपण दर परिवर्तन एवं उनके संक्रमण करने के प्रकार के आधार पर की जाती है।

प्रयोगशाला आधारित विधियों जैसे कि *पालीमरेज चेन रिएक्शन (पी.सी.आर.), इम्यूनोफ्लोरेसंस (आई.एफ.), फ्लोरोसंस इन सिटू हाइब्रिडाइजेशन (एफ.आई.एच.स), एंजाइम लिन्किड इम्यूनोसार्वेन्ट एसेज (ई.एल.आई.एस.ए.)* एवं *गैस क्रोमेटोग्राफी मास स्पेक्ट्रोमेट्री (जी.सी.एम.एस.)*, कुछ प्रमुख प्रत्यक्ष पहचान विधियाँ हैं। इन सभी के अतिरिक्त, पौधों में बीमारियों की पहचान के लिए सबसे सरल एवं सटीक विधि है पौधों के लक्षणों के दृश्य मूल्यांकन द्वारा उनके सूक्ष्म अवलोकन करके पहचान करना। इनके अतिरिक्त अन्य विधियां हैं जिनका बिन्दुवार विवरण निम्नवत किया गया है :

ik/kk e jkx ,o jkxtud d igpku d rjhd

1- **Yk{k.kk d vk/kkj ij voyksdu** यह पौधों की प्रजातियों में लगने वाले विभिन्न रोगों एवं उनके रोगजनकों की पहचान की सबसे महत्वपूर्ण सरल एवं सटीक विधियों से एक है। क्योंकि पौधों में कुछ रोगजनकों का संक्रमण एक विशिष्ट प्रकार के लक्षण उत्पन्न करता है। जिन लक्षणों के आधार पर रोगजनकों का अनुमान लगाया जा सकता है। उदाहरण के तौर

पर पौधों में किट्ट रोग फंफूदी की कई प्रजातियों द्वारा होता है परन्तु सभी पौधों में इनके लक्षण लगभग एक समान ही होते हैं। जिससे लक्षण देखकर रोगजनक का अनुमान लग जाता है। इसी प्रकार पाउडरी मिल्ड्यू रोग भी पौधों में फंफूदी की विभिन्न प्रजातियों द्वारा होता है परन्तु लक्षण देखकर रोगकारक की व्यापक जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त, आल्टरनेरिया ब्लाइट रोग भी विभिन्न प्रजातियों द्वारा होता है। जोकि कवक के लक्षण के आधार पर ही पहचाने जाते हैं। इसी प्रकार पर्णकुंचन लक्षण से इसके रोगजनक का अनुमान भी विषाणु के रूप में किया जा सकता है।

2- **lhjkMk;XukfLVDl%** पौधों में विषाणुजनित रोगों के रोगकारक की सटीक पहचान हेतु सीरोडायग्नोस्टिक का उपयोग किया जाता है। इसका प्रयोग बागवानी आधारित फलीय पौधों जैसे पपीता, केला, आलू आदि के रोगरहित पौध बनाने में अधिक किया जाता है। सबसे ज्यादा इस्तेमाल की जाने वाली सीरोडायग्नोस्टिक विधि (अ) एलिसा *(एंजाइम लिन्किड इम्यूनोसारवेन्ट एसे)* है जिसे विषाणुजनित रोगों की पहचान के लिए विकसित किया गया था। इसके अंतर्गत प्रतिजनों या प्रतिरक्षियों के प्रतिक्रिया मापन की प्रक्रियाओं में से एक जिसमें किसी विशेष इम्यूनोग्लोबुलिन से सहबद्व एंजाइम की मात्रा का आमापन किया जाता है। बाद में इस विधि को पहचान परख की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार इसे दो स्तरों में विभाजित किया गया। प्रत्यक्ष एलिसा, जिसके अंतर्गत संयुग्मित एंटीबाडी–एंजाइम काम्पलेक्स सीधे एंटीजन से बांधता है दूसरी अप्रत्यक्ष एलिसा जिसके अंतर्गत एंटीजन सीधे एंटीबाडी से बंधे नही होते है। (ब) टिशू ब्लाट इम्यूनो ऐसे (टी.बी.आई.ए.): टी.बी.आई.ए. का सिद्धान्त एलिसा के समान है, जिस पर एंटीबाडी लागू होती हैं, टी.बी.आई.ए. ब्लाट वायरस का पता लगाने के लिए एलिसा के समान विश्वसनीय है। दोनों विधियों में प्रमुख अन्तर यह है कि पालीस्टीरिन प्लेट का उपयोग एलिसा के प्लेटफार्म के रूप में किया जाता है, जबकि टी.बी.आई.ए. नाइट्रोसेल्यूलोज और नायलॉन झिल्ली पर किया जाता है। यही कारण है कि इस जांच को टी.बी.आई.ए. या टी.आई.बी.ए. कहा जाता है।

एलिसा की तरह टी.बी.आई.ए. को अवास्तविक सकारात्मक से छुटकारा पाने के लिए एक विशिष्ट एंटीबांडी भी आवश्यक है और अवास्तविक नकारात्मक को कम करने के लिए बड़ी मात्रा में वायरस एकाग्रता की भी आवश्यकता हैं। चूंकि टी.बी.आई.ए. की पहचान समय, लागत, संवेदनशीलता और सुविधा के मामले में एलिसा से बेहतर है। इसलिए अनेक वायरसजनित बीमारियों के निदान के लिए लागू किया जाता है।

3 **FkekZxkQh%** थर्मोग्राफी विधि द्वारा पौधे की पत्तियों एवं कैनोपी की सतह के तापमान में अंतर को इमेजिंग की इजाजत देता है। उत्सर्जित अवरक्त विकिरण (इन्फ्रारेड) थर्मोग्राफिक कैमरे द्वारा पकड़ा जा सकता है और रंग परिवर्तन का विश्लेषण किया जा सकता है। पत्तियों के रन्ध्रों द्वारा पौधों में पानी का नुकसान अनेक प्रकार के रोगकारकों से प्रभावित हो रहे हैं। जोकि थर्मोग्राफिक

Yk{k.kks ds vk/kkj ij ikS/kks esa jksx dh igpku

इमेजिंग के माध्यम से निगरानी की जा सकती है।

4 **vkf.od fof/k%** इस विधि के अंतर्गत रोगजनक के आनुवांशिक तत्व (डी.एन.ए. / आर.एन.ए.) के आधार पर रोगजनक की पहचान की जाती है। इसमें पी.सी.आर. विधि अधिक उपयोग की जाने वाली तकनीक है। वर्तमान में पी.सी.आर. प्रयोगशाला में रोगकारकों की सटीक पहचान के लिए एक लोकप्रिय तकनीक है और इसका प्रयोग आमतौर पर आण्विक प्रयोगों में किया जाता है। पी.सी.आर. वास्तव में डी.एन.ए. संश्लेषण के सिद्धान्त पर आधारित है। जीवों में डी.एन.ए. का संश्लेषण कोशिकाओं के अन्दर विभिन्न अवयवों के माध्यम से होता है, परन्तु पी.सी.आर. विधि में इन प्रक्रियाओं को प्रयोगशाला में एक छोटी सी परखनली एवं मशीन (थर्मोसाइकलर) द्वारा कराया जाता है। पी.सी.आर. वर्तमान में सभी रोगजनकों के पहचान का आधार है। पी.सी.आर. प्राइमर्स की विशिष्टता से संसाधित करने में सक्षम है। पी.सी.आर. को तीन चरणों के माध्यम से आगे बढ़ाया जाता है, प्रथम 94 डिग्री सेन्टीग्रेड से ऊपर की गिरावट, द्वितीय 50 से 75 डिग्री सेन्टीग्रेड (प्राइमर्स पर निर्भर) पर प्राइमरों की एनीलिंग और तृतीय 72 डिग्री सेन्टीग्रेड पर विस्तार और न्यूक्लिक एसिड से युक्त विधियों में मुख्य रूप से डी.एन.ए. के सैद्वान्तिक न्यूक्लिक एसिड के रूप में शामिल किया जाता है। इसके अतिरिक्त, *फ्लोरोसेस इन सिटू हाइब्रिडाइजेशन (फिश)* और कई *पी.सी.आर. वेरिएंट (पी.सी.आर.) नेस्टेड पी.सी.आर. (एन.पी.सी.आर.)*, सहकारी *पी.सी.आर. मल्टीप्लेक्स पी.सी.आर. रीयल टाइम पी.सी.आर.* और *डी.एन.ए. फिंगर प्रिंटिग* हालांकि, इनके अलावा कुछ आर.एन.ए. आधारित विधियाँ जैसे *रिवर्स ट्रांसक्रिप्टस पी.सी.आर., न्यूक्लिक एसिड* अनुकक्रम आधारित प्रवर्धन और *एम्प्लीडेट आर.एन.ए.* भी पौधों के रोगजनक की पहचान के लिए उपयोगी है। ये सभी विधियां तेजी से और रोगजनक की सटीक पहचान के लिए सक्षम है।

¼v½ ***fjolZ VkalfØI'ku ih-lh-vkj- ¼vkj-Vh-&ih-lh-vkj-½%*** यह पौधों में होने वाले रोगजनकों में आर.एन.ए. वायरस का पता लगाने के लिए उपयोग किए जाने वाला आर.टी.–पी.सी.आर. को रिवर्स ट्रांसक्रिप्टस की आवश्यकता होती है जो नियमित पी.सी.आर. चरण से पहले रिवर्स ट्रांसक्रिप्टस के चरण में जोड़ा जाता है। आर.टी.–पी.सी.आर. तकनीक सीरोलॉजिकल विधियों की तुलना में संवेदनशील विशिष्ट और सस्ती के साथ–साथ अत्यधिक विश्वसनीय भी है। इस विधि को वायरसजनित रोगों का पता लगाने के लिए ज्यादा प्रयोग किया जाता है।

¼c½ **eYVhIysDl ih-lh-vkj-%** एक ही प्रतिक्रिया में मल्टीप्लेक्स पी.सी.आर. के माध्यम से एक ही समय में दो या दो से अधिक लक्ष्य डी.एन.ए. या आर.एन.ए. का पता लगाया जा सकता है। इस विधि में दो विशिष्ट वायरस या बैक्टीरिया का पता लगाने के लिए विशिष्ट प्राइमरों की आवश्यकता होती है। वैज्ञानिकों द्वारा किये गये अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि मन्टीप्लेक्स पी.सी.आर. रोगजनकों की पहचान एवं संवेदनशीलता में एलिसा से बेहतर विधि है। इस विधि से एक ही पौधे से कई प्रकार के वायरस रोगजनकों का पता लगाया जा चुका है।

¼l½ **uSLVM ih-lh-vkj-%** इस विधि का उपयोग उस समय किया जाता है जब पौधों में वायरस की मात्रा बहुत कम होता है तथा लक्ष्य जीन अस्थिर होता है। जिसके फलस्वरूप प्रवर्धित उत्पाद इलेक्ट्रोफोरोसिस के द्वारा जाँचा नहीं जा सकता। इसमें प्राथमिक पी.सी.आर. एम्पलीफिकेशन का उत्पाद दूसरे पी.सी.आर. एम्पलीफिकेशन के लिए उपयोग किया जाता है। पौधों में होने वाले कई वायरस जैसे *पी.एन.आर.एस.वी. (प्रूनस नेक्रोटिक रिंग स्पाट वायरस), एल.एम.वी. (लेटूस मोजैक वायरस)* आदि को इस विधि के द्वारा पहचाना गया है।

¼n½ **lgifjpkyu *ih-lh-vkj- ¼lg&ih-lh-vkj-½%*** यद्यपि सह परिचालन *पी.सी.आर.* एवं *नेस्टेड पी.सी.आर.* दोनों को टेट्रा प्राइमर सेट की आवश्यकता होती है। हालांकि सह परिचालन *पी.सी.आर.* को *नेस्टेड पी.सी.आर.* से जुड़े दो बाहरी और दो आंतरिक प्राइमरों की बजाय एक बाहरी और तीन आंतरिक प्राइमरों की आवश्यकता होती है। चूँकि सह परिचालन *पी.सी.आर.* में *नेस्टेड पी.सी.आर.* जैसे चार प्राइमरों का उपयोग किया जाता है, इसलिए इस तकनीक के कुछ लाभ भी है। जैसे कि प्रदूषण जोखिम को कम करना, *नेस्टेड पी.सी.आर.* के समान उच्च संवेदनशीलता, वास्तविक समय में पहचान और *डांट ब्लाट हाइब्रिडाइजेशन* के साथ युग्मन की क्षमता आदि शामिल है। इसके अलावा सह परिचालन

पी.सी.आर. में *नेस्टेड पी.सी.आर.* की तुलना में कम समय की आवश्यकता होती है। *चेरी लीथ्रोल वायरस (सी.एल.आर.वी.)* का पता लगाने में सह पी.सी.आर. की संवेदनशीलता *आर.टी. पी.सी.आर.* की तुलना में कम से कम 100 गुना अधिक है और यह *नेस्टेड पी.सी.आर.* के समान है। हांलाकि, यह ध्यान देने योग्य है कि *आर.टी. पी.सी.आर.* की तुलना में सभी सह *पी.सी.आर.* में उच्च संवेदनशीलता दिखाई नहीं देती।

5 ***vkblkFkeZy ,EIyhfQds'ku:*** आमतौर पर रोगजनकों की पहचान एवं निदान के लिए दिनों–दिन *पी.सी.आर.* के प्रकार का उपयोग बढ़ रहा है। पी.सी.आर. के पहले दौर को पूरा करने के लिए पी.सी.आर. को डबल स्ट्रेन्डेड डी.एन.ए. को लम्बित करने के लिए लिए प्राइमर एनीलिंग और डी.एन.ए. संश्लेषण के विस्तार के लिए 3 अलग–अलग तापमानों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार इस विधि में मंहगें उपकरणों की आवश्यकता होती है जो तापमान को ठीक से नियंत्रित कर सकते हैं। पालीमरेज जो कि स्थिर तापमान पर डी.एन.ए. को प्रवर्धित कर सकता है, की खोज की गई। इसे *आइसोथर्मल पी.सी.आर.* कहा जाता है। आजकल अनेक *आइसोथर्मल पी.सी.आर.* मौजूद हैं लेकिन यहाँ *न्यूक्लिक एसिड* अनुक्रम आधारित प्रवर्धन *(एन.ए.एस.वी.ए.)* और लूप मध्यस्थ *आइसोथर्मल एम्पलीफिकेशन (एल.ए.एम.पी.)* का प्रयोग ज्यादा किया जाता है। *एन.ए.एस.वी.ए.* एक प्राइमर निर्भर निरंतर प्रवर्धन विधि है। जिसका उपयोग पी.सी.आर. द्वारा *रिवर्स ट्रांसक्रिप्टस* का उपयोग करके आर.एन.ए. के प्रत्यक्ष प्रवर्धन के लिए किया गया है। जबकि एल.ए.एम.पी. में सामान्यतः चार भिन्न *ओलिगोन्यूक्लियोटाइड प्राइमरों* के एक सेट का उपयोग करके जीनोमिक डी.एन.ए. के विशिष्ट *आन–साइट डिटेक्शन* विधि के लिए एक सरल, कम लागत वाला प्रभावी और तेज विधि है।

¼v½ ¶yksjlsal bu flVw gkbfczMkbts'ku ¼,Q-vkb-,l-,p-½ यह भी रोगजनकों की पहचान करने की अन्य तकनीक है, जो *माइक्रोस्कोपी* और *डी.एन.ए.* जांच के संकरण और पौधो के नमूनों से लक्षित जीन के संयोजन में जीवाणु का पता लगाने के लिए किया जाता है। पौधों में रोगजनक विशिष्ट *राइबोसोमल आर.एन.ए. (आर.आर.एन.ए.)* अनुक्रमों की उपस्थिति के कारण इस विधि द्वारा इस विशिष्ट जानकारी को पहचानने एवं संक्रमण का पता लगाने में मदद मिलती है। इस तकनीक का उपयोग पौधों में लगने वाले विभिन्न जीवाणु रोगजनकों के अलावा, रोगजनक फंफूदी एवं विषाणुओं का भी पता लगाने के लिए किया जा सकता है।

6 ***bE;wuks¶yksjlsal ¼vkb-,Q-½*** यह एक *फ्लोरेसेंस माइक्रोस्कोपी* आधारित *ऑप्टिकल* तकनीक है जो *माइक्रोबायोलॉजिकल* नमूनों के विश्लेषण के लिए उपयोग में लाया जाता है। पौधों के ऊतकों में रोगजनकों के संक्रमण का पता लगाने के लिए इस तकनीक का उपयोग किया जाता है। इस विधि के लिए सबसे पहले पौधे के ऊतक खण्डों में सूक्ष्मदर्शी स्लाइड के लिए पौधे के नमूने इकट्ठा किए जाते है। नमूना के दौरान लक्ष्य अणु के वितरण को देखने के लिए विशिष्ट एंटीबांडी में *फ्लोरोंसेंट डाई* को संयोजित करके जांच की जाती है। यह विधि पौधों में उकठा, जड़गलन, तना गलन एवं अन्य रोगों के संक्रमण की पहचान करने में किया जाता है।

7 ***ck;klslj*** *बायोसेंसर* तकनीक का प्रयोग पौधों में रोगजनकों की पहचान के लिए पिछले दो दशकों से सेंसर प्रौद्योगिकी के अंतर्गत किया जा रहा है। जैसा की नाम से ही पता चलता है कि *बायोसेंसर* संकेत संग्रह और पैटर्न पहचान *सॉफ्टवेयर* उपकरणों की एक सारणी के साथ *सिग्नल ट्रांसडयूसर* के निकट जैविक संवेदन तत्वों का उपयोग करते हैं। यहाँ *एंटीबाडी* और *डी.एन.ए. रिसेप्टर्स* दोनों के आधार पर पौधों में रोगजनकों के पहचान के लिए फायदेमंद *बायोसेन्सिंग सिस्टम* के विकास में काफी काम हो रहा है। पौधों में रोगजनकों की पहचान के लिए विभिन्न *नैनोमैटीरियल्स* एवं *नैनो* कणों को मिलाकर प्रभावी एवं *इनोवेटिव बायोसेन्सिग सिस्टम* के विकास पर काम किया जा रहा है।

इस लेख के अंतर्गत पौधों में लगने वाले विभिन्न प्रकार के रोगजनकों (कवक, बैक्टीरिया, वायरस, सूत्रकृमि) का पता लगाने के लिए अनेक प्रकार की विधियाँ वर्तमान में मौजूद हैं। इन सभी विधियों के अलग–अलग फायदे एवं इनकी सीमाएं हैं। हालांकि *पी.सी.आर., फिश, एलिसा, आई.एफ, एफ.सी.म* जैसी स्थापित विधियाँ पहले से ही उपलब्ध हैं और पौधों की बीमारी का पता लगाने के लिए व्यापक रूप से उपयोग की

जाती हैं वे अपेक्षाकृत कठिन भी हैं एवं उनको प्रयोग करने के लिए विशेष तकनीक की जानकारी भी चाहिए। इसके साथ–साथ संसाधनों की भी जरूरत पड़ती है। इसके अतिरिक्त, इनमें से अधिकतर विधियाँ *रियल टाइम डिटेक्शन* प्रदान नहीं कर सकती जिस कारण यह *आन फील्ड* परीक्षण और प्रारम्भिक चेतावनी प्रणाली के लिए कम उपयुक्त मानी जाती हैं। दूसरी तरफ, *इमेजिंग* तकनीक जैसे *थर्मोग्राफी* और *फ्लोरोसेंस इमेजिंग* का पादप रोग की पहचान के लिए इस्तेमाल किया जाता है। परन्तु इन विधियों का पर्यावरण परिवर्तन के प्रति अतिसंवेदनशील होना इनकी उपयोगिता को सीमित करता है। इनके अतिरिक्त, रोगजनकों की निदान एवं पहचान के लिए पादप रोग विज्ञान के क्षेत्र में अनेक प्रगति हुई है। जैव प्रौद्योगिकी, जैव सूचना विज्ञान एवं आण्विक जीव विज्ञान के साथ–साथ इनके निदान की विशिष्ट एवं संवेदनशील प्रक्रियाओं के विकास के लिए नये रास्ते खोले हैं। *पी.सी.आर.* जैसे आण्विक तरीकों, मात्रात्मक *पी.सी.आर.*, *सीरोलॉजिकल* विधियाँ के साथ–साथ अन्य परम्परागत विधियाँ भी शामिल हैं। इन सभी विधियों में विशिष्टता एवं उच्च संवेदनशीलता है एवं कम समय लेने वाले हैं। लेकिन इन सभी के साथ–साथ यह भी आवश्यक है कि विशिष्टता और संवेदनशीलता की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इन विधियों को मानकीकृत किया जाना चाहिए। इसके अलावा, संगणनात्मक उद्देश्यों के लिए मानक प्रोटोकाल के रूप में विधि की वैश्विक स्वीकृत के लिए मानकीकृत प्रोटोकाल की भी आवश्यकता है।

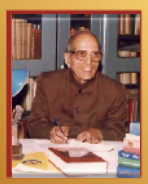

fgnh tkuu okyk 0;fDr n'k dk fdlh Hkh dku ea tkdj viuk dke pyk yrk gA

noor 'kkL=h

जैविक खेती के लिए वरदान फार्म एवं केंचुआ खाद

jfoUnz flag] i{"iUnz dekj] jkt's'k dekj] pUnef.k f=ikBh ,o lUnhi dekj

प्रकृति में मिट्टी सबसे महत्वपूर्ण नवीकरण योग्य प्राकृतिक संसाधन है। यह एक ऐसी संपदा है जिसके ऊपर प्रत्येक जीवधारी की आत्मा, कल्याण एवं सभी प्रकार की आवश्यताएं पूर्णरूप से निर्भर हैं। यह विविध प्रकार की वनस्पतियों के विकास का माध्यम है जो पृथ्वी पर पाये जाने वाले प्रत्येक जीवधारी के पोषण का माध्यम है। मृदा एक जीवंत तंत्र है, कुछ सेंटीमीटर गहरी मृदा बनाने में लाखों वर्ष लग जाते हैं। मृदा बनने की प्रक्रिया में उच्चावच, जनक शैल, जलवायु, विविध वनस्पतियों तथा अन्य जैव पदार्थ और समय मुख्य कारक हैं। प्रकृति अनेक तत्वों जैसे–तापमान परिवर्तन, बहते जल की क्रिया, पवन हिमनद और अपघटन क्रियाएं इत्यादि मृदा बनने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

प्राचीनकाल में मानव स्वास्थ्य के अनुकूल तथा वातावरण के अनुरूप खेती का संचालन होता था, जिससे जैविक तथा अजैविक पदार्थों के बीच आदान–प्रदान का चक्र निरन्तर चलता रहता था, जिसके परिणामस्वरूप जल, भूमि, वायु, तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता था। परन्तु जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि होने के साथ ही हमारी खाद्य आवश्यकताओं में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है एवं कृषि योग्य भूमि सीमित होने कारण मृदा पर दबाव दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है तथा जैव–विविधिता में गिरावट आने के कारण उपलब्ध भूमि में रोगरहित तथा सीमित संसाधनों से प्राकृतिक कृषि (शून्य बजट खेती) उत्पादन बढ़ाने के लिए जैविक खेती को एक बेहतर विकल्प चुनना अति आवश्यक हो गया है। एक अनुमान के मुताबिक सन् 2025 तक निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्य आपूर्ति के लिए 3000 लाख टन खाद्यान्न आवश्यकता होगी।

tfod [krh% ifjp;

जैविक खेती एक प्राचीन टिकाऊ कृषि पद्धति है, जो भूमि के प्राकृतिक स्वरूप को बनाए रखती है, मिट्टी की जलधारण क्षमता को बढ़ाती है इसमें रसायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों का प्रयोग कम होता है एवं कम लागत में गुणवत्तापूर्ण पैदावार होती है। खेती में रसायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशकों के बजाय गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, केंचुए की खाद, हरी खाद तथा जैविक कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है। हरित क्रान्ति के आगमन से पूर्व कृषक जैविक पद्धति से ही खेती करते थे। हमारे देश में कई आदिवासी समुदाय के लोग अभी भी झूम खेती की प्रणाली अपनाते हैं जो कि जैविक खेती की ही एक अंग है।

orleku le; e tfod [krh ,d cgrj fodYi D;k \

पिछले कई वर्षों से हम देखते आ रहे हैं कि रसायनों और कीटनाशकों से खेती में लगातार नुकसान हो रहा है, लागत बढ़ रही है, भूमि अपना प्राकृतिक स्वरूप खोती जा रही है एवं पर्यावरण दूषित होने के साथ ही मनुष्य के स्वास्थ्य में दिन–प्रतिदिन गिरावट आती है। कृषक भाई ये अनुभव कर सकते हैं कि वे अपनी उपज का बहुत बड़ा हिस्सा उर्वरकों एवं कीटनाशकों में लगा देता है। यदि किसान को चाहिए कि वो खेती में अधिक से अधिक मुनाफा कमाए तो उसे जैविक खेती को एक बेहतर विकल्प के रूप में चुनना ही पड़ेगा। जैविक खेती का मूल उद्देश्य तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या को मद्देनजर रखते हुए, मृदा संरक्षण की प्रक्रिया अपनाते हुए जैविक तरीकों से कीट व रोगों पर अंकुश लगाते हुए फसलों के उत्पादन को बढ़ाना है ताकि लोगों को स्वस्थ कृषि उत्पाद आसानी से उपलब्ध हो सकें। साथ ही कृषि प्रक्रियाओं में पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों की क्षति कम से कम हो।

tfod [krh l gku okyk Qk;n

1. जैविक खेती के उपयोग से मृदा की गुणवत्ता में सुधार होता है। रसायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशियों के अंधाधुध उपयोग से भूमि बंजरपन की ओर बढ़ती जा रही है। अतः जैविक खादों के बेहतर प्रयोग से मृदा में उन पोषक तत्वों की कमी को पूरा किया जा सकता है

जो मृदा में न्यूनतम या अल्प मात्रा में उपस्थित हैं, इसके साथ–साथ मृदा की गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

2. रसायनिक उर्वरकों के लगातार एवं अंधाधुन्ध इस्तेमाल से मृदा में उपस्थित लाभदायक जीवाणु नष्ट हो रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप फसलों की उत्पादकता कम हो जा रही है। जैविक खादों का सही उपयोग कर मृदा उत्पादकता को पुनः प्राप्त किया जा सकता है।

3. जैविक खेती के सही तथा उचित दशा में अपनाने से मृदा की जलधारण क्षमता में आशातीत वृद्धि होती है। चूँकि रसायनिक उर्वरक मृदा में उपस्थित जल को जल्दी सोख लेते हैं, जबकि जैविक खादें, मृदा के ऊपरी सतह में नमी को बनाये रखने में मदद करती है, जिससे मृदा की जलधारण क्षमता बढ़ती है।

4. रसायनिक उर्वरक तथा कीटनाशकों की कीमतें अधिक होने के कारण, किसानों की खेती की लागत अधिक आती है। जबकि जैविक खाद बहुत ही सस्ते तथा वाजिब दामों में आसानी से तैयार हो जाती है।

5. जैविक कृषि अपनाने से पर्यावरण प्रदूषण में कमी आती है। जबकि रसायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशियों के निरन्तर तथा बहुतायत में उपयोग से पर्यावरण संतुलन दिन–प्रतिदिन बिगड़ता चला जा रहा है जिससे वहाँ पाई जाने वाली विविध वनस्पतियाँ, जानवर एवं पशु–पक्षी मरने लगते हैं। जैविक खादों के बेहतर उपयोग से वातावरण का शुद्धीकरण होता है।

6. जैविक खेती से प्राप्त उत्पाद स्वास्थ्य की दृष्टि से अति लाभवर्द्धक तथा पोषक तत्वों एवं खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाये जाते है तथा इनके इस्तेमाल से कई रोगों से बचाव होता है।

Qke! dh [kkn ¼,Q-okb-,e-½&cuku! dh ,o mi;kx dju! dh fof/k

यह मुख्यतः मवेशियों के गोबर (मल–मूत्र), घरेलू कूड़े, करकट, अपशिष्ट पुलाव एवं अन्य डेयरी कचरे का उपयोग करके तैयार किया जाता है। इसमें विभिन्न पोषक तत्वों जैसे नाइट्रोजन –0.32 से 0.50, फास्फोरस 0.10 से 0.25 तथा पोटाश 0.25 से 0.50 प्रतिशत मात्रा में पाये जाते है। इसमें सभी पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं तथा इसका उपयोग मिट्टी की उर्वता शक्ति में सुधार लाता है तथा जिन पदार्थों से खाद तैयार होती है वो सभी किसान भाईयों के यहाँ आसानी से उपलब्ध है।

किसान भाई अपने खेत में फार्म खाद बड़ी आसानी से तैयार कर सकते है। इसके लिए सर्वप्रथम 0.90 मीटर गहरा, 2.4 मीटर चौड़ा तथा अपने मिश्रित पदार्थों के अनुपात में 5 मीटर तक लम्बा एक गढ्ढा बना लें। तत्पश्चात मवेशियों के गोबर, मल–मूत्र तथा अन्य पदार्थों के मिश्रण को समान रूप से गढ्ढे में फैला दें। गोबर को गढ्ढे में डालते समय यह सुनिश्चित कर लें कि गोबर का मिश्रण गीला है यदि नहीं तो उसें आवश्यकतानुसार पानी डाल दें। अब गोबर तथा अन्य मिश्रित पदार्थों को मिलाकर समतल करा लें तथा इसके ऊपर 30 सेंटीमीटर की मोटी परत बिछा दें। अब दूसर घास–फूस या मिट्टी की परत बनाकर छोड़ दें ताकि धूप या वर्षा का पानी गढ्ढे में प्रवेश न करने पाये, इसके बाद इसे कुछ समय के लिए छोड़ दें। अनुमानतः 6 महीने बाद फार्म खाद खेत में उपयोग करने के लिए पूर्णतः तैयार हो जायेगी।

आंशिक रूप से सड़ी हुई खाद को आमतौर पर खेत में उचित नमी की दशा में फसल की बुवाई के 3 से 4 सप्ताह पहले खेत में डाल देना चाहिए। यदि इसे किसान बहुत पहले खेत में डालते हैं तो बारिश या अन्य कारणों से इसके पोषक तत्व नष्ट हो सकते हैं। इसलिए उचित समय पर खेत में डालकर खेत की मिट्टी में खाद को अच्छी तरह से मिला दें ताकि खाद में उपस्थित सभी पोषक तत्व खेत की पूरी मिट्टी में आसानी से मिल जायें ताकि सभी पौधों को उपस्थित पोषक आसानी से मिल सकें।

dspq, dh [kkn यह पोषक तत्वों से भरपूर एक उत्तम जैव उर्वरक है जो जैविक उपशिष्ट पदार्थों को केंचुए द्वारा विघटित करके बनाई जाती है।

केंचुआ खाद जैविक खाद के लिए सबसे पसंदीदा पोषक स्त्रोत है। यह फसल तथा पर्यावरण के अनुकूल पुनर्नवीकरण जैविक उत्पाद है। केंचुआ खाद बनाने के लिए आप बेड़ या गढ्ढा दोनों से किसी एक को वैकल्पिक तौर पर चुन सकते हैं जो कि जमीन के स्तर से 2 या 3 फीट गहरा होना चाहिए तथा गढ्ढे की लम्बाई व चौड़ाई अपने मिश्रित कचरे के अनुसार रख सकते हैं। तत्पश्चात नीचे 5 सेंटीमीटर मोटी रेत की एक समतल परत बना देते हैं जिसे पानी से अच्छी तरह गीला कर लें। गढ्ढे को तेज धूप तथा बारिश से बचाने के लिए घास–फूस की एक छत बना दें। अब इस रेत

की परत पर आसानी से सड़ने वाले पदार्थ (पत्ते या फसलों के अवशेष) की 2 से 5 इंच मोटी परत बना देनी चाहिए। इसमें किसी अच्छी किस्म के केंचुए जैसे *आइसीनिया फोटिडा* अथवा *यूडिलस यूजिनी* के 500–1000 वयस्कों को गढ़्ढे में डाल दें एवं फिर से पत्ते या फसल के अवशेषों की 7 से 9 इंच मोटी परत बनायें।

अब इसको समतल करके 2 से 3 इंच गोबर खाद की परत बना दें तथा गोबर की परत पर आवश्यकतानुसार पानी छिड़कते रहें, नहीं तो हवा अवरूद्ध हो जायेगी तथा केंचुए मर सकते हैं तथा बेड या गढ्ढे के तापमान पर विशेष ध्यान रखें जिसका तापमान 25–30^{0} से. के बीच होना चाहिए तथा गढ्ढे के कचरे को 7–10 दिनों के अन्तराल पर पलटते रहना चाहिए एवं ठोस कचरे को हाथ से तोड़ देना चहिए। एक महीने बाद कचरे के गढ्ढे में आपको केंचुए नजर आने लगेंगे। अब खाद की मात्रा आवश्यकतानुसार बढ़ाने के लिए आप ऊपर–नीचे करते रहें। डेढ़ से दो महीने में खाद पूरी तरह खेत में उपयोग करने के लिए तैयार हो जाती है तथा इसमें मिट्टी जैसी सौंधी गंध आती है। खाद निकलते समय छोटे–छोटे ढ़ेर बना दें ताकि केंचुए निकल जाए। फार्म खाद की तरह ही केंचुआ खाद को मिट्टी में मिलाया जाता है। केंचुए खाद की केवल 2 टन मात्रा प्रति हेक्टेयर भूमि के हिसाब से पर्याप्त होती है।

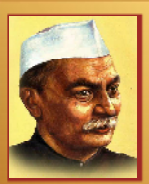

ftl n'k dk viuh Hkk"kk vkj viu lkfgR; dk xkjo dk vuHko ugh g] og mUur ugh gk ldrkA

Mk- jktUn iIkn

भूमि सुधार में हरी खाद का महत्व

Vh-,u- frokjh ,oa y[ku oekZ

किसान भाई अपने खेतों में सीमित संसाधनों के समुचित उपयोग द्वारा अधिक उत्पादन के लिए बड़ी मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करते हैं ? जिससे उनकी उत्पादन लागत बढ़ने के साथ–साथ पर्यावरण प्रदूषण भी बढ़ता जा रहा है। फलस्वरूप फसल उत्पादन में कमी आ रही है। सघन कृषि पद्धति के विकास एवं नकदी फसलों के क्षेत्रफल में बढ़ोत्तरी के कारण, हरी खाद के प्रयोग में वर्तमान समय में भारी कमी आई है लेकिन आजकल बढ़ते ऊर्जा संकट, उर्वरकों के मूल्यों में भारी वृद्धि तथा कार्बनिक खादों (गोबर की खाद, कम्पोस्ट आदि) की सीमित आपूर्ति से आज हरी खाद का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है। यदि किसान भाई अपने खेतों में हरी खाद का प्रयोग करते हैं तो उनके उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ पर्यावरण का भी संरक्षण होता है तथा उत्पादन लागत भी कम होगी। उर्वरकों द्वारा मृदा को सिर्फ आवश्यक पोषक तत्व जैसे– नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश सूक्ष्म तत्व इत्यादि की पूर्ति तो होती है लेकिन मृदा संरचना में उसकी जल धारण क्षमता एवं उसमें उपस्थित सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता बढ़ाने में रसायनिक उर्वरकों का कोई योगदान नहीं होता है। अतः इन सबकी पूर्ति हेतु हरी खाद का प्रयोग खेत के लिए एक संजीवनी बूटी की तरह काम करता है। हरी खाद की फसल उस फसल को कहते हैं जिसकी खेती मुख्यतः भूमि में पोषक तत्वों को बढ़ाने के साथ–साथ उसमें जैविक पदार्थों की पूर्ति करने के उद्देश्य से की जाती है। इसके लिए प्रायः दलहनी एवं गैर दलहनी फसलों को उनकी हरी अवस्था में मिट्टी में मिला दिया जाता है इस क्रिया को हरी खाद देना कहते हैं। इससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ने के साथ–साथ जीवाणुओं की मात्रा एवं क्रियाशीलता में भी बढ़ोत्तरी होती है क्योंकि बहुत सी रासायनिक क्रियायें जो सूक्ष्मजीवों के लिए आवश्यक होती हैं हरी खाद से उनकी बढ़ोत्तरी होती है।

gjh [kkn d fy, Qly dk p;u हरी खाद के लिए मुख्यतयः दलहनी फसलें ही अधिक लाभदायक होती हैं। हरी खाद में प्रयुक्त होने वाली फसलों में निम्न विशेषताएं होनी चाहिए :

1. कम समय में अधिक वानस्पतिक वृद्धि हो।
2. फसलों की वानस्पतिक भाग मुलायम एवं बिना रेशे वाला हो ताकि जल्दी से मिट्टी में मिल जाए।
3. फसलों की जड़ों में अधिक ग्रन्थियाँ हों ताकि वायु की नाइट्रोजन को अधिक मात्रा में स्थिरीकरण कर सकें।
4. फसल की जल मांग बहुत कम हो।
5. जलवायु की विभिन्न परिस्थितियों जैसे अधिक तापमान, कम तापमान, कम या अधिक वर्षा को सहन करने वाली हों।
6. कीटों व रोगों से प्रभावित न हों।
7. विभिन्न प्रकार की मृदाओं (क्षारीय, लवणीय) में अच्छी बढ़वार हो।
8. फसल की जड़ें अधिक गहराई तक पहुँचें तथा वानस्पतिक वृद्धि, शाखाएं व पत्तियां मुलायम हो।
9. कम समय में मृदा में विघटित हो।
10. पोषक तत्वों की मांग कम हो।

gjh [kkn d ykHk

1. हरी खाद नत्रजन व कार्बनिक पदार्थों के साथ–साथ मिट्टी में कई पोषक तत्व भी उपलब्ध कराती हैं।
2. हरी खाद के प्रयोग से मृदा में वायु संचार, जल धारण क्षमता में वृद्धि, सूक्ष्मजीवों की संख्या एवं क्रियाशीलता में वृद्धि के साथ–साथ उसकी उर्वरा शक्ति एवं उत्पादन क्षमता में भी बढ़ोत्तरी होती हैं।
3. क्षारीय व लवणीय मृदाओं में भी सुधार होता है क्योंकि हरी खाद की जड़ों का चुभान 3–5 इंच तक होता है (जैसे–ढैंचा)।
4. मृदा में पोषक तत्वों का संरक्षण एवं एकत्रीकरण कर मृदा की अधोसतह में सुधार करती हैं।
5. नत्रजन का स्थिरीकरण एवं मृदाक्षरण में कमी
6. खरपतवार नियंत्रण
7. फसलों के उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कम करके धन की बचत कर

टिकाऊ खेती कर सकते हैं।

हरी खाद से नत्रजन व कार्बनिक पदार्थों के अलावा कई पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं। एक अध्ययन के अनुसार एक टन ढैंचा के शुष्क पदार्थ द्वारा मृदा में निम्न पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं :

ik"kd rRo	Ekk=k ¼fd-xk-@gs-½
नत्रजन	26.2
स्फुर	7.3
पोटाश	17.8
गंधक	1.9
कैल्शियम	1.4
मैग्नीशियम	1.6
जस्ता	25 पी.पी.एम.
लोहा	105 पी.पी.एम.
तांबा	7 पी.पी.एम.

gjh [kkn mxkus dh fof/k

सिंचित अवस्थाओं में मानसून आने के 35–45 दिन पूर्व या असिंचित अवस्था में मानसून आने के तुरंत बाद खेत की हल्की जुताई करके हरी खाद की फसल बोना चाहिए। हरी खाद बोने के समय 15–20 कि.ग्रा. नत्रजन तथा 40–50 कि. ग्रा./हे. फास्फोरस देना चाहिए। हरी खाद के लिए फसल की बुवाई करते समय खेत में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है। यदि बरसात न हो तो 15 दिन के अन्तराल पर एक या दो सिंचाई कर देनी चाहिए जिससे फसल की बढ़वार अच्छी हो तथा फसल के वानस्पतिक भाग मुलायम हों। फसल को खेत में मिलाते समय यह ध्यान रखें कि फसल कुछ अपरिपक्व अवस्था में हो तथा फूल निकलना प्रारम्भ हो गये हों। इस अवस्था में वानस्पतिक वृद्धि अधिक होती है तथा पौधों की शाखायें व पत्तियां मुलायम होती हैं व फसल का कार्बन नाइट्रोजन अनुपात भी कम होता है। सनई की फसल में 50–55 दिन बाद एवं ढैंचा की फसल में 45 दिन बाद यह अवस्था आती है।

फसल को पलटने के लिए मिट्टी पलटने वाले हल या रोटावेटर से पलटकर फसल को मृदा में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिए। इसके बाद खेत में 5–10 दिन तक 4–5 से.मी. पानी भरा रहना चाहिए जिससे पौधों का अपघटन तेजी से हो।

gjh [kkn dh xq.koÙkk c<+kus ds mik;

1- **mi;qDr Qly dk p;u%** जलवायु एवं मृदा की दशा के अनुसार फसल का चयन करना आवश्यक है। जलमग्न तथा क्षारीय एवं लवणीय मृदाओं में ढैंचा तथा सामान्य मृदाओं में सनई व ढैंचा दोनों फसलों से अच्छी हरी खाद प्राप्त की जा सकती है।

2- **lefpr moZjd iczU/ku%** कम उर्वरता वाली मृदाओं में नत्रजन उर्वरकों का 15–20 कि.ग्रा. एवं फास्फोरस 40–50 कि.ग्रा./हे. प्रयोग कर अच्छी हरी खाद प्राप्त की जा सकती है।

3- **gjh [kkn dks [ksr esa iyVus dk mi;qDr le;%** अधिक व गुणवत्तायुक्त हरी खाद प्राप्त करने के लिए फसल की पलटाई या जुताई, बुवाई के 40–50 दिन के भीतर कर देनी चाहिए इससे अधिक अवस्था पर पौधों की शाखाओं में रेशे की मात्रा बढ़ जाती है फलस्वरूप जैविक पदार्थों के अपघटन में अधिक समय लगता है।

4- **gjh [kkn ds i;kZx ds ckn vxyh Qly dh cqokbZ ;k jksikbZ dk le;%** हरी खाद को खेत में पलटने के 15–20 दिन बाद खेत में अगली फसल की बुवाई करनी चाहिए जिन क्षेत्रों में धान की फसल बोई या रोपी जाती है वहां जलवायु नम तथा तापमान अधिक होने से अपघटन क्रिया तेज होती है अतः खेत में हरी खाद की फसल 40–45 दिन से अधिक की नहीं होनी चाहिए।

gjh [kkn ds fy, e[; Qlysa ,oa mudh mRiknu {kerk

Qly	cqokbZ dk le;	cht nj ¼fd-xk-@gs-½	gjs inkFkZ dh ek=k ¼Vu@gs-½	u=tu dk izfr'kr	lw[kk ds izfr	tyØkfr ds izfr	izkIr u=tu ¼fd-xk-@gs-½
ढैंचा	अप्रैल–मई	70–80	20–25	0.42	सहनशील	सहनशील	80–100
सनई	अप्रैल–मई	80–100	20–30	0.43	सहनशील	संवेदनशील	80–120
लोबिया	अप्रैल–जुलाई	45–50	10–15	0.48	संवेदनशील	संवेदनशील	70–80
ग्वार	अप्रैल–जुलाई	30–35	8–10	0.35	अत्यधिक संवेदनशील	संवेदनशील	60–80
मूंग	मार्च–अप्रैल	20–25	8–10	0.48	सहनशील	संवेदनशील	40–50

कीटों द्वारा *बैसिलस थ्यूरिंजिएन्सिस* के विषाक्त पदार्थों के प्रति प्रतिरोध का प्रबंधन

l|t ;kuUn th-d- lkfudk ik.M; ,o jhrk dfV;kj

कीटों को नियंत्रित करने की इच्छा मनुष्य में उसके अस्तित्व के समय से है। कीट मनुष्यों को मुख्यतः काटकर और रास्ते में आकर परेशान करते हैं। हलांकि कीटों को नियंत्रित करने की आवश्यकता क्रमशः दो बिन्दुओं पर आधारित है—पहला यह कि कीट मनुष्यों में कई गम्भीर बीमारियों जैसे—मलेरिया, दिमागी बुखार, आदि को फैलाते हैं, और दूसरा यह की कीट फसलों को अत्याधिक हानि पहुँचाते हैं। जैसे—जैसे आबादी बढ़ रही है, कीटों को खाद्य फसलों को नष्ट करने से बचाने की आवश्यकता और भी जरुरी हो रही है। वर्तमान में कीट मानव उपयोग के लिए लक्षित फसलों में लगभग एक लाख अमेरिकन डालर का नुकसान करते हैं।

कीट नियंत्रण पर मानव प्रयास प्राकृतिक तरीकों से कृत्रिम रासायनिक तरीकों पर समय के साथ बदल गये हैं, और अब हम पुनः नये प्राकृतिक तरीकों की तलाश कर रहे हैं। आज के समय में उपस्थित कृत्रिम कीटनाशक पुराने समय में उपस्थित कीटनाशकों की तुलना में अधिक सुरक्षित और प्रभावकारी हैं। आधुनिक कीटनाशकों का दीर्घकालिक उपयोग मनुष्यों में कैंसर, यकृत की क्षति, इम्यूनोटोक्सिटी, जन्म दोष और मनुष्यों और जानवरों में प्रजनन सम्बन्धी समस्याओं को उत्पन्न करता है (केगली अइौर बाइज)। इन्हीं कारणों से कीट नियंत्रण के लिए प्राकृतिक तरीकों का उपयोग ज्यादा प्रचलन में हैं।

cfly l F;fjft,fUl l dk lf{kIr bfrgkl

chVh D;k gS सबसे प्रसि़द्ध और व्यापक रूप से उपयोग किया जाने वाला जैविक कीटनाशक *बैसिलस थ्यूरिंजिएन्सिस* है। यह एक जीवाणु है जो स्पोरुलेशन के दौरान कीटनाशक प्रोटीन उत्पन्न करता है। यह जीवाणु मुख्यतः मिट्टी में पाया जाता है, जिसे इश्वाटा द्वारा 1901 में जापान में खोजा गया था और दुबारा 1911 में बर्लिन द्वारा जर्मनी में। *बैसिलस थ्यूरिंजिएन्सिस* की हजारों प्रजातियां पायी जाती हैं (लेरेक्लूस)। प्रत्येक बीटी की कीटनाशक एक बीटी भिन्न होती हैं। प्रत्येक उपभेद स्वयं की एक अनोखी कीटनाशक क्रिस्टल प्रोटीन अथवा डेल्टा एण्टोक्सीन उत्पन्न करता है, जिसका उत्पादन प्लासमिड पर एक जीन द्वारा नियंत्रित होता है (व्हानलॉन और मैकगाँधी, 1998)। बीटी का डेल्टा एण्डोटाक्सीन विभिन्न प्रकार के वर्गो के कीटों जैसे—लैपिडोप्टेरा, कोलियोप्टेरा और डिप्टीरिया को प्रभावित करता है (मोल्ड और कीटोन 1996)। बीटी डेल्टा एण्डोटोक्सीन की विषाक्तता प्रचलित ओरगेनोफोस्फट कीटनाशकों से अधिक होती है। ओरगेनोफोस्फट आधारित कीटनाशकों से भिन्न बीटी डेल्टा एण्डोटाक्सीन लक्ष्य आधारित होते हैं और यह मनुष्यों और जानवरों के लिए एकदम सुरक्षित होते हैं। बीटी आधारित कीटनाशक जैव आवक्रमणीय होते हैं और पर्यावरण में नहीं ठहरते हैं (फैकहेन जेन, 1993)।

बीटी आधारित कीटनाशक वाणिज्यिक रूप से 1938 में फ्रान्स में प्रथम बार उपयोग किये गये थे। 1950 के दशक में बीटी ने संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रवेश किया। प्रारम्भ में बीटी का उपयोग मुख्यतः फसलों पर छिड़काव के रूप में होता है। कीटनाशक के क्षणिक व्यवहार के कारण इसके वार्षिक उपयोग के दौरान इसका कई बार छिड़काव करना पड़ता है। 1950 के दशक में बीटी आधारित कीटनाशकों का उपयोग तीव्र गति से बढ़ा जिसका मुख्य कारण कीटों की कृत्रिम कीटनाशकों के प्रति उत्पन्न हुई प्रतिरोधकता, कृत्रिम कीटनाशकों का प्रभावी न होना और जेनेटिक इंजिनियरिंग का तेजी से विकास होना है। 1987 में पहली बार बीटी डेल्टा एण्डोटाक्सिीन जीन को पौधों में सम्मिलित करने की रिपोर्ट आई थी। बीटी को व्यक्त करने वाले सर्वप्रथम ट्रान्सजैनिक पौधे तम्बाकू, मटर व टमाटर थे (बैन फैंकहेनजेन 1993)। 1955 में संयुक्त राज्य पर्यावरण संरक्षण एजेन्सी (यूएसईपीए) के साथ बीटी फील्ड मकई, जो एक बीटी प्लांट कीटनाशी है, पंजीकृत हुई थी। आज के समय में प्रमुख ट्रांसजैनिक फसलों में मक्का, कपास, आलू और चावल शामिल हैं। बीटी डेल्टा एंडोटाक्सीन को व्यक्त करने के लिए पौधों की

इंजीनियरिंग विशेष रूप से कीटों के खिलाफ सहायक रही, जो कि पौधों के उन हिस्सों पर हमला करते हैं जो पारम्परिक कीटनाशक अनुप्रयोग द्वारा आमतौर पर अच्छी तरह से संरक्षित नहीं होते हैं।

इसका मुख्य उदाहरण *ओस्ट्रिनिया न्यूबिलिस*, यूरोपीय मकई भेदक के खिलाफ सुरक्षा है। यह लेपिडोप्टोन सूड़ी मकई के पौधे के तने में प्रवेश करके पौधे को नष्ट कर देता हैं। तने में सूड़ी कीटनाशकों के प्रभाव से सुरक्षित रहता है। बीटी टॉक्सिन इंजीनियर्ड पौधे में जब न्यूबिलिस प्रवेश करता है, तब यह आसानी से बीटी के सम्पर्क में आ जाता है। (एली 1993)। कुल मिलाकर इन लाभों की बजह से बीटी कृषि में एक मुख्य स्थान प्राप्त कर चुका है।

dhVuk'kd ifrjk/k% हलांकि बीटी अपनी उत्पत्ति, क्रिया और उपयोग में अन्य कीटनाशकों के विपरीत है, फिर भी कीटनाशकों की कुछ समस्याओं को साझा करता है। कीटनाशकों के माध्यम से कीटों के नियंत्रण में सबसे बड़ी समस्या उन कीटनाशकों के प्रति बढ़ती प्रतिरोधक क्षमता है। कीटनाशकों के प्रति कीटों की बढ़ती प्रतिरोधकता की पहली रिपोर्ट 50 साल पहले सामने आई थी। लगभग 30 साल बाद 1979 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम में कीटनाशक प्रतिरोध को दुनिया की सबसे गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं में से एक घोषित किया गया। पर्यावरण के लिए इसकी गंभीरता फसल के नुकसान, प्रतिरोधी कीड़ों से बीमारी का प्रसार, प्रतिरोध के बाद नई और संभावित रूप से खतरनाक कीटनाशकों के पर्यावरण के अलावा मानव पोषण की समस्याओं से उत्पन्न होती है।

ifrjk/k dl fodflr gkrk g \ % कीट लगभग हर प्रकार के कीटनाशी के लिए प्रतिरोध उत्पन्न कर सकते हैं। कीटनाशकों के प्रति प्रतिरोध *बैसिलस थ्यूरिंजिएन्सिस* के आम उपयोग में आने के मुख्य कारणों में से एक है। 1997 में अकेले अमेरिका में बीटी आलू, कपास और मकई ने लगभग 10 एकड़ जमीन में शामिल थे। इन फसलों का भी व्यवसायीकरण हुआ, और यह आज कनाडा, जापान, मैक्सिको, अर्जेंटिना और आस्ट्रेलिया में व्यापक रूप में उपयोग में हैं। बीटी का उपयोग पराजीनी फसलों के रूप में आजकल आम हैं। फिर भी बीटी का पारंपरिक छिड़काव द्वारा उपयोग आज भी प्रचलन में हैं (लियू और तबाशमिक, 1999)। बीटी कीटों में सीधे मृत्यु का कारण है और विभिन्न उपभेदों के टॉक्सिन एक ही तरह की कार्यप्रणाली का पालन करते हैं।

डेल्टा एण्टोक्सिन क्रिस्टल कीट के मिडगट में पहुँचते ही भंग हो जाते हैं। यह प्रोटीन्स के टुकड़े मिडगट एपीथीलियम की कोशिकाओं को भंग कर देते हैं (वैन री एट अल 1992)। जिससे कीट को लकवा मार जाता है और वह भोजन लेना बन्द कर देता है और उसकी मृत्यु हो जाती है। इन विषाक्त टुकड़ों के बाध्यकारी संबंध अक्सर विषाक्तता से सीधे संबंधित होते हैं यद्यपि विषाक्त पदार्थों की बाध्यकारिता विषाक्तता को आश्वस्त नहीं करती है।

cflyl F;fjft,fUll d ifr ifrjk/k dk fodkl

कीटों का कीटनाशकों के प्रति प्रतिरोध कृषि में ही नहीं बल्कि स्वास्थ्य और अर्थशास्त्र में भी एक बड़ी समस्या है। बीटी के प्रति कीटों का प्रतिरोध बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है। बीटी टॉक्सिन पारंपरिक कीटनाशकों की तुलना में अधिक कीट विशिष्ट ओर पर्यावरण के लिए सुरक्षित हैं। इन्हीं कारणों से बीटी के वाणिज्यिक छिड़काव फार्मुलेशन जैविक कीटनाशकों की तरह किसानों के लिए उपलब्ध हैं। अगर कीटनाशक प्रतिरोध के चलते बीटी अप्रभावी हो जाते हैं, तो किसान एक बहुत उपयोगी जैविक कीट नियंत्रण खो देंगे। साल 1985 में बीटी डेल्टा एण्डोटाक्सिन के प्रति प्रतिरोध रौशनी में आया था। *प्लाडिया इंटरफ्टेला* में बीटी प्रतिरोध स्टोरेज अनाज के डिब्बे में निम्न स्तर पर पाया गया था। इससे पहले बीटी डेल्टा एण्डोटॉक्सिन के प्रति प्रतिरोधकता न तो प्रयोगशाला और न ही खेतों में देखा गया था। बीटी एण्डोटाक्सिन के प्रतिरोध की समस्या सन 1990 के दशक में अमेरिका के हवाई और फ्लोरिडा क्षेत्रों से आई एक रिपोर्ट के बाद अधिक हो गयी है। इस रिपार्ट के अनुसार कीटों में बीटी के प्रति प्रतिरोध का बड़ा कारण कीट आबादी में अनुवांशिक भिन्नता हैं। किसी भी कीट आबादी में कुछ कीट ऐसे होते हैं जो कीटनाशकों के प्रभाव से बच जाते हैं और ये कीट अपने प्रतिरोधी जीन को अपनी अगली पीढ़ी में स्थानान्तरित कर देते हैं। इस तरह पीढ़ी दर पीढ़ी प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती जाती है, और समय के साथ एक बड़ी कीट जनसंख्या का अनुपात कीटनाशकों के प्रति प्रतिरोधकता प्राप्त कर लेता है। कीटनाशक प्रतिरोधी कीटों द्वारा किये गये बढ़े फसल नुकसान को रोकने के लिए किये गये उपाय अप्रत्यक्ष रूप से माध्यमिक कीटों के प्रकोप का कारण बनते हैं जो अधिक फसल हानि पहुँचाते हैं (होय 1998)।

ifrjks/k {kerk c<kus okys dkjd

1. कीटों की उच्च प्रजनन दर
2. छोटी पीढ़ी दर और अधिक संतान संख्या
3. आनुवांशिक रूप से अधिक भिन्नता
4. लगातार कीटनाशकों का बढ़ता प्रयोग
5. क्रास प्रतिरोध का उत्पन्न होना।

तीस साल बाद *ब्लूटेला जायलोसटेला* में बीटी के छिड़काव के खिलाफ प्रतिरोधकता का पता चला। लगभग उसी समय जापान, चीन, फिलीपींस और थाइलैंड जैसे देशों में *पी. जायलोसटेला* का बीटी के प्रति प्रतिरोध का पता चला। बीटी के *पी. जायलोसटेला* में प्रतिरोध के 15 वर्षों के भीतर प्रयोगशाला में 13 कीट प्रजातियों में बीटी प्रतिरोध चयन किया है। 13 में से 11 में कीटों ने प्रयोगशाला में बीटी के विरूद्ध प्रतिरोध विकसित किया परन्तु क्षेत्र में कोई प्रतिरोध विकसित नहीं हुआ। प्रयोगशाला में प्रतिरोध प्राप्त करने वाली कीट प्रजातियां इस प्रकार हैं : ओस्ट्रिनिया, न्यूबिलिस, *हेलिओयस वायरस, पेक्टीनोफोरा गोस्पीपीला,* कुलेक्स, क्विनकफैसिआब्स, केड्रा, *कैटेला, क्राइसोमेला,* स्क्रिप्ट, *स्पोडोप्टेरा एक्जगुआ, स्पोडोप्टेरा लिटोरिस,* ट्राइकोप्लुसिया, नी, एल थर्मलाइटा और *एटीज इजिप्ती* (हुआंग, एट अल 1999, ताबाशमिक एट अल, 1994 विर्थ एट अल, 1997 फ्रुटोस एट अल, 1999 व्हालांन और मैकगांग)। उपरोक्त वर्णित किसी भी प्रजाति में खेतों में प्रतिरोध नहीं विकसित हुआ है। बीटी में प्रतिरोधकता का मुख्य कारण झिल्ली रिसेप्टर्स में परिवर्तन और विषाक्त प्रोटीन्स की कमी हैं।

ifrjks/k izca/ku

1. संवेदनशील कीट प्रजातियों का कीटों की एक बड़ी आबादी में रिहाई
2. रिफ्यूजिया
3. बीज मिश्रण
4. रोटेशन (दो या दो से अधिक कीटनाशकों का एक पैटर्न बनाकर उपयोग करना)
5. ऊतक विशिष्ट और समय विशिष्ट विषैले अभिव्यक्ति
6. विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों का उपयोग
7. जीन स्टेकिंग को विभिन्न कीटनाशक प्रोटीन्स के साथ उपयोग करना
8. बीटी का प्राकृतिक दुश्मनों के साथ मिश्रण
9. बीटी की उच्च खुराक
10. जाल सयंत्र का उपयोग

हमें विशेष रूप से कीट व्यवहार और कीट प्रतिरोध की विशेषताओं के बारे में ध्यान देना चाहिए, जिसे हम अभी तक पूरी तरह नहीं समझ पाये हैं। हमें *बैसिलस थ्यूरिंजिनेनसिस* को और गहनता से समझने की आवश्यकता है, जिससे कि हम और कई नई जीवाणु प्रजातियों को खोज पाएं जो कृषि में समान उपयोग रखें। बीटी के समान प्रभावशाली और सुरक्षित जीवाणुओं की खोज जैव कीटनाशकों के विकास के लिए बहुत उपयोगी साबित होगी। प्रतिरोध प्रबंधन में जैव प्रौद्योगिकी बहुत कारगर साबित हो सकती है लेकिन इस क्षेत्र में काफी शोध की आवश्यकता है।

lelr Hkkjrh; Hkk"kkvksa dks fy, ;fn dksbZ ,d fyfi vko';d gks rks og nsoukxjh gh gks ldrh gSA

¼tfLVl½ d".kLokeh v¸;j

जैव सुरक्षा : एक महत्वपूर्ण मुद्दे के तहत कार्टाजेन प्रोटोकॉल

vkykd nkl] vkykd 'kDyk] ,-ih- flag] uhrh flag d|'kokgk] ehuy jkBkSj ,oa ,u-ih- flag

जैव सुरक्षा का मुख्य उद्देश्य पारिस्थितिकी एवं मानव स्वास्थ्य से संबंधित जैविक अखण्डता को कायम रखना है। जैव सुरक्षा के लिए कई प्रोटोकॉल प्रस्तावित हैं, जिनके अन्तर्गत निश्चित समयान्तराल पर प्रयोगशाला में शोध कार्यो एवं प्रयोगशाला के रख–रखाव की समीक्षा होती रहनी चाहिए। जैव सुरक्षा के लिए दिए गये निर्देशों के पालन से प्रयोगशाला में होने वाली दुर्घटनाओं से बचा जा सकता है। जिन प्रयोगशालाओं में निर्देशों का पालन नहीं किया जाता है, उन प्रयोगशालाओं में बड़ी दुर्घटना होने का भय बना रहता है।

जैव सुरक्षा के सन्दर्भ में अन्तर्राष्ट्रीय कार्टाजेन प्रोटोकाल अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मुख्यतः आनुवंशिक रूप से संशोधित जीवों और उनके उत्पादों के सुरक्षित उपयोग के लिए कई देशों में जैव सुरक्षा विधान है, लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय नियमों की भी आवश्यकता है क्योंकि जैव प्रौद्योगिकी के अंतर्गत जीएमओ का कारोबार सीमाओं के आर–पार भी होता है। कार्टाजेन प्रोटोकाल जीवित संशोधित सूक्ष्म जीवों के सीमा आर–पार सुरक्षित हस्तानान्तरण, संभालने और प्रयोगों के लिए एक व्यापक नियामक प्राणी बनाती है। दैनिक प्रयोग में एलएमओ एवं जीएमओ एक ही समझे जाते हैं, हालांकि इनकी परिभाषाएँ एवं व्याख्याएं अलग–अलग हैं। कार्टाजेन प्रोटोकाल प्राथमिक रूप से उन एलएमओ से संबंधित है जो जानबूझकर पर्यावरण में छोड़े जाते हैं, जैसे बीज, पेड़ या मछली, और आनुवंशिक रूप से संशोधित कृषि वस्तुओं के साथ जैसे भोजन, पशुचाका या प्रसंस्करण में प्रयोग होने वाले मक्का एवं अनाज। यह दूसरे अंतर्राष्ट्रीय संगठनों या समझौतों द्वारा मनुष्यों के उपयोग के लिए औषधियों या एलएमओ से व्युत्पन्न उत्पादों जैसे आनुवांशिक रूप से संशोधित मकई से खाना पकाने के तेल को यह सुरक्षित नहीं करती है।

कार्टाजेन प्रोटोकॉल 11 सितम्बर 2003 से लागू हुआ, भारत ने 23 जनवरी 2003 को जैव सुरक्षा पर इस (कार्टाजेन) प्रोटोकॉल की पुष्टि की, लगभग 153 देश इस प्रोटोकॉल के पक्षकार हैं।

ikVksdkWy dk mnns'; ,oa bldh fo'ks"krk,¡

आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी से उत्पन्न एलएमओ, और जो जैव विविधता के संरक्षण एवं स्थायी उपयोग पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते हैं (उनके मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले खतरों का और विशेष कर सीमा पारीय गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए) के लिए योगदान इस प्रोटोकॉल का एक उद्देश्य है। यह प्रोटोकॉल एलएमओ के सुरक्षित हस्तांतरण, हैंडलिंग और उपयोग विशेषकर उनके सीमा पारीय लाने ले जाने के लिए नियमों की स्थापना कर जैव सुरक्षा को बढ़ावा देता है। इसमें प्रक्रियाओं का एक समूह है जसमें एक पर्यावरण में जानबूझकर छोड़े जाने वाले एलएमओ के लिए और दूसरा उस एलएमओ के लिए है जो भोजन, चारा या प्रसंस्करण के लिए प्रयोग में लिए जाते हैं। प्रोटोकॉल के करार देशों को सूचित करना चाहिए कि एलएमओ सुरक्षित हालात में संभाल, पैक और सीमा के आर–पार भेजे जाते हैं। इसके अलावा एलएमओ को सीमा आर–पार भेजते समय उचित दस्तावेज जिनमें उनकी और अन्य चीजों के अलावा अधिक जानकारी के लिए संपर्क बिन्दु की पहचान सम्बन्धी जानकारी हो। ये प्रक्रियाएँ और आवश्यकताएँ आयातक देशों को एलएमओ के आयात को स्वीकार या अस्वीकार करने और उनको सुरक्षित तरीकों को संभालने के लिए आवश्यक सूचनाएँ प्रदान करता है। आयात करने वाला देश वैज्ञानिक दृष्टि से जोखिम के मूल्यांकन के अनुसार अपने फैसले करता है।

प्रोटोकॉल जोखिम के मूल्यांकन का संचालन करने के लिए नियमों एवं प्रक्रियाओं को बनाता है। अपर्याप्त प्रासंगिक वैज्ञानिक जानकारी के मामले में आयातक देश, आयात पर निर्णय लेने में सावधानी बरत सकते हैं। एलएमओ के आयात पर निर्णय लेने के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय दायित्वों के अनुरूप सामाजिक, आर्थिक आधार को भी ध्यान में रखा जा सकता है। पार्टियों को जोखिम के मूल्यांकन द्वारा सुझाए किसी भी जोखिम के प्रबंधन के लिए उचित उपायों को अपनाना चाहिए और एलएमओ की आकस्मिक निस्सरन की घटना में उन्हें आवश्यक कदम उठाने चाहिए। इसके कार्यान्वयन को सुविधाजनक बनाने के लिए प्रोटोकाल में जानकारी विनियमन के लिए जैव क्लीयरिंग हाउस स्थापित किया गया है, जिसमें क्षमता, निर्माण, वित्तीय तंत्र अनुपालन प्रक्रियाओं और सार्वजनिक जागरूकता और भागीदारी सहित अन्य महत्वपूर्ण प्रावधान शामिल हैं।

इस प्रोटोकॉल का पूरा पाठ सीबीडी वेबसाइट http://www.cbd.int/biosafety पर उपलब्ध है।

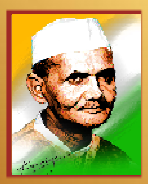

fØ;k'khyrk gh Kku izkfIr dk ,dek= ekxZ gA

Ykky cgknj 'kkL=h

राजमा की पोषक उपयोगिता एवं उसका महत्व

ckLojkt Vh] xkfoUn] noT;kfr lu xlrk ,o ujUn iirki flg

राजमा एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है जिसकी हरी फलियों को सब्जी बनाकर चाव से खाया जाता है एवं सूखे दानों का प्रयोग दाल बनाकर विभिन्न स्वादिष्ट व्यंजनों के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। हालांकि प्राचीन काल में राजमा फसल को अमेरिका के विभिन्न प्रांतों में बोया जाता था, परन्तु भारत में प्रारम्भ से इसकी खेती मुख्य रूप से उत्तराखंड के समस्त पर्वतीय स्थानों, हिमाचल प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर एवं उत्तर–पूर्व राज्यों में की जाती रही है। स्नेह–स्नेह वैज्ञानिक विकास के साथ–साथ उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, बिहार, झारखण्ड एवं कर्नाटक में भी राजमा की खेती का विस्तार अच्छे स्तर पर किया जा रहा है। इतना ही नहीं अस्सी के दशक में सर्वप्रथम भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर, उत्तर प्रदेश में राजमा की प्रजाति ''उदय (पी.डी.आर. 14)'' का विकास किया गया था। सम्पूर्ण उत्तर भारत में राजमा चावल को भोजन के रूप में विशेष रूप से खाया जाता है क्योंकि राजमा का पोषक महत्व के साथ–साथ स्वाद का भी अनोखा अंदाज है। राजमा बाजार में सूखे दानों के रूप में उचित भाव में सुविधापूर्ण रूप से प्राप्त किया जा सकता है। राजमा में मानव शरीर हेतु महत्वपूर्ण विटामिन्स भी पाए जाते हैं जो विभिन्न प्रकार के रोगों से मुक्ति दिलाते हैं एवं व्यक्ति को स्वस्थ भी बनाते हैं। वैज्ञानिक अध्ययनों से इस बात की पुष्टि हुई है कि राजमा में निहित विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थों की उपस्थिति के कारण अनेकों प्रकार की बीमारियों से लड़ने की क्षमता स्वतः उत्पन्न हो जाती है। राजमा में घुलनशील रेशायुक्त पदार्थ की उपस्थिति के कारण रूधिर शर्करा का स्तर भी नियंत्रित रहता है, फलस्वरूप मधुमेह–रोग को भी फैलने से रोकता है। इसके अतिरिक्त, इसके सेवन करने से शरीर में वसा की मात्रा में भी नियंत्रण रहता है एवं अचानक होने वाले गंभीर रोग जैसे हृदयाघात, मस्तिष्क–ज्वर नामक रोग से भी छुटकारा मिल सकता है। साथ ही साथ उच्च रक्तचाप को भी नियंत्रण किया जा सकता है। जैसे कि राजमा में थाइमिन नामक महत्वपूर्ण विटामिन पाया जाता है जो व्यक्ति के मस्तिष्क में घटित होने वाले विभिन्न प्रकार के गंभीर स्तर को कम करने में सहायता प्रदान करता है। रासायनिक प्रक्रिया के फलस्वरूप चयापचय एवं उपापचय के अंतर्गत विभिन्न लाभकारी पदार्थों की उपस्थिति के कारण राजमा शरीर में ऊर्जा उत्पन्न करता है, जिससे व्यक्ति सदैव स्वस्थ रहता है। सूक्ष्म पदार्थ मैग्नीशियम की उपस्थिति के कारण मांशपेशियों को बहुत आराम मिलता है, साथ ही तंत्रिका–तंत्र, रूधिर नालिकाएँ भी सुचारू रूप से कार्य करती रहती हैं। राजमा के सेवन से श्वांस की बीमारी एवं सदैव बने रहने वाले सिरदर्द से भी छुटकारा मिल सकता है।

jktek d: l[k nkuk dk iks"kd egRo ¼100 xke½

iks"kd rRo	ek=k
प्रोटीन	22 ग्राम
कुल ऊर्जा	32 ग्राम
कुल कार्बोहाइड्रेट	60 ग्राम
खाद्य रेखा	15 ग्राम
शर्करा	2 ग्राम
कुल वसा	1 ग्राम
विटामिन सी	4.4 मि.ग्रा.
विटामिन ई	205 मि.ग्रा.
विटामिन के	6 मि.ग्रा.
कोलीन	64 मि.ग्रा.
खनिज	64 मि.ग्रा.
कैल्शियम	81 मि.ग्रा.
लौह तत्व	7 मि.ग्रा.

चना की गुणवत्ता एवं स्वास्थ्य लाभ में योगदान

vYdk dfV;kj] vkykd nkl] ehuy jkBkj ,oa ,u-ih- flag

चना एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है जो कि पूरी दुनिया में बहुतायत से उगाया एवं खाया जाता है। चने में कार्बोहाइड्रेट, प्रोट्रीन, लौह तत्व, कैल्शियम व विटामिन्स पाये जाते हैं। चने में गन्धक युक्त एमिनो एसिड को छोड़कर सभी आवश्यक अमीनो एसिड की महत्वपूर्ण मात्रा पाई जाती है। चने में असंतृप्त फैटी एसिड जैसे लिनोलिक और ओलेइक एसिड भी पाया जाता है।

चने को स्वास्थवर्धक बताया गया है क्योंकि इसके सेवन करने से काफी रोग ठीक हो जाते है। चना शरीर की बीमारियों से लड़ने में सक्षम बनाता है। शरीर को सबसे ज्यादा पोषण चना से मिलता है। इसके साथ–साथ इन्हें अंकुरित करके खाने से इसके पोषक तत्वों की मात्रा अधिक हो जाती है क्योंकि अंकुरित चने में सारे विटामिन्स व क्लोरोफिल के साथ फास्फोरस आदि खनिज लवण भी प्रचुर मात्रा में पाएं जाते है।

puk dk lou ls ekuo 'kjhj esa ykHk

1- **Mk;fcVht dh leL;k esa &** चना ताकतवर होता है। इसमें रेशा प्रचुर मात्रा में पाया जाता है अध्ययनों से पता चलता है कि टाइप–1 मधुमेह वाले व्यक्तियों को उच्च रेशे वाले आहारों का सेवन अधिक करना चाहिए क्योंकि उसमें ग्लूकोज का स्तर कम होता है जबकि टाइप–2 मधुमेह वाले व्यक्तियों के लिए उच्च रेशे वाले आहारों के उपयोग करने से उनमें शर्करा, लिपिड व इंसुलिन को स्तर कम होता है। महिलाओं को प्रतिदिन कम से कम 21–25 ग्राम व पुरुषों को प्रतिदिन 30–38 ग्राम चने का उपयोग करना चाहिये।

2- **jDrpki dh leL;k esa &** कम रक्तचाप को बनाए रखने के लिए कम सोडियम का सेवन करना आवश्यक है। एक व्यस्क को प्रतिदिन 4700 मिलीग्राम चने के उपयोग करने से रक्तचाप की समस्या से राहत मिलती है।

3- **iFkjh dh leL;k esa &** दूषित पानी और दूषित खाने से पथरी की समस्या बढ़ जाती है। पथरी की समस्या से निजात के लिए प्रतिदिन अंकुरित चने का उपयोग करने से पथरी की समस्या समाप्त हो जाती है।

4- **dkyLVky Lrj dk de djus esa &** शोधों से पता चलता है कि चने के उपयोग करने से रक्त में कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन व कोलेस्ट्रॉल की मात्रा काफी कम हो जाती है। चने के सेवन से आंत में पाया जाने वाला पित्त रस, खून में बढ़े हुए कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में मदद करता है।

5- **gfMM;k dk etcwr cukus esa &** चने में लौह, फॉस्फेट, कैल्शियम, मैग्नीशियम, जस्ता और विटामिन्स प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जो कि हड्डी को मजबूत बनाने में सहयोग करते हैं।

6- **dSlj dk fuokj.k esa&** अधिकांश फलों और सब्जियों में खनिज सेलेनियम मौजूद नहीं होता है जबकि यह चने में पाया जाता है, जो कि यकृत के एंजाइमों को ठीक से काम करने में मदद करता है और शरीर में कुछ कैंसर पैदा करने वाले यौगिकों को समाप्त करता है। इसके अतिरिक्त सेलेनियम सूजन को रोकता है व ट्यूमर वृद्धि की दर को घटाता है।

7- **ikpu 'kfDr o fu;ferrk esa lgk;d &** चने में पाया जाने वाला उच्च फाइबर कब्ज को रोकने व स्वस्थ पाचन तन्त्र में मदद करता है।

8- **ltu dk de djus esa &** चने में पाया जाने वाला कोलाइन माँसपेशियों को संतुलन, स्मृति को बढ़ाने में मदद करता है। यह तंत्रिका तंत्र को स्वस्थ्य रखने के साथ–साथ वसा के अवशोषण में सहायता करता है जो कि पुरानी से पुरानी सूजन को कम कर देता है।

9- **Åtk o bE;qfuVh dk c<kus esa &** चनों में मैंगनींज की प्रचुर मात्रा होती है। इसके अलावा, इसमें पोषक तत्व जैसे थियामिन, मैग्नीशियम व फास्फोरस भी पाये जाते हैं जिसके सेवन से शरीर को ऊर्जा के उत्पादन

में मदद मिलती है। इसके साथ–साथ यह इम्यूनिटी को भी बढ़ाता है।

10- **jDrkYirk dh leL;k e: &** चने के सेवन से रक्ताल्पता की समस्या दूर हो जाती है। चने में 27 प्रतिशत फास्फोरस व 28 प्रति आयरन होता है जो न केवल नई रक्त कोशिकाओं को बनाता है, बल्कि हीमोग्लोबिन को भी बढ़ाता है।

इस प्रकार दी गई जानकारियों के अनुसार, चने की पोषण गुणवत्ता एवमं स्वास्थ्य लाभ में इसकी भूमिका दिखाई देती है। वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार चना मानव शरीर में होने वाली विभिन्न बीमारियों के निवारण के लिए उपयोगी है।

vkylh 0;fDr dke ls ugh] dke dk lkpdj gh Fkd tkrk gA

yky cgknqj 'kkL=h

बीज अंकुरण परीक्षण की आवश्यकता क्यों?

inhi dekj dfV;kj] ve`r ykehNku] vehuíhu vlkjh] inhi ;kno]
fi;dk feJk ,o fo'kky dekj

फसल के बेहतर उत्पादन के लिए उच्च गुणवत्तायुक्त बीज का महत्वपूर्ण स्थान होता है। बीज की गुणवत्ता जाँचने में अंकुरण परीक्षण एक महत्वपूर्ण कारक है। गुणवत्तायुक्त बीजों का महत्व का वर्णन प्राचीन ग्रन्थ 'मनुस्मृति' में मिलता है जिसमें कहा गया है कि – ''सुबीजम् सुकस्तरे ज्याते समपादयते्'' इसमें 'सु' का मतलब अच्छा तथा 'बीजम्' का मतलब बीज से है।

आधुनिक समय में बीज के महत्व को देखते हुए उसकी गुणवत्ता के परीक्षण हेतु विश्व में प्रथम बार श्री फ्रेडरिच नोबे ने वर्ष 1869 में थ्रंट जर्मनी में शुरूआत की थी। तत्पश्चात वर्ष 1871 में बीज परीक्षण प्रयोगशाला की स्थापना श्री ई. मोलर होस्ट द्वारा कोपेनहेगन (डेनमार्क) में की गयी थी। इस सम्बन्ध में *''हेण्डबुक ऑफ सीड टेस्टिंग''* वर्ष 1876 में श्री फ्रेडरिच नोबे द्वारा लिखी व प्रकाशित की गई थी। इसी क्रम में वर्ष 1900 तक यूरोप में लगभग 130 बीज परीक्षण केन्द्रों की स्थापना हो चुकी थी। इन बीज परीक्षण केन्द्रों के परीक्षण परिणामों में एकरूपता हेतु वर्ष 1924 में आईएसटीए की स्थापना की गई।

वर्ष 1961 में भारत में प्रथम बीज परीक्षण प्रयोगशाला की स्थापना हुई। इस परिपेक्ष्य में अब तक केवल भारत में ही 107 बीज परीक्षण प्रयोगशालाएँ कार्यरत हैं जो देश में बीज की गुणवत्ता बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

vadj.k ijh{k.k ds fy, vko';d n'kk,¡

अंकुरण परीक्षण के लिए कुछ आवश्यक परिस्थितियों की आवश्यकता होती है जो निम्न प्रकार हैं –

1- **ek/;e %** बीज के अंकुरण परीक्षण के लिए पेपर हावेल, ब्लाटिंग पेपर, फिल्टर पेपर, रूई, बालू, मिट्टी आदि माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। माध्यम की जलधारण क्षमता अच्छी हो तथा माध्यम रोगाणुमुक्त तथा निर्जलीकृत होना चाहिए। इसका पी.एच. मान सामान्य होना चाहिए।

2- **ueh %** बीज परीक्षण के लिए जिस जल का प्रयोग किया जा रहा हो वह अम्लीयता, क्षारीयता, कार्बनिक या अन्य अशुद्धियों से मुक्त होना चाहिए। अलवणीय जल के प्रयोग से अच्छा परिणाम मिलता है।

3- **rkieku %** सामान्य अंकुरण के लिए उपयुक्त तापमान की आवश्यकता होती है। रबी दलहनी फसलों के लिए सामान्यतः 20–25 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान तथा खरीफ फसलों के लिए 25–30 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान उचित माना जाता है। प्रमुख दलहनी फसलों के अंकुरण के लिए तापमान सारणी 1 में दर्शाया गया है।

4- **idk'k %** बीज के अंकुरण के लिए प्रकाश भी एक महत्वपूर्ण कारक है जिसे प्राकृतिक या कृत्रिम तरीके से दिया जा सकता है। सामान्यतः बीजों को 8 घण्टे प्रतिदिन प्रकाश की आवश्यकता होती है।

cht vadj.k ijh{k.k % बीज एक निश्चित समय तक प्रसुप्तावस्था में रहने के पश्चात जल, वायु तथा उचित ताप जैसी उपयुक्त दशाएँ पाकर अंकुरित होता है। बीज का अंकुरण परीक्षण प्रयोगशाला में किया जाता है। प्रयोगशाला में अंकुरण परीक्षण से आशय बीज से निर्मित उन संरचनाओं के विकास से होता है जो यह संकेत देती हैं कि जब बीज को भूमि में अनुकूल परिस्थितियों में बोया जायेगा तो उसमें सामान्य पौध विकसित होगी। बीजों की अंकुरण क्षमता के लिए जो परीक्षण किए जाते हैं उसे बीज अंकुरण परीक्षण कहते हैं।

ik/k dk oxhZdj.k% अंकुरण परीक्षण की अवधि के अन्त में मुख्यतः तीन प्रकार की पौध प्राप्त होती हैं जिन्हें संरचनाओं के आधार पर निम्न वर्गों में विभाजित किया गया है –

1- **lkekU; ik/k %** ऐसा पौधा जो अच्छी भूमि और अनुकूल परिस्थितियों (उचित ताप, वायु व नमी) में उगाये जाने पर सामान्य पौधे के रूप में निरन्तर विकास की क्षमता दर्शाती हो उसमें सभी आवश्यक संरचनाएँ–

lkj.kh 1% ie[k nyguh Qlyk d chtk d vdj.k d fy, mfpr ek/;e] mfpr rkieku ¼oC e½ vdj.k ijh{k.k dh vof/k ¼fnuk e½

Øe l-	Qly	ek/;e	rkieku ¼o lfYl;l½	iFke x.kuk ¼fnuk e½	vfre x.kuk ¼fnuk e½
1	मटर	बीपी, एस	20	5	8
2	चना	बीपी, एस	20–30, 20	5	8
3	मूँग	बीपी, एस	20–30, 25	5	8
4	उर्द	बीपी, एस	20–30, 25	4	7
5	अरहर	बीपी, एस	30	4	6
6	मसूर	बीपी, एस	20	5	10
7	लोबिया	बीपी, एस	20–30, 25	5	8
8	राजमा	बीपी, एस	20–30, 20–25	5	9
9	कुल्थी	बीपी, एस	20	5	14
10	खेसारी	बीपी, एस	20	5	14
11	सेम	बीपी, एस	20–30, 25	4	10
12	लिमा बीन	बीपी, एस	20–30, 25	5	9
13	मोंट	बीपी, एस	20–30, 25	5	10
14	राइस बीन	बीपी	20–30	5	8

*बीपी–(दो पेपर के मध्य); *एस–बालू

सुविकसित मूल संहति (प्रार्थमिक व द्वितीयक जड़े) निकली और निकलती हुई पत्तियों सहित प्रांकुर एक (एकबीजपत्री) अथवा दो (द्विबीजपत्री) बीजपत्र जुड़ा हुआ सुविकसित बीजपत्राधार अथवा बीजपत्रोपरिक हो और वह स्वस्थ व रोगाणुमुक्त हो, सामान्य पौध कहलाती है (चित्र 1)।

fp= 1% ¼d½ vkjg rFkk ¼[k½ jktek dh lkekU; ikS/k

- परीक्षण अवधि के अन्त में तीनों वर्गों की प्राप्त पौध का योग 100 प्रतिशत होना चाहिए इसमें से जितने प्रतिशत सामान्य पौध होगी, वही अंकुरण प्रतिशत होगा।

2- vlkekU; ikS/k

असामान्य पौध वह पौध होती है जो अनुकूल दशाओं में भी सामान्य पौधे के रूप में निरन्तर विकास की क्षमता नहीं प्रदर्शित करती है। इस प्रकार की पौध को अंकुरण की सभी आवश्यक दशाएँ उपलब्ध होने पर अंकुरण तो होता है परन्तु एक या सभी आवश्यक संरचनाओं का विकास नहीं होता। अगर विकास हुआ भी तो वह रोगग्रस्त, व विकृतियुक्त होने के कारण सामान्य पौध में विकसित होने की क्षमता नहीं रखता (चित्र 2)।

fp= 2% ¼d½ jktek rFkk ¼[k] x½ vjgj esa vlkekU; ikS/k

vlkekU; ikS/k dh fo'ks"krk,¡% इस प्रकार की पौध में निम्नलिखित कमियों के कारण असामान्य पौध में गणना होती है–

- ऐसी पौध जिसके आवश्यक अंगों पर दरारें पड़ गई हों, जो दबकर या सिकुड़कर खराब हो गई हों, बीजपत्र न हो, क्षतिग्रस्त पौध कहलायेगी।

- ऐसी पौध जिसमें आवश्यक संरचनाओं का विकास मंद व असंतुलित हुआ हो।
- ऐसी पौध, जिसकी कोई भी आवश्यक संरचना इतनी रोगग्रस्त हो गई हो कि उनका सामान्य विकास रूक जाये।
- यांत्रिक क्षति, कीट क्षति नमी या पाले से किसी रसायन की क्षति अथवा खनिजों की कमी दर्शाने वाली पौध असामान्य पौध कहलायेगी।
- प्राथमिक संक्रमण के कारण बीजपत्र सड़ गया हो।

3- vuvdfjr cht@ik/k

1- dBkj cht % लेग्यूमिनेसी व माल्वेसी कुल के पौधों के बीजों की यह मुख्य विशेषता है जो परीक्षण अवधि के समाप्त होने तक जल न सोखने के कारण कठोर बने रहते हैं। यह कठोरता उनके कठोर बीजावरण के कारण होती है। इस बीजावरण को यांत्रिक या रासायनिक विधियों द्वारा उपचारित करके कमजोर किया जा सकता है।

2- rkt: vuvdfjr cht% कठोर बीजों के अलावा, अन्य बीज जो प्रसुप्ति के लिए उचित उपचार करने के उपरान्त कड़े और प्रकट तौर पर अंकुरणक्षम बने रहते हैं, ताजे अनअंकुरित बीज कहलाते हैं। यह विशेषताएं बीजों में कार्यिकी सुसुप्तावस्था के कारण आती है। ऐसे बीज जल अवशोषित करने की क्षमता तो रखते हैं लेकिन इनमें विकास बाधित रहता है।

3- er cht % परीक्षण अवधि के अन्त में जो बीज न तो कठोर और न ही ताजे रहते हैं और पौध भी उत्पन्न नहीं होती, मृत बीज कहलाते हैं। मृत बीज प्रायः सड़ जाते हैं, उन पर कवक उग आती है तथा मुलायम पड़ जाते हैं। उनके भ्रूण मुलायम और रंगहीन हो जाते हैं।

आईएसटीए नियमानुसार जिन नमूनों का बीज अंकुरण प्रतिशत निर्धारित मानक से अधिक होता है वे सभी बीज ढेर बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा उपयुक्त माने जाते हैं परन्तु जिन नमूनों का बीज अंकुरण प्रतिशत निर्धारित न्यूनतम मानक से कम होता है वे सभी बीज ढेर बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा फेल माने जाते हैं और बीज विक्रय हेतु अनुपयुक्त होते हैं। बीज परीक्षण प्रक्रिया में केवल बीज अंकुरण प्रतिशत ही ऐसा कारक है जो मानक के अनुरूप न होने पर बीज ढेर अस्वीकृत होता है और उसे न्यून श्रेणी में भी विक्रय नहीं किया जा सकता है। जबकि अन्य कारकों पर यह शर्त लागू नहीं होती।

इससे यह सिद्ध होता है कि बीज परीक्षण की प्रक्रिया में बीज प्रमाणीकरण की दृष्टि से बीज अंकुरण परीक्षण सबसे महत्वपूर्ण कारक है।

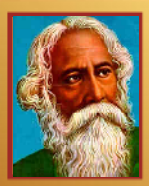

vlR; Hkk"k.k iki g] vkj fuUnk egkikiA

jfoUnz ukFk Bkdj

बसंत/ग्रीष्मकालीन उर्द व मूँग की उन्नत खेती

f'koiky flg pkgku] ujUn dekj ,o inhi dekj dfV;kj

भारत विश्व का सबसे बड़ा दलहन उत्पादक देश है। विश्व के दलहन उत्पादन में भारत की भागीदारी लगभग 25 प्रतिशत है। विश्व में करीब 760 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में दालों की खेती की जाती है एवं लगभग 680 लाख टन दलहन का उत्पादन होता है तथा औसत उत्पादकता 800 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार शाकाहारी स्वस्थ मनुष्य में प्रोटीन की पूर्ति के लिये 80–100 ग्राम दाल प्रति व्यक्ति प्रतिदिन की आवश्यकता होती है। वर्तमान परिस्थितियों में मात्र 43 ग्राम दाल ही प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध हो रही है। बढ़ती आबादी व जीवन स्तर में बदलाव से बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए वर्ष 2030 तक 320 लाख टन दलहन उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है जिसके लिये हमें वार्षिक उत्पादन में प्रतिवर्ष 4.2 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी करनी होगी। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये आवश्यक है कि दलहनी फसलों की खेती अच्छी भूमि में बेहतर सस्य प्रबंधन के आधार पर की जाए।

बसंत/ग्रीष्मकालीन उर्द व मूँग की खेती कर दलहन उत्पादन में बढ़ोत्तरी कर सकते हैं। इससे किसान भाईयों को उर्द व मूँग की बिक्री द्वारा अतिरिक्त लाभ तो मिलेगा ही, साथ ही साथ फलियों की तुड़ाई के बाद पौधों को भूमि में पलट देने से मृदा की उर्वरता में बढ़ोत्तरी भी होगी। इसके अलावा, दलहनी फसलों की जड़ ग्रन्थियों में उपलब्ध राइजोबियम जीवाणु द्वारा स्थिरीकरण की गई वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का लाभ आगामी फसल को उपलब्ध होगा। दलहनी फसलें उच्च गुणवत्तायुक्त होती हैं एवं इनमें कम निवेश की आवश्यकता होती है। फसल विविधता में दलहनी फसलों का बहुत बड़ा योगदान है। दलहनी फसलों में प्रोटीन की मात्रा 20–25 प्रतिशत तक होती है। दालें प्रोटीन का सस्ता एवं असानी से उपलब्ध होने वाला माध्यम हैं। सामान्यतः किसान भाई जायद में कोई फसल नहीं लेते हैं। यदि जायद के मौसम में सिंचाई सुविधा उपलब्ध है तो इस मौसम में उर्द व मूँग की खेती करके किसान भाई अतिरिक्त आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही साथ मृदा स्वास्थ्य में भी सुधार ला सकते हैं। ग्रीष्मकालीन उर्द/मूँग एक अच्छी अच्छादन फसल है जिससे मृदा में नमी बनी रहनी है और खेतों में खरपतवारों का प्रकोप कम होता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का अपना महत्व है। आज भी सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 19 प्रतिशत भाग कृषि एवं कृषि सम्बंधी व्यवसाय से प्राप्त होता है तथा कृषि आज भी 60 प्रतिशत जनसंख्या का रोजगार का प्रमुख स्रोत है। भारत में आज भी 70 प्रतिशत क्षेत्र में वर्षा आधारित खेती की जाती है। किसान भाईयों के सामने कई और नई समस्यायें आ खड़ी हुई हैं– जैसे– तापमान में वृद्धि, सूखा, ओलावृष्टि, अतिवृष्टि, असमय व अनियमित वर्षा, नये कीट एवं बीमारियों का प्रकोप आदि। हालांकि ऐसी समस्यायें पहले भी रही हैं, लेकिन वर्तमान समय में बदलते वातावरण के कारण यह समस्यायें बार–बार आने लगी हैं, जिसके कारण किसान का खेती करने का मनोबल दिनों–दिन कमजोर होता जा रहा है। वर्तमान खेती में घटती उत्पादकता तथा बढ़ती लागत के कारण कृषकों की आजीविका में सुधार लगभग रूक सा गया है। उपरोक्त समस्याओं को दृष्टिगत करते हुये बसंत/ग्रीष्मकालीन उर्द व मूँग की भरपूर उपज प्राप्त करने के लिये निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए :

Hkfe o [kr dh r;kjh% बसंत/ग्रीष्मकालीन में उर्द व मूंग की खेती के लिये हल्की दोमट भूमि उपयुक्त रहती है। दो जुताई देसी हल अथवा हैरो से करनी चाहिये। जुताई के बाद पाटा लगाना चाहिए ताकि खेत में नमी बनी रहे। दलहनी फसलों की बुवाई हेतु उचित जल निकास प्रबंधन के साथ भूमि का पी.एच.मान 6.5 से 8.5 के मध्य होना चाहिए।

tyok;% मूंग व उर्द की अच्छी उत्पादकता हेतु उचित तापमान की आवश्यकता होती है इसके लिए 30–35^0 सेल्सियस तापमान होना चाहिये। उर्द एक उष्ण कटिबंधीय फसल है। इसी कारण यह उच्च तापमान के प्रति सहनशील है। उर्द की वृद्धि हेतु वायु का उचित तापमान 25 से 35^0 सेल्सियस एवं 50–70 प्रतिशत आर्द्रता को उपयुक्त माना गया है परन्तु यह 45^0 सेल्सियस तक तापमान सहन कर सकता है। अल्प एवं दीर्घकालिक अवधि वाली उर्द व मूँग की किस्में उपलब्ध होने

के कारण इन्हें तीनों ऋतुओं में आसानी से उगाया जा सकता है।

cokbZ dk mfpr le;% बसंत उर्द/मूँग की बुवाई का उपयुक्त समय फरवरी के अन्तिम सप्ताह से 15 मार्च है। मूँग की 60–65 दिनों में पकने वाली किस्मों का चयन करें, जायद मूँग की बुवाई अप्रैल के प्रथम सप्ताह तक कर सकते हैं। बुवाई में देरी होने से फूल व फलियाँ गर्म हवा के कारण तथा वर्षा होने से क्षतिग्रस्त हो सकती हैं।

cht'kks/ku ,oa chtkipkj% दलहनी फसलों से अधिक उत्पादन लेने हेतु बीजोपचार एक महत्वपूर्ण तरीका है। सर्वप्रथम बीज को 3 ग्राम थिरम या 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। इसके बाद बीजों को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने के लिए 200 ग्राम का एक पैकेट कल्चर 10 कि.ग्रा. बीज के हिसाब से पानी व गुड़ के घोल में मिलाकर बीज के ऊपर छिड़क कर हल्के हाथ से मिलाकर बीज को छाया में सुखाकर तुरंत बुवाई करें। बीजोपचार हेतु फसल विशेष के लिये संस्तुत राइजोबियम कल्चर का ही प्रयोग करना चाहिये।

cht dh ek=kk% बसंत/ग्रीष्म ऋतु में उर्द व मूँग का पौधा कम बढ़ता है इसलिये जायद में ज्यादा बीज रखते हैं। जायद में बीज दर 25–30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर रखते हैं। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 से.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखते हैं।

mUur itkfr;ksa dk puko% बसंत/ग्रीष्म ऋतु में उर्द व मूँग की बुवाई के लिये कम अवधि वाली प्रजातियों का चुनाव करना चाहिये। उन्नतशील किस्मों का बीज किसी प्रमाणिक संस्था से ही खरीदना चाहिये। दलहनों की कई उन्नतशील प्रजातियाँ विकसित की गई हैं जिनका संक्षिप्त विवरण तालिका 1 में दिया गया है। अधिक उत्पादन प्रापत करने के लिये अच्छी किस्मों का चयन वहाँ की भौगोलिक परिस्थिति, कृषि जलवायु क्षेत्र एवं संस्तुति के आधार पर करना चाहिये। विभिन्न कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्रों तथा गैर परम्परागत क्षेत्रों के लिये उन्नतशील प्रजातियाँ विकसित की गई हैं, जिन्हें बोकर किसान भाई अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।

cokbZ dh fof/k% उर्द व मूँग की बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 से.मी. तथा बुवाई 3–4 सें.मी. गहराई में करनी चाहिये। बुवाई के तुरंत बाद पाटा लगाना चाहिये। ऐसा करने से फसल का जमाव ठीक होता है तथा नमी संरक्षित रहती हैं।

moZjdksa dk iz;ksx% सामान्यतः उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण की संतुतियों के अनुरूप करना चाहिये। 15–20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश

rkfydk 1% mUur'khy itkfr;ksa

Qly	itkfr	idus dh vof/k (fnu)	mit (d-@g-)	fo'ks"krk;sa
उर्द	पन्त उर्द 35	80–85	10–12	पीला चितेरी रोगरोधी
	नरेन्द्र उर्द 1	80–85	10–12	पीला चितेरी रोगरोधी
	प्रताप उर्द 1	70–75	10–12	बहुरोग रोधी एवं कम नमी के प्रति सहनशीलता
	शेखर 3	75–80	12–13	पीला चितेरी रोगरोधी
	आईपीयू 94–1	80–85	12–15	पीला चितेरी रोगरोधी
	आईपीयू 2–43	80–85	12–15	पीला चितेरी रोगरोधी
	आजाद उर्द 1	80–85	10–12	पीला चितेरी रोगरोधी
	पंत उर्द 40	75–80	12–15	बहु रोगरोधी
मूँग	सम्राट	60–65	10–12	पीला चितेरी रोगरोधी
	विराट	50–55	12–15	पीला चितेरी रोगरोधी
	आईपीएम 2–3	65–70	12–15	पीला चितेरी रोगरोधी
	आईपीएम 2–14	65–70	12–15	पीला चितेरी रोगरोधी
	मेहा	70–75	12–15	पीला चितेरी रोगरोधी
	शिखा	65–70	12–15	पीला चितेरी रोगरोधी
	पंत मूँग 5	65–70	10–12	पीला चितेरी रोगरोधी
	नरेन्द्र मूँग 1	65–70	10–12	पीला चितेरी रोगरोधी

प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय प्रयोग करना चाहिए। फॉस्फोरस का प्रयोग सिंगल सुपर फॉस्फेट द्वारा करना चाहिये, इससे खेत में गंधक की आपूर्ति स्वतः हो जाती है। फूल बनने से पहले 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव 10 दिनों के अंतराल पर दो बार करने से अच्छी पैदावार मिलती है। दलहनी फसलों से अधिक उत्पादकता प्राप्त करने हेतु पर्याप्त एवं संतुलित मात्रा में पोषक तत्वों की आपूर्ति करना आवश्यक है। दहलनी फसलें प्रोटीन से भरपूर होती हैं। अतः नाइट्रोजन की मात्रा का मृदा से ह्रास अधिक होता है जिसकी आपूर्ति वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन के स्थिरीकरण द्वारा पौधा अपनी पूर्ति कर लेता है। उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा बुवाई के समय प्रयोग की जानी चाहिये।

ty izcU/ku% जायद में 3–4 सिंचाई की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई बुवाई के 20 दिन के बाद करनी चाहिये। पहली सिंचाई बहुत जल्द न करें अन्यथा जड़ों तथा ग्रन्थियों का विकास ठीक प्रकार से नहीं होता है। आवश्यकतानुसार 10–15 दिनों के अंतराल पर 2–3 सिंचाईयाँ करें। भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा किए गये परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि बौछारी (स्पिंकलर) विधि द्वारा सिंचाई करने पर जल की बचत के साथ पैदावार भी अधिक प्राप्त होती है। दलहनी फसलों में फलियां बनते समय सिंचाई अवश्य करें।

[kjirokj izcU/ku% खरपतवार फसल उत्पादकता घटाने के साथ ही उसकी गुणवत्ता में भी कमी लाते हैं। खरपतवारों से दलहनी फसलों की पैदावार में औसतन 50–60 प्रतिशत की कमी देखी गई है। समुचित प्रबंधन हेतु पहली सिंचाई के बाद उचित नमी पर पहली निराई खुर्पी द्वारा करें। आवश्यकतानुसार दूसरी निराई पहली के 20–25 दिन बाद करें। तालिका 2 में दलहनी फसलों के लिये संस्तुत खरपतवारनाशी/शाकनाशी रसायन दिये गये हैं।

jksx ,oa jksx izcU/ku% बसंत/ग्रीष्मकालीन उर्द व मूँग में सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती रोग, पीला मोजैक, एन्थ्रेकनोज, वेव झुलसा आदि रोगों का प्रकोप होता है। बसंतकालीन फसल में रोगों का प्रकोप अपेक्षाकृत कम होता है। दलहनी फसलों के प्रमुख कीट–बीमारियाँ एवं नियंत्रण तालिका 3 में दिया गया है।

Qly dh dVkbZ% जब 80 प्रतिशत फलियाँ पक जाएं तब फलियों की तुड़ाई कर फसल को खेत में हैरो से पलट दें। बीज में नमी 14–16 प्रतिशत हो तब फसल की कटाई करनी चाहिए।

mit% औसतन बसंत/ग्रीष्मकालीन उर्द/मूँग की पैदावार 12–15 कुन्टल प्रति हेक्टेयर होती है। जिसकी बाजार में कीमत 50–60 हजार रुपये प्राप्त होती है। खेती का सारा खर्च निकालकर 30–40 हजार रुपये का शुद्ध लाभ किसान भाई कमा सकते हैं। अतः बसंत/ग्रीष्मकालीन ऋतु में उर्द, मूँग की खेती किसानों के लिये आर्थिक रूप से लाभकारी है।

rkfydk 3% nyguh Qlyksa dh izeq[k dhV] chekfj;ksa ,oa fu;a=.k

dhV@chekjh	jksx dk fu;a=.k
फली छेदक	मोनोक्रोटोफॉस 36 डब्लू.एम.एल. या मैलाथियॉन 50 ईसी. एक ली. प्रति हेक्टेयर की दर से फूल आते ही छिड़कें।
फली बीटल	मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण 20–25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकें।
सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती रोग	कार्बेन्डाजिम 50 प्रति या थायोफिनट 1.0 ग्रा. प्रति लीटर के दो छिड़काव करें।
पीला मोजैक	इमिडाक्लोप्रिड की 0.5 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10 दिनों के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करें।
चित्ती जीवाणु रोग	स्टेप्टोसाईक्लिन 20 ग्रा. या ताम्रयुक्त कवकनाशी का 2 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

rkfydk 2% nyguh Qlyksa gsrq lLrqr [kjirokjuk'kh@'kkduk'kh jlk;u

[kjirokjuk'kh	ek=k ¼fd-xk-½ lfØ; rRo@g-	fNM+dko dk le;	fo'ks"k
पेण्डीमिथेलीन 30 प्रतिशत ईसी	2.50–3.0 ली.	बुवाई के तत्पश्चात, अंकुरण पूर्व	अधिकतर एकवर्षीय व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार भी मारता है।
पेण्डीमिथेलीन + इमाजिथापायर	0.750 ली.–1.00 ली.	बुवाई के तत्पश्चात, अंकुरण पूर्व	वृहत श्रेणी शाकनाशी, खरीफ दलहन के लिये उपयुक्त।
कुजालोफॉप इथाइल	50–100 ग्रा.	बुवाई के 15–20 दिनों के मध्य	एकवर्षीय घासों को मारने हेतु कारगर है।
ईमाजिथपायर	600–1000 ली.	बुवाई के 25–30 दिनों बाद	वृहत श्रेणी शाकनाशी
एलाक्लोर (लासे.)	2.00 ली.	बुवाई के 2–3 दिनों बाद	मोंथा कुल वाले खरपतवारों पर नियंत्रण

थर्मल असममित इण्टरलेस्ड पी.सी.आर.: जीनोम अनुक्रम ज्ञात करने की विधि

vkykd 'kDyk] teky vlkjh] ,-ih- flag] ey[kku flag] vkykd nkl]
ehuy jkBkj ,o ,u-ih- flag

जैव–प्रोद्योगिकी की आनुवंशिक अभियांत्रिकी तकनीक के द्वारा पराजीनी फसलों का विकास किया जाता है। पराजीनी फसलों के व्यवसायीकरण के लिए इनके अनुक्रम का पता होना अति आवश्यक होता है ताकि इन फसलों/जीवों का गलत उपयोग न किया जा सके। अज्ञात जीनोम अनुक्रम (पराजीनी फसलों के संदर्भ में) जाने की बहुत सारी विधियाँ या तकनीकियाँ हैं। परन्तु सबसे कारगर एवं आसान तकनीक थर्मल असममित इण्टरलेस्ड पी.सी.आर. है।

इस तकनीक का उपयोग अज्ञात डी.एन.ए. टुकड़ों को अनुक्रमित और विश्लेषण करने के लिए किया जाता है, जो ज्ञात अनुक्रमों के निकट है। इस तकनीक की खोज लिए एवं व्हाइटियर ने 1995 ई. में की थी। यह तकनीक एक जीन के नियामक अनुक्रमों को खोजने और बड़ी जीनोम टैगिंग आबादी में सम्मिलत साइटों की पहचान करने के लिए बहुत अच्छी है। टेल–पी.सी.आर. ''नेस्टेड'' या ''विशिष्ट'' प्राइमर्स का उपयोग करता है। सामान्य पीसीआर में जब तक कि आपके प्राइमर्स बेहद विशिष्ट न हों, कुछ गैर विशिष्ट बाध्यकारी और गैर लक्ष्य अनुक्रमों का प्रवर्धन बहुत संभव है। इससे बचाव के नेस्टेड प्राइमर्स होते हैं जो सामान्य प्राइमरों के क्रम में बंधे होते हैं। टेल पीसीआर में प्राइमरों का एक अतिरिक्त प्राइमर जोड़ा जाता है जो प्राइमरों के पहले सेट के बीच अनुक्रम को बांधता है, जिन्हें एडी प्राइमर्स भी कहा जाता है। इन्हें अन्य प्राइमरों की तुलना में उच्च सांद्रता में जोड़ा जाता है ताकि कुछ चक्रों के बाद अन्य प्राइमरों की तुलना में अधिक पीसीआर उत्पाद का उत्पादन करें।

दो भिन्न प्राइमरों का अलग–अलग एनीलिंग तापमान होता है। पीसीआर अभिक्रिया में नेस्टेड प्राइमर–पसंदीदा प्रतिक्रियाओं के बीच अंतराल में बाहरी प्राइमर–पक्षों के अनुकूल पक्ष को शामिल करता है। यह एक छोर पर एक विशिष्ट प्राइमर और दूसरे पर एक एडी प्राइमर द्वारा अनुक्रमित अनुक्रम बनाता है। उत्पाद अनुक्रमों को पीसीआर के बाद के दौर में बढ़ाया जाता है जिसे तृतीयक प्रतिक्रियाएँ कहा जाता है (नेस्टेड प्राइमर के एक सेट का उपयोग करते हुए)।

एडी प्राइमर्स मुख्यतः ज्ञात अनुक्रमों के करीब बंधे होते हैं। इन कम पिकी प्राइमर्स का उपयोग करके लक्ष्य अनुक्रम वाले अनुक्रमों की संख्या में वृद्धि करते हैं। इस प्रकार गैर लक्ष्यकारी अनुक्रमों की संख्या कम हो जाती है। टेल पीसीआर के सन्दर्भ में स्ट्रिंगेसी शब्द का प्रयोग बहुतायत किया जाता है, इसका तात्पर्य सीधे तौर से तापमान से है। उच्च स्ट्रिंगेसी का मतलब उच्च तापमान का प्रयोग किया जाता है (63^0 सेल्सियस)। उच्च स्ट्रिंगेसी (44^0 सेल्सियस) और कम स्ट्रिंगेसी (30^0 सेल्सियस) का भी उपयोग किया जाता है।

पीसीआर के तीन चरणों, प्राथमिक, माध्यमिक और तृतीयक चरणों के लिए तीन विशिष्ट प्राइमरों का उपयोग किया जाता है। ये सामान्य पीसीआर प्राइमर्स हैं जो लगभग 60^0 सेल्सियस पर कार्य करते हैं और लगभग 20–35 न्यूक्लिमोटाइड लम्बाई में होते हैं। एक अन्य प्राइमर एडी प्राइमर का उपयोग किया जाता है और यह लंबाई में 8–12 न्यूक्लियोटाइड का होता है जो लगभग 45^0 सेल्सियस पर स्किप एवं कूदता है। सभी प्राइमरों का उपयोग उनके रिवर्स समकक्षों के साथ किया जाता है।

माध्यमिक प्रतिक्रिया में नेस्टेड प्राइमरों में से एक और एडी प्राइमर का उपयोग किया जाता है। यहाँ 10–15 टेलिंग कार्यक्रमों का उपयोग किया जाता है। यह अज्ञात अनुक्रम की मध्यम मात्रा बनाता है लेकिन एडी और विशिष्ट प्राइमर्स एक साथ उच्च मात्रा में एक विशिष्ट उत्पाद बनाते हैं। फिर से इन उत्पादों की 1000 गुना पतला कर दिया जाता है और तृतीयक प्रक्रिया के लिए सामग्री के रूप में कार्य करते हैं। प्राथमिक प्रक्रिया में टर्मिनल प्राइमर जोड़ी एवं एडी प्राइमर जोड़ी का उपयोग किया जाता है। कम स्ट्रिंगेसी चक्र के बाद

पांच स्ट्रिंगेसी चक्र का उपयोग किया जाता है। अगला एक टेलिंग चरण है, इसमें 2 उच्च स्ट्रिंगेसी चक्र होते हैं जिसके बाद एक कम स्ट्रिंगेसी चक्र होता है और यह 10–12 बार दोहराया जाता है। यह तीन उत्पादों को बनाता है। सबसे पहले ज्ञात क्रम उच्च स्ट्रिंगेसी चरणों में उत्पादित टर्मिनल विशिष्ट प्राइमर द्वारा प्रतिलिपि बनाते हैं और बड़ी मात्रा में उत्पादित करते हैं। दूसरा, अज्ञात अनुक्रम के विभिन्न हिस्सों में बाध्यकारी एडी प्राइमर के पक्ष में कम स्ट्रिंगेंसी चक्र और मध्यम मात्रा में उत्पाद बनते हैं। तीसरा, एडी प्राइमरों से एक उत्पाद कम स्ट्रिंगेंसी चक्र के दौरान उच्च कठोरता चक्र के उत्पाद को बाध्यकारी बना दिया जाता है लेकिन यह बहुत कम मात्रा में होता है, इन उत्पादों को 1000 गुना पतला करके माध्यमिक प्रतिक्रिया के लिए टेम्प्लेट्स के रूप में उपयोग करते हैं।

तृतीयक प्रतिक्रिया में दूसरा नेस्टैड प्राइमर और एडी प्राइमर का उपयोग किया जाता है और फिर केवल टेलिंग कार्यक्रमों का उपयोग किया जाता है, यह इच्छित उत्पाद की उच्च मात्रा और नगण्य गैर विशिष्ट उत्पादों को बनाता है।

इन उत्पादों का विश्लेषण तृतीयक प्रतिक्रिया के बाद एग्रोस जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस द्वारा किया जाता है, जिसे इल्यूट करके क्लोनिंग एवं अनुक्रमण के लिए उपयोग में लाया जाता है।

Vly ihlhvkj dk e[; mi;kx % इसके मुख्य उपयोग निम्नवत हैं :

1. किसी जीन के 5 प्राइम फ्लैंकिंग क्षेत्र का निष्कर्षण
2. प्रमोटरों के अनुक्रम का निष्कर्षण
3. स्थानान्तरित टी डीएनए की जीनोम में स्थिति का पता लगाना।

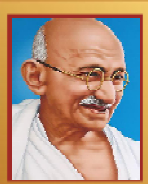

lPpk i;kl dHkh fu"Qy ugh gkrkA

egkRek xka/kh

बीजों के परिवर्धन से पाएं ज्यादा उपज

Vh-,u- frokjh ,oa y[ku oek

अच्छे फसलोत्पादन की कल्पना गुणवत्तायुक्त बीज के प्रयोग से ही की जा सकती है। बीज ही कृषि उत्पादन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण निर्धारक होता है, तथा अन्य कृषि उत्पादन कारकों जैसे उर्वरक, सिंचाई, मृदा, पादप सुरक्षा रसायनों आदि की क्षमता भी बीज की गुणवत्ता पर ही आधारित होती है। मध्यांचल के किसानों की जोतें आकार में छोटी होती हैं तथा इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण वे प्रायः अपने घरों पर रखे गये पिछली फसल के बीज का उपयोग करते हैं जिससे सम्बन्धित फसल में जमाव प्रतिशत कम होने के साथ ही जमे हुए पौधे कमजोर व पीले होते हैं ऐसे में उनसे अच्छी फसल व अच्छी उपज की आशा नहीं की जा सकती है। उपरोक्त परिस्थितियों में बीज परिवर्धन तकनीक का उपयोग कर कृषक अपने पुराने बीजों से ही अच्छा जमाव व स्वस्थ पौधे प्राप्त कर अच्छी फसल व उपज प्राप्त कर सकते हैं। बीज परिवर्धन एक ऐसी तकनीकी है, जिसमें बीजों को बोने से पूर्व विभिन्न प्रचलित विधियों द्वारा उपचारित/परिमार्जित करके उनमें अधिक जमाव क्षमता व स्वस्थ नवोदभिदि देने की क्षमता को जागृत किया जाता है। बीज परिवर्धन से न केवल अच्छा जमाव व अच्छे नवोदभिदि मिलते हैं बल्कि इससे अच्छी फसल व फसल से अच्छा उत्पादन भी प्राप्त होता है। वर्तमान में बीज परिवर्धन की कई विधियाँ प्रचलित हैं जिनका विवरण निम्नानुसार संक्षेप में वर्णित है :

1. बीज प्रारम्भन *(सीड प्राइमिंग)*
2. बीज विलेपीकरण *(सीड कोटिंग)*
3. बीज गुटिकायन *(सीड पिलेटिंग)*

ch t çkjEHku

इस विधि में बीजों को सामान्य जल व विभिन्न रसायनों के घोलों में एक निश्चित अवधि तक डुबोया जाता है जिसके परिणामस्वरूप बीजों द्वारा जल व रयासन का अवशोषण कर लिया जाता है और जमाव क्रिया की प्रारम्भिक अवस्था की जागृति हो जाती है। अब इन बीजों को छाया में सुखाने के उपरान्त तत्काल भी बुवाई कर सकते हैं या कुछ समय के अन्तराल पर भी बुवाई कर सकते हैं। बुवाई के उपरान्त ऐसे बीजों से अच्छा जमाव व स्वस्थ पौधे मिलते हैं। उपरोक्त विधि में मुख्यतया पोटेशियम नाइट्रेट, मैग्नीशियम नाइट्रेट, मैनीटॉल व पॉली एथाइलीन ग्लाईकोल रसायन के 0.3 प्रतिशत घोल का प्रयोग करते हैं। दलहनी फसलों जैसे चना, मटर, अरहर, मूंग, उर्द एवं लोबिया आदि के बीजों को उपरोक्त वर्णित रसायनों के घोल में 5–6 घण्टे तक डुबोने के उपरान्त बुवाई हेतु प्रयोग किया जाता है। इन फसलों में रसायनों के घोल में बीजों को सीधे न डुबोकर बालू में रसायन का घोल मिलाकर बीजों को बालू के अन्दर 6 घंटे की अवधि तक रखा जाना ज्यादा उपयुक्त होता है। इसके उपरान्त इन्हें निकालकर छाया में सुखाते हैं और बुवाई हेतु प्रयोग करते हैं। उपरोक्त विधि द्वारा विभिन्न फसलो में 15–20 प्रतिशत अधिक जमाव व स्वस्थ पौधे विभिन्न वैज्ञानिक परीक्षणों में प्राप्त किये गये हैं।

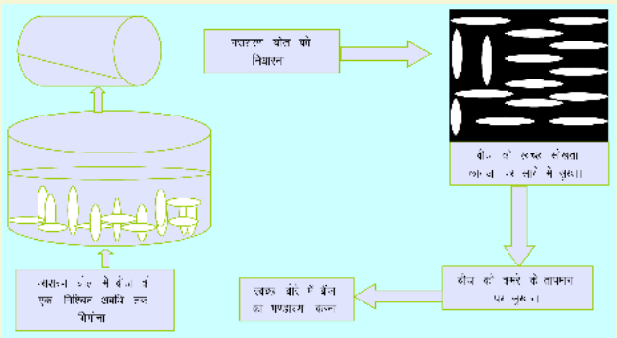

fof/k

- एक चौड़े मुँह का बड़ा बर्तन लेकर उसमें आवश्यक बीज की मात्रा से दोगुना पानी लें।
- उपरोक्त जल में प्रति लीटर पोटेशियम नाइट्रेट रसायन 0.3 प्रतिशत का घोल बनायें।
- पोटेशियम नाइट्रेट घोल में बीज को 5–6 घण्टे डुबो दें।
- 6 घण्टे बाद बीजों को बाहर निकालें तथा छाया में सुखाएं।

- सुखाए हुए बीजों को तत्काल भी बोया जा सकता है अथवा कुछ समयान्तराल पर भी बोया जा सकता है।

cht foyihdj.k

इस बिधि में बीज के ऊपर पॉलीकोट (एक चिपचिपा पदार्थ) के साथ विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों/फफूँदनाशकों/पोषक तत्वों व जैव उर्वरकों को मिलाकर लेपन किया जाता है। बीज लेपन/बीज विलेपीकरण एक यांत्रिक विधि है जिसमें एक विशेष प्रकार की मशीन से जिसे कोटिंग मशीन के नाम से जाना जाता है, द्वारा की जाती है। यह विधि सभी प्रकार के फसल बीजों के साथ अपनायी जा सकती है जिसमें प्रति कि.ग्रा. बीज के साथ 10–12 मि.ली. चिपचिपा पदार्थ पॉलीकोट व 2.5 से 3.0 ग्रा. तक वांछित कीटनाशक/फफूँदनाशक/पोषक तत्व लेकर कोटिंग मशीन व यांत्रिक विधि द्वारा लेपन का कार्य किया जाता है। बीज लेपन क्रिया के उपरान्त बीजों को छाया में सुखाकर तत्काल व कुछ समयान्तराल बाद बुवाई कर सकते हैं। इस प्रकार बीज विलेपीकरण द्वारा हम कीटनाशकों/फफूँदनाशकों/पोषक तत्वों व जैव उर्वरकों को बीज के साथ ही बुवाई के समय दे सकते हैं जिससे अच्छी व स्वस्थ फसल ली जा सकती है। आर्थिक दृष्टिकोण से भी यह विधि सस्ती है। बीजों के विपणन हेतु बीज की पहचान व आकर्षण हेतु बीज विरंजीकरण भी किया जाता है जो कि बाजार में उपलब्ध विभिन्न प्रकार की डाई (विरंजक) का प्रयोग करके ही किया जाता है।

fof/k

बीज विलेपीकरण क्रिया निम्नानुसार करें :

- बीज की आवश्यक मात्रा एक चौड़े मुँह के बर्तन में लें।
- प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से 10–12 मि.ली. गोंद या पॉलीकोट बीज के साथ बर्तन का मुँह ढककर हिलाते हुए मिलाएं।
- गोंदसनित बीजों के ऊपर आवश्यक अवयव जैसे कीटनाशक/फफूँदनाशक/पोषक तत्वों की 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजों के साथ मिलायें और छिड़काव द्वारा बीजों के ऊपर लेपन करें। यह कार्य कोटिंग मशीन द्वारा करना अधिक सुविधाजनक होता है। यांत्रिक विधि में बीजों को कई बर्तन में ढककर हिलाने से गोंदयुक्त बीज होने के कारण उसमें अवयव चिपक जाते है।
- बिलेपित बीजों को छाया में सुखाएं।
- बिलेपित बीजों को तत्काल अथवा कुछ समयान्तराल पर बुवाई करें।

cht xfVdk;u

इस विधि से बीज के ऊपर विभिन्न कीटनाशकों/फफूँदनाशकों/पोषक तत्वों व जैव उर्वरकों आदि को गोंद व *फिलर मैटेरियल* के साथ मिलाकर अलग–अलग आवरण चढ़ाया जाता है। जिससे खुरदरे व असमान आकार के बीजों को समान गोलाई का आकार प्रदान किया जाता है। इस प्रकार बीज गुटिकायन क्रिया द्वारा उपरोक्त वर्णित कृषि निवेशों को एक साथ बुवाई के समय दिया जा सकता है साथ ही गोलाई के बीजाकार के कारण बुवाई भी तेज व आसान बनायी जा सकती है।

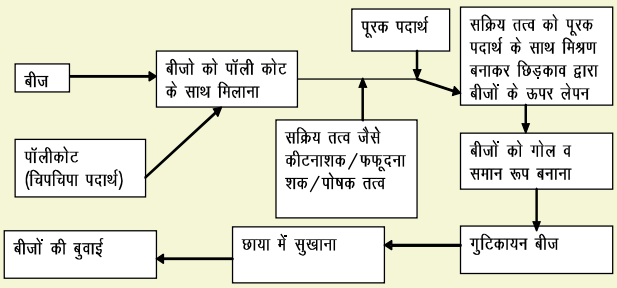

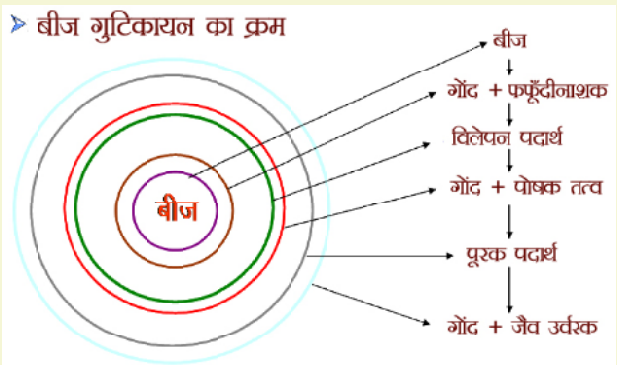

बीज गुटिकायन विधि का चरणबद्ध विवरण निम्नवत है।

अतः कृषक भाइयों को उपरोक्त विधियाँ अपनाकर अच्छी व स्वस्थ फसल द्वारा अधिक फसलोत्पादन सुनिश्चित करना चाहिए। उपरोक्त सभी बीज परिवर्धन विधियाँ आर्थिक दृष्टिकोण से भी बहुत महँगी नहीं हैं। अतः इन्हें अपनाकर लाभ लिया जा सकता है। कुछ दलहनी फसलों में बीज परिवर्धन की तकनीक निम्नानुसार वर्णित है।

Qly dk uke	cht ifjo/ku rduhd	ykHk
अरहर	अरहर के बीजों का जिब्रैलिक अम्ल के 100 पीपीएम व पोटैशियम नाइट्रेट के 0.2 प्रतिशत घोल में 10 से 12 घंटे तक प्रारम्भन करें। बीजों एवं घोल का अनुपात 1:1 (वजन/आयतन) रखें। उपरोक्त अवधि के उपरान्त बीजों को छानकर छाया में सुखाने के बाद बुवाई करें।	अरहर के बीजों के अंकुरण एवं पौधों के ओज में सार्थक स्तर तक नियंत्रण की तुलना में वृद्धि पायी जाती है।
जायद मूंग	जायद मूंग के बीजों का अकार्बनिक लवणों जैसे मैग्नीशियम नाइट्रेट, मैग्नीशियम सल्फेट व पोटैशियम नाइट्रेट के 30 मिलीमोल सान्द्रता के घोल में बीजों को डुबोकर 6 घंटे तक प्रारम्भन करें। बीजों एवं घोल का अनुपात 1:1 (वजन/आयतन) रखें। उपरोक्त अवधि के उपरान्त बीजों को छानकर छाया में सुखायें। तत्पश्चात बुवाई करें।	जायद मूंग के बीजों के जमाव, पौधों की बढ़वार एवं ओज में नियंत्रण की तुलना में सार्थक स्तर तक वृद्धि पायी जाती है।
उर्द	उर्द के बीजों का अकार्बनिक लवणों यथा मैग्नीशियम नाइट्रेट, मैग्नीशियम सल्फेट व पोटैशियम नाइट्रेट के 30 मिलीमोल सान्द्रता के घोल में बीजों को डुबोकर 6 घंटे तक प्रारम्भन करें। बीजों एवं घोल का अनुपात 1:1 (वजन/आयतन) रखें। उपरोक्त अवधि के उपरान्त बीजों को छानकर छाया में सुखायें। तत्पश्चात बुवाई करें।	उर्द के बीजों के जमाव, पौधों की बढ़वार एवं ओज में नियंत्रण की तुलना में सार्थक स्तर तक वृद्धि पायी जाती है।
चना	चने के बीजों को अकार्बनिक लवणों यथा पोटैशियम नाइट्रेट व कैल्शियम नाइट्रेट 0.2 प्रतिशत की दर से 6 घण्टे की अवधि तक बीज प्रारम्भन करें तत्पश्चात बीजों को निकालकर अथवा छानकर छाया में सुखायें। तत्पश्चात बुवाई करें।	चने के बीजों के जमाव, पौधों की बढ़वार एवं ओज में नियंत्रण की तुलना में सार्थक स्तर तक वृद्धि पायी जाती है। साथ ही इन उपचारों का फसल पर भी धनात्मक प्रभाव पड़ता है।

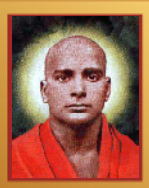

Eku"; viu HkkX; dk Lo;a gh fuekZrk gA

Lokeh jkerhFk

सूक्ष्म जीवाणुओं की जैविक खेती में भागीदारी

iue prqosZnh] ,-ih- flag] vkyksd 'kqDyk] tekyy vlkjh] vkyksd nkl]
ehuy jkBkSj ,oa ,u-ih- flag

खेती में रासायनिक उर्वरकों के अधिकाधिक प्रयोग से अनेक समस्यायें जुड़ी हुई हैं। इसके परिणामस्वरूप जैविक खेती करने तथा जैव उर्वरकों के प्रयोग पर बल दिया जा रहा है। भारत में जैव उर्वरकों की एक बड़ी संख्या बड़े पैमाने पर बाजार में उपलब्ध होने लगी है। किसान अपने खेतों में लगातार इनका प्रयोग कर रहे हैं। इससे मृदा पोषक तत्वों की भरपाई तथा रसायन उर्वरकों पर निर्भरता भी कम हो रही है। रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से उपज में वृद्धि तो होती है परन्तु अधिक प्रयोग से मृदा की उर्वरता तथा संरचना पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है इसलिये रासायनिक उर्वरकों के साथ जैव उर्वरकों के प्रयोग की संभावनायें बढ़ रही हैं। जैव उर्वरकों के प्रयोग से फसल को पोषक तत्वों की आपूर्ति होने के साथ मृदा जिससे उपज में वृद्धि होती है। एक लम्बे समय से इस बात की जानकारी लोगों को थी कि दलहन मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाती है। लेकिन इस बात का वैज्ञानिक प्रदर्शन 19वीं शताब्दी के आधा गुजर जाने के बाद ही हो पाया था। दलहन कुल के पौधों की जड़ों में ही नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिये गाँठें बनती हैं। दलहनी कुल को तीन उपकुलों– मिमोसिडी, सिजलपिनिडी व पैपलिओनिडी में विभाजित किया गया है। मिमोसिडी के 90 प्रतिशत, सिजलपिनिडी के 23 प्रतिशत व पैपलिओनिडी के 97 प्रतिशत सदस्यों की जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिये गाँठें बनती हैं।

tSo moZjd d: i e l{etho% जैव उर्वरक एक प्रकार के जीव होते हैं जो मृदा की पोषण गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। ये जीवाणु, कवक तथा साइनोबैक्टीरिया के मुख्य स्रोत होते हैं। द्विबीजपत्री (लैग्यूमिनस) पादपों की जड़ों पर स्थित ग्रंथियों का निर्माण राइजोबियम के सहजीवी सम्बन्ध द्वारा होता है। यह जीवाणु वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को स्थरीकृत कर इसे कार्बनिक रूप में परिवर्तित कर देते हैं जिससे पादप इसका प्रयोग पोषकों के रूप में करते हैं। अन्य जीवाणु (जैसे एजोस्पाइरिलम तथा एजोटोबैक्टर) मृदा में मुक्तावस्था में रहते हैं। यह भी वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को स्थिर कर सकते हैं। इस प्रकार मृदा में नाइट्रोजन अवयव बढ़ जाते हैं। मित्र कवक (जैसे माइकोराइजा) पादपों के साथ सहजीवी सम्बन्ध स्थापित करते हैं। ग्लोमस जीनस के बहुत से सदस्य माइकोराइजा बनाते हैं। इस सहजीवन में कवकीय सहजीवी मृदा से फास्फोरस का अवशोषण कर उसे पादपों में भेज देते हैं। ऐसे सम्बन्धों से युक्ति पादप कई अन्य लाभ जैसे मूलवातोढ़ रोगजनक के प्रति प्रतिरोधकता, लवणता तथा सूखे के प्रति सहनशीलता तथा कुलवृद्धि तथा विकास प्रदर्शित करते हैं। सायनोबैक्टीरिया स्वपोषित सूक्ष्मजीव है जो जलीय तथा स्थलीय वायुमण्डल में विस्तृत रूप से पाये जाते हैं। इनमें बहुत से वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को स्थिरीकृत कर सकते हैं, जैसे – ऐनाबीना, नॉसटॉक, ऑसिलेटोरिया आदि। धान के खेत में साइनोबैक्टीरिया महत्वपूर्ण जैव उर्वरक की भूमिका निभाते हैं। नील हरित शैवाल भी मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढ़ा देते हैं। जिससे उसकी उर्वरता बढ़ जाती हैं।

tSo moZjd% फसलों में जैव उर्वरकों का इस्तेमाल करने से वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन पौधों को (अमोनिया के रूप में) सुगमता से उपलब्ध होती है तथा भूमि में परिवर्तित होकर पौधों को आसानी से उपलब्ध होते हैं। चूँकि सूक्ष्मजीव प्राकृतिक हैं, इसलिये इसके प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है और पर्यावरण पर विपरीत असर नहीं पड़ता। जैव उर्वरकों को रासायनिक उर्वरकों के पूरक के रूप में (न कि विकल्प रूप में) प्रयोग करके बेहतर परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। वास्तव में जैव उर्वरक विशष एवं किसी नमी धारक धूलीय पदार्थ (चारकोल, लिग्नाइट आदि) में मिलाकर जैव उर्वरक तैयार किये जाते हैं। यह प्रायः 'शुद्ध कल्चर' के नाम से बाजार में उपलब्ध होता है जो कि एक प्राकृतिक उत्पाद है। इनका प्रयोग विभिन्न फसलों में नाइट्रोजन एवं फास्फोरस की आंशिक पूर्ति हेतु किया जा सकता है। इनके प्रयोग से भूमि के भौतिक व जैविक गुणों में सुधार होता हैं व उसकी उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है। जैविक खेतों में जैव उर्वरकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भारत में सर्वप्रथम लेग्यूम राइजोबियम सहजीविता का अध्ययन श्री एन.वी. जोशी ने किया था। इसका सर्वप्रथम वाणिज्यिक उत्पादन वर्ष 1956 में शुरू हुआ। भारत सरकार की 9वीं पंचवर्षीय योजना के

दौरान कृषि मंत्रालय ने जैव उर्वरकों के उपयोग तथा विकास के लिये राष्ट्रीय परियोजना के माध्यम से वास्तविक रूप से इनको बढ़ावा देने के साथ–साथ लोगों में जागरूकता उत्पन्न करने का काम शुरू किया।

जैव उर्वरकों के प्रकार

1. **एजोला :** एजोला टेरिडोफाइटा समूह की एक तैरती हुई फर्न है। सामान्यतः एजोला धान के खेत या उथले पानी में उगाई जाती है। यह तेजी से बढ़ती है। एजोला की पंखुड़ियों में एनाबिना नामक नील हरित काई के जाति का एक सूक्ष्मजीव होता है जो सूर्य के प्रकाश में वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करता है और हरे खाद की तरह फसल को नाइट्रोजन की पूर्ति करता है। एजोला की विशेषता यह है कि यह अनुकूल वातावरण में 5 दिनों में ही दोगुना हो जाता है। यदि इसे पूरे वर्ष बढ़ने दिया जाए तो 300 टन से भी अधिक एजोला प्रति हेक्टेयर पैदा किया जा सकता है यानि 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्राप्त होता है। एजोला में 3.5 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा कई तरह के कार्बनिक पदार्थ होते हैं जो भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाते हैं। एजोला के उपयोग से धान की फसल में 5–15 प्रतिशत उत्पादन वृद्धि सम्भावित रहती है। धान के खेत में इसका उपयोग सुगमता से किया जा सकता है। 2–4 इंच पानी से भरे खेत में 10 टन ताजा एजोला को पोराई के पूर्व डाल दिया जाता है। इसके साथ इसके ऊपर 30–40 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट का छिड़काव भी कर दिया जाता है। इसकी वृद्धि के लिये 30–35^{0} सेल्सियस का तापक्रम उत्पन्न अनुकूल होता है।
2. **नील हरित शैवाल :** नील हरित शैवाल (सायनोबैक्टीरिया) एक जीवाणु होता है जो प्रकाश संश्लेषण से ऊर्जा उत्पादन करते हैं। यहाँ जीवाणु के नीले रंग के कारण इसका नाम सायनो (यूनानी अर्थ नीला) पड़ा है। सायनोबैक्टीरिया विटामिन 12ए ऑक्सिन और एस्कार्बिक अम्ल स्रावित करते हैं। जो धान के पौधों की वृद्धि में सहायक होते हैं। नील हरित शैवाल वायुमण्डलीय नाइट्रोजन की पूर्ति करता है। यह जैविक खाद नाइट्रोजन युक्त रासायनिक उर्वरक का सस्ता व सुलभ विकल्प है जो धान की फसल को न सिर्फ 25–30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर पूर्ति करता है, बल्कि उस धान के खेत में नील हरित काई के अवशेष से बने खाद द्वारा उसकी गुणवत्ता व उर्वरता कायम रखने में मददगार साबित होती है।
3. **एजोटोबैक्टर :** एजोटोबैक्टर अतिसूक्ष्म हिटेरोट्रॉफिक जीवाणु है। यह स्वतंत्र रूप से रहने वाला सूक्ष्म व वासवीय जीवाणु होते हैं जो बिना किसी सहजीवन के नाइट्रोजन का मुक्त रूप से जैविक स्थिरीकरण करते हैं। यह केवल राइजोस्फियर में पाया जाता है। राइजोप्लेन में यह गुण सामान्यतः नहीं पाया जाता है। मूल स्राव जिसमें अमीनो अम्ल, शर्करा, विटामिन्स और कार्बनिक अम्ल होते हैं, एजोटोबैक्टर के गुणन में सहायक होता है। यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण के साथ–साथ पौधों के विकास में काम आने वाले पादप वृद्धिकारक हार्मोन (इण्डोल एसिटिक एसिड एवं जिब्रेलिक अम्ल) और कुछ एंटीबायोटिक्स का भी स्राव करते हैं। जिसका बीजों के अंकुरण पर अच्छा प्रभाव पड़ता है एवं जड़ों में होने वाली बहुत सारी बीमारियों की रोकथाम होती है। एटोजोबैक्टर सभी गैर–दलहनी फसलों में प्रयोग किया जा सकता है। जिसमें अन्न वाली फसलें, सब्जियाँ, कपास तथा गन्ना मुख्य हैं। सर्वप्रथम बिजेरिक ने एटोजोबैक्टर जीवाणुओं की खोज एवं उसका वर्णन किया था।
4. **एजोस्पाइरिलम :** यह भी नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाला एक सूक्ष्म जीवाणु है जो गैर दलहनी पौधों के लिये लाभकारी होता है। यह सूक्ष्म जीवाणु भी जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण के साथ–साथ वृद्धिकारक हॉर्मोस का स्राव करते हैं जो अंकुरण से लेकर पौधे की वृद्धि तक में लाभकारी होते हैं।
5. **फास्फेट घुलनशील सूक्ष्मजीव (पी.एस.एम.) :** यह उन सूक्ष्म जीवों का समूह है जो कि मृदा में उपस्थित अघुलनशील फास्फेट में परिवर्तित कर उर्वरक की कार्य क्षमता को बढ़ाता है। क्षारीय मृदा में फास्फेट की उलब्धता कम होती है। यह सूक्ष्म जीवाणु पूरी प्रक्रिया को उल्टा करने में काफी लाभकारी हैं। जब पीएसएम को रॉक फास्फेट के साथ उपयोग किया जाता है तो सिंगल सुपर फास्फेट की तरह फास्फेटिक उर्वरक की लगभग 50 प्रतिशत तक आवश्यकता को कम किया जा सकता है। फास्फेट को घुलनशील बनाने वाले जीवाणु का कल्चर बाजार में पीएसबी कल्चर के नाम से मिल जाता है। यह कल्चर फास्फोरस घोलने वाले

जीवाणुओं का यौगिक होता है। इससे बिना प्रदूषण किए उत्पादन एवं उत्पादकता दोनों बढ़ती है तथा साथ ही मृदा का स्वास्थ्य भी बढ़ जाता है। पीएसबी के प्रयोग से फास्फोरस तत्व को पौधे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। इसका प्रयोग करने से 10–20 प्रतिशत उत्पादन में वृद्धि होती है और साथ–ही–साथ मिट्टी में अनुपलब्ध फास्फोरस के उपलब्ध अवस्था में आ जाने से 30–40 प्रतिशत फास्फोरस उर्वरक की बचत की जा सकती है। यह एक अनिवार्य एरोबिक, जैविक रूप से नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाला सूक्ष्म जीवाणु है जो अपने मेटाबोलिक गतिविधियों के द्वारा अम्ल का स्राव करता है। सभी जैविक रूप से नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले सूक्ष्म जीवाणु नाइट्रोजिनेज नामक एन्जाइम की मदद से हवा में उपस्थित 78 प्रतिशत स्थिरीकरण सामान्य नाम एवं दाब पर मेटाबोलिक प्रक्रिया के माध्यम से करते हैं। विभिन्न तरह के जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं में ऑक्सीजन के प्रति संवेदनशलता अलग–अलग होती है। एसीटोबैक्टर गन्ने की पैदावार के लिये उपयोगी है।

6- **,fDVukjkbtk%** एक्टिनोमाइसिट्स समूह के जीवाणु जो अदलहनी वृक्ष की जड़ों में गाँठें बनाकर नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते हैं, एक्टिनोराइजा कहलाते हैं। फ्रन्किया इसका बहुत अच्छा उदाहरण हैं। फ्रन्किया 8 विभिन्न पादप कुलों की 280 से भी ज्यादा वृक्ष जातियों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करता है।

to mojdk dh i;kx fof/k % जैविक उर्वरकों को चार विभिन्न तरीकों से खेती में प्रयोग किया जाता हैं :

1- **cht mipkj fof/k %** जैव उर्वरकों के प्रयोग की यह सर्वोत्तम विधि है। आधा लीटर पानी में लगभग 50 ग्राम गुड़ या गोद मिलाकर उबाल लेते हैं। ठंडा होने के बाद उसमें जैव उर्वरक (200 ग्राम) को अच्छी तरह मिलाकर घोल बना लेते हैं। इस घोल को 10 कि.ग्रा. बीज पर छिड़ककर अच्छी तरह मिला लेते है जिससे प्रत्येक बीज पर इसकी परत चढ़ जाए। इसके उपरान्त, बीजों को छायादार जगह में सुखा लेते हैं। उपचारित बीजों की बुवाई सूखने के तुरन्त बाद कर लेनी चाहिए।

2- **ikS/k mipkj fof/k%** धान तथा सब्जी वाली फसलें जिनके पौधों की रोपाई की जाती है जैसे टमाटर, फूलगोभी, पत्तागोभी, प्याज इत्यादि फसलों में पौधों की जड़ों को जैव उर्वरकों द्वारा उपचार किया जाता है। इसके लिये किसी चौड़े व छिछले बर्तन में 5–7 लीटर पानी में एक कि.ग्रा. एजोटोबैक्टर व एक कि.ग्रा. पीएसबी 250 ग्राम गुड़ के साथ मिलाकर घोल बना लेते हैं। इसके उपरान्त नर्सरी से पौधों को उखाड़कर तथा जड़ों में मिट्टी साफ करने के पश्चात् 50–100 को बंडल में बाँधकर जीवाणु खाद के घोल में 10 मिनट तक डुबा देते हैं।

3- **dUn mipkj %** गन्ना, आलू, अदरक, घुइयाँ (अरबी) जैसी फसलों में जैव उर्वरकों के प्रयोग हेतु कन्दों को उपचारित किया जाता है। एक कि.ग्रा. एजोटोबैक्टर व एक कि.ग्रा. पीएसबी जैव उर्वरकों को 20–30 लीटर घोल में मिला लेते हैं। इसके उपरान्त कन्दों को 10 मिनट तक डुबो देते हैं। इसके बाद तुरन्त रोपाई कर देते हैं।

4- **enk mipkj fof/k %** 5–10 कि.ग्रा. जैव उर्वरक व 70–100 कि.ग्रा. मिट्टी या कम्पोस्ट का मिश्रण तैयार करके रात भर छोड़ दें। इसके बाद अन्तिम जुताई पर खेत में मिला देते हैं।

to mojdk d mi;kx l ykHk

1. इनके प्रयोग से उपज में लगभग 10–15 प्रतिशत की वृद्धि होती है।
2. यह रासायनिक खादों विशेष रूप से नाइट्रोजन और फास्फोरस की जरूरत का 20–25 प्रतिशत तक पूरा करते हैं।
3. इनके प्रयोग से अंकुरण शीघ्र होता है तथा कल्लों की संख्या में वृद्धि होती है।
4. जमीन की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं।
5. इनके प्रयोग से गन्ने में शर्करा की, मक्का व आलू में स्टार्च तथा तिलहनों में तेल की मात्रा में वृद्धि होती है।

tfod mojdk d i;kx e lko/kkfu;k

1. जैव उर्वरक को छाया में सूखे स्थान पर रखें।
2. फसल के अनुसार ही जैव उर्वरक का चुनाव करें।
3. उचित मात्रा का प्रयोग करें।
4. जैव उर्वरक खरीदते समय उर्वरक का नाम, बनाने की विधि व फसल का नाम इत्यादि ध्यान से देख लें।
5. जैव उर्वरक का प्रयोग समाप्ति की तिथि के पश्चात् न करें।

जीवों में प्रोटीन संश्लेषण

vthr iirki flg] vkykd 'kDyk] jfo jtu flg] vkykd nkl ,o ehuy jkBkj

प्रोटीन एक महत्वपूर्ण जैव अणु है जो जीवों के शरीर में होने वाली अनेक जैव रसायनिक क्रियाओं से सम्बन्धित होते हैं। रासायनिक रूप में प्रोटीन अमीनों अम्लों के बहुलक हैं। जैविक रूप से केवल 20 प्रकार के अमीनों अम्ल ही महत्वपूर्ण हैं जो प्रोटीन की पॉलीपेप्टाइड श्रृंखलाओं के निर्माण में भाग लेते हैं।

प्रोट्रीन संश्लेषण के समय विभिन्न अमीनों अम्लों के अणु निश्चित संख्या में एक निश्चित क्रम में व्यविरिथत होते हैं। डीएनए की पॉलीन्यूक्लियोटाइड श्रृंखला में न्यूक्लियोंटाइडों का क्रम पॉलीपेप्टाइड श्रृंखला में अमीनो अम्ल के अनुक्रम को निर्धारित करता है। डीएनए में स्थित तीन नाइट्रोजिनस के क्षारों का अनुक्रम पॉलीपेप्टाइड श्रृंखला के एक विशिष्ट अमीनों अम्ल को कोडित करता है। इसे 'त्रिक कोड' कहते हैं। अतः प्रोटीनों का जैव संश्लेषण प्रायः सीधे डीएनए के नियन्त्रण में होता है और जिन जीवों में डीएनए का अभाव होता है उनमें यही कार्य आरएनए के नियन्त्रण में होता है।

सन् 1958 ई. में क्रिक के अनुसार डीएनए विभिन्न प्रकार के आरएनए एवं एमआरएनए के अनुलेखन द्वारा प्रोटीन संश्लेषण के लिए सूचनाएँ प्रेषित करता है। तत्पश्चात् एमआरएनए में न्यूक्लियोटाइडों के क्रम का अमीनों अम्लों के क्रम के रूप में अनुवाद होता है। इसे सूचनाओं का एकदिशिक प्रक्रम या सेण्ट्रल डोग्मा कहते हैं।

ikVhu l'y"k.k dh fØ;k fof/k % इसके मुख्य दो पद हैं, प्रथम अनुलेखन एवं द्वितीय अनुवाद।

vuy[k % यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा डीएनए की प्रतिलिपि बनाई जाती है, एमआरएन में जिसमें प्रोटीन संश्लेषण की आवश्यक जानकारी होती है। अनुलेखन दो चरणों में होता है। सबसे पहले पूर्व मैसेन्जर आरएनए का गठन आरएनए पॉलीमरेज एन्जाइमों की भागीदारी के साथ होता है। यह प्रक्रिया वाटसन क्रिक आधार जोड़ी पर निर्भर करती है, और परिणामस्वरूप आरएनए का एकमात्र स्ट्रैंड मूल डीएनए अनुक्रम का विपरीत–पूरक है। प्री–मैसेंजर आरएनए को आरएनए स्प्लाइसिंग नामक प्रक्रिया में वांछित एमआरएनए अणु का उत्पादन करने के लिए संपादित किया जाता है।

ihelUtj vkj,u, dk xBu % अनुलेखन प्रक्रिया डीएनए प्रतिकृति के समानान्तर है। डीएनए प्रतिकृति के साथ, अनुलेखन होने से पहले डबल हेलिक्स का निर्माण होना चाहिए, यह प्रक्रिया आरएनए पॉलीमरेज एन्जाइम के द्वारा होती है। डीएनए प्रतिकृति के विपरीत जिसमें तारों की प्रतिलिपि बनाई जाती है, केवल एक स्ट्रैंड लिखित होता है। जीन युक्त स्ट्रैंड को सेंस स्ट्रैंड जबकि पूरक को एन्टीसेन्स स्ट्रैंड कहा जाता है।

एन्टीसेन्स स्ट्रैण्ड के साथ एनटीपी संरेखित होते हैं। आरएनए पॉलीमरेज एक पूर्व–मैसेंजर आरएनए अणु बनाने के लिए एनटीपी से मिलकर बनता है जो एन्टीसेन्स डीएनए स्ट्रैण्ड के एक क्षेत्र के पूरक है। जब आरएनए पॉलीमरेज एंजाइम बेस के तीन गुना तक पहुंच जाता है तब अनुलेखन समाप्त होता है, जिसे स्टॉप सिग्नल के रूप में जाना जाता है।

fjolZ vuy[ku % रिवर्स अनुलेखन में, आरएनए, डीएनए में रिवर्स अनुलेखित होता है। रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेज एंजाइमों द्वारा उत्प्रेरित यह प्रक्रिया आरएनए को आनुवांशिक सामग्री के रूप में उपयोग करने के लिए मानव एचआईवी सहित रेट्रोवायरस की अनुमति देती है। इन एंजाइमों का उपयोग पीसीआर जैसी तकनीकों के लिए आरएनए को डीएनए में परिवर्तित करने की अनुमति मिलती है।

vuokn % अनुलेखन में गठित एमआरएनए को केन्द्रक से कोशिकाद्रव्य में उपस्थित राइबोसोम में ले जाया जाता है। यह कोशिकांग प्रोटीन संश्लेषण को निर्देशित करता है। मैसेन्जर आरएनए सीधे तौर पर इस प्रक्रिया में भाग नहीं लेते हैं इसके लिए स्थानान्तरण आरएनए की आवश्यकता होती है। जिस प्रक्रिया में एमआरएनए, टीआरएनए की सहायता से प्रोटीन संश्लेषण को निर्देशित करता है, उसे अनुवाद कहा जाता है।

राइबोसोम आरएनए एवं प्रोटीन अणुओं का एक बहुत बड़ा परिसर है। एमआरएनए के प्रत्येक तीन बेस कोडॉन के

रूप में जाने जाते हैं, तथा एक कोडॉन में एक विशेष अमीनो अम्ल की जानकारी होती है। चूंकि एमआरएनए राइबोसोम के माध्यम से गुजरता है अतः प्रत्येक कोडॉन वाटसन–क्रिक आधार जोड़ी द्वारा एक विशिष्ट टीआरएनए अणु के एंटीकोडॉन के साथ संबंधित होता है। इस टीआरएनए अणु में 3 टर्मिनस पर एक अमीनो अम्ल होता है जो बढ़ती प्रोटीन श्रृंखला में शामिल होता है, इस समय टीआरएनए को राइबोसोम से निष्कासित कर दिया जाता है।

प्रत्येक अमीनो अम्ल का अपना विशेष टीआरएनए होता है। प्रत्येक अमीनों अम्ल अपने टीआरएनए से 3 ओएच समूह के माध्यम से एक एस्टर बनाने के लिए जुड़ा होता है जो प्रोटीन संश्लेषण के दौरान एक नया पेप्टाइड बान्ड बनाने के लिए बढ़ती प्रोटीन श्रृंखला के टर्मिनल अमीनो–अम्ल के α समूह के साथ प्रतिक्रिया करता है। अमीन्स की एस्टर के साथ प्रतिक्रिया आमतौर पर अनुकूल है। लेकिन राइबोसोम में इसके प्रतिक्रिया की दर में काफी वृद्धि हुई है। प्रत्येक स्थानान्तरण आरएनए अणु में एक अच्छी तरह से परिभाषित तृतीयक संरचना होती है, जिसे एन्जाइम टीआरएनए सिंथसेस द्वारा पहचाना जाता है। इस प्रकार से प्रोटीन संश्लेषण की प्रक्रिया होती है।

i.lUUkrk ,d vueky [ktkuk g] NkVh&NkVh ckrk ij mls u yVu nA
Lokeh foodkuUn

सक्षम कोशिका के निर्माण का सिद्धान्त

vYdk dfV;kj] vkykd nkl] ehuy jkBkj ,o ,u-ih- flag

सक्षम कोशिकाए जीवाणु कोशिकाओं का उपयोग करने के लिए तैयार होती हैं, जिनमें परिवर्तित सेल दीवारे पाई जाती है, जिसके द्वारा विदेशी डीएनए आसानी से पारित किया जा सकता है। अधिकांश प्रकार की कोशिकाएं डीएनए को प्रभावी ढंग से तब तक नहीं ले सकती जब तक कि उन्हें सक्षम बनाने के लिए विशेष रासायनिक या विद्युत उपचार नहीं दिया जाता है। डीएनए के लिए पारगम्य जीवाणु बनाने के लिए कैल्शियम आयन विधि का उपयोग किया जाता है। एक विद्युत क्षेत्र में कोशिकाओं का संक्षिप्त संपर्क भी बैक्टीरिया को डीएनए लेने की अनुमति देता है व इस विधि एवं प्रक्रिया को इलेक्ट्रोप्रोशन कहा जाता है।

हलांकि कुछ प्रकार के जीवाणु स्वाभाविक रूप से परिवर्तनीय होते हैं जिसका अर्थ है कि वे विशेष प्रकार की आवश्यकता के बिना पर्यावरण स डीएनए ले सकते हैं। कैल्शियम क्लोराइड विधि द्वारा कैल्शियम की उच्च सांद्रता युक्त समाधान से निलंबित करके जीवाणु कोशिकाओं में छिद्र बनाकर सक्षम कोशिकाओं का निर्माण किया जाता है।

ikdfrd l{ke lsy ¼dkf'kdk½

बैक्टीरिया अपने पर्यावरण से तीन तरीकों से डीएनए लेने में सक्षम है जिन्हें संयोग, परिवर्तन व ट्रासडक्शन विधियाँ कहते हैं। परिवर्तन विधि द्वारा डीएनए सीधे कोशिका में प्रवेश करता है। प्राकृतिक सक्षम कोशिका पहली बार फ्रेडरिक ग्रिफिथ द्वारा 1928 में खोजी गई थी जो कि बैक्टीरिया में अत्यधिक विनियमित है।

2- df=e l{ke dkf'kdk

कृत्रिम सक्षम कोशिका एक प्रयोगशाला प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोशिकाओं को डीएनए के पारगम्य बनाया जाता है, ऐसी स्थितियों के साथ जो आमतौर पर प्रकृति में नहीं होते हैं। यह विधि तुलनात्मक रूप से आसान और सरल है और बैक्टीरिया की अनुवांशिक इंजीनियरिंग में उपयोग की जाती है। भड़ल एवं हिगा वैज्ञानिकों ने कैल्शियम क्लोराइड विधि द्वारा सक्षम कोशिकाओं का निर्माण किया। सक्षम कोशिकाओं के बनाने के लिए मुख्य दो विधियाँ हैं –

1. कैल्शियम क्लोराइड विधि।
2. इलेक्ट्रोप्रोशन विधि।

dfY'k;e DykjkbM fof/k }kjk l{ke lsy dk fuek.k

1. एक एलबी प्लेट पर ई. कोलाई कोशिका (डी.एच 5α) को स्ट्रैक करें इसे 37° सेल्सियस तापमान पर रात भर के लिए रख दें।
2. 50 मिलीलीटर एलबी मीडिया को एक फोनिकल ट्यूब में ले (यदि आवश्यक हो तो एंटीबायोटिक का चयन करें) इसके उपरान्त इसे 37° सेल्सियस तापमान पर रात भर के लिए रख दें।
3. अगले दिन 50 मिलीलीटर कल्चर को उपकेन्द्रित ट्यूब में डाल कर 3,000 आरपीएम व 4° सेल्सियस तापमान पर सेन्ट्रीफ्यूज करें। इस सभी प्रक्रिया कके लिए कोशिकाओं का ठंडा होना आवश्यक है।
4. सेन्ट्रीफ्यूज होने के उपरान्त ऊपर सतह पर तैरने वाले द्रव को फेक दें और उसमें 15 मिलीलीटर $MgCl_2$ + $CaCl_2$ (0.08 M $MgCl_2$ + 0.1 M $CaCl_2$) का मिश्रण डालें।
5. आधे घण्टे के उपरान्त उसे दुबारा उपकेन्द्रित मशीन (Centrifuge) में रखकर 5,000 आरपीएम व 4° सेल्सियस तापमान से सेन्ट्रीफ्यूज करें।
6. सेन्ट्रीफ्यूज के बाद तरल द्रव (सतह पर तैरने वाला) को फेक दें व उसमें 1 मिलीलीटर ग्लिसरॉल (50% ग्लिसरॉल) व 1 मिलीलीटर (मैग्नीशियम क्लोराइड + कैल्शियम क्लोराइड) का मिश्रण डालें।
7. इस प्रक्रिया के उपरान्त इस मिश्रण को 1.5 मिली ली. Eppendroff ट्यूब पर लें (अधिकतम 1 ट्यूब में 1 मि. ली. मिश्रण लें)।
8. सभी Eppendroff ट्यूब को नाइट्रोजन में डुबाएं, 10 मिनट उपरान्त ट्यूब को बाहर निकाल लें।
9. उसके बाद इसे –80° सेल्सियस तापमान पर एक बन्द डिब्बे में सुरक्षित रखें।
10. इस प्रकार सक्षम सेल का निर्माण $CaCl_2$ विधि द्वारा पूरा होता है।

मसूर की खेती से पाएं अधिक लाभ

Mh-ih- iVy

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन फसल उत्पादन के लिए एक गंभीर चुनौती है। जलवायु परिवर्तन के कारण मौसम में होने वाले अस्वभाविक बदलाव व इसके खेती पर पड़ने वाले गंभीर प्रभावों को ध्यान में रखते हुए ऐसी फसलों की प्रजातियों तथा उत्पादन तकनीकों को अपनाना चाहिए जो बदलते मौसम के अनुकूल हों। खेती में ऐसे पर्यावरण–परक तरीकों को अहमियत देनी चाहिए जिनसे हम अपनी मृदा की उत्पादकता को बरकरार रख सकें व अपने प्राकृतिक संसाधनों को बचा सकें। हमारे देश में खेती का एक बड़ा हिस्सा वर्षा आधारित है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में दलहनी फसलों की खेती बहुत प्रचलित है। रबी मौसम में उगाई जाने वाली दलहनी फसलों में मसूर का एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसके पौधों की संरचना ऐसी होती है कि ये अपने जीवनकाल में पानी का कम से कम उपयोग करते हैं। पौधा झाड़ीनुमा, छोटे आकार की तथा पत्तियां भी छोटी होती हैं। यही कारण है कि अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा मसूर की प्रति इकाई उत्पादन में पानी की कम मात्रा की आवश्यकता होती है। दलहनी फसलें पाले तथा ठण्ड के लिए अति संवेदनशील होती हैं, फिर भी यह अन्य रबी दलहनी फसल जैसे– मटर व चना की अपेक्षा अधिक ठण्ड को सहन कर सकती है। कम सर्दी वाले इलाकों में इसकी उपज कम मिलती है क्योंकि इस फसल को प्रारंभिक अवस्था में ठंड तथा पकते समय कम तापक्रम की आवश्यकता होती है।

मसूर की खेती करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखकर अच्छी उपज लेने के साथ–साथ अच्छा लाभ भी कमा सकते हैं :

mi;ä enk dk puko

देश के ज्यादातर हिस्सों में मसूर की खेती वर्षा आधारित होती है, इसलिए ऐसी मिट्टी वाले खेतों का चुनाव करना चाहिए जिसमें नमी का पर्याप्त मात्रा में संरक्षण हो। दोमट से भारी भूमि इसके लिए उपयुक्त है। हल्की एवं क्षारीय भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है। हलकी भूमि में नमी का संरक्षण कम होने के कारण कई बार सिंचाई की आवश्यकता होती है जिसका विपरीत असर पौधों की बढ़वार व उपज पर पड़ता है तथा फसल की उत्पादन लागत भी बढ़ जाती है। मिट्टी का पीएच मान 6.5 से 7.0 के बीच होना चाहिए तथा जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए अन्यथा पौधों की बढ़वार एवं उपज पर प्रतिकूल असर पड़ता है।

elj dh [krh d fy, mi;Dr tyok;q

यह रबी मौसम की फसल है अतः ठंडी जलवायु इसके लिए उपयुक्त होती है परन्तु अत्यंत ठण्ड एवं पाला पड़ने वाले स्थानों पर इसकी उपज पर प्रतिकूल असर पड़ता है। बीज के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ने से उपज की गुणवत्ता प्रभावित होती है तथा बाजार में उचित मूल्य नहीं मिलता है।

cokbZ dk le;

असिंचित अवस्था में खरीफ की फसल की कटाई के बाद नमी उपलब्ध रहने पर अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक मसूर की बुवाई करनी चाहिए। सिंचित अवस्था में बुवाई मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक की जा सकती है। मध्य नवम्बर के बाद उपज कम मिलती है क्योंकि मध्य फरवरी के बाद तापक्रम में वृद्धि होने लगती है जिसके दुष्प्रभाव के कारण समय से पहले फसल पकने लगती है जिससे बीज पूरी तरह भरता नहीं है तथा आकार भी छोटा हो जाता है अतः समय पर बुवाई अति आवश्यक है।

[kr dh r;kjh o cokbZ

सामान्य रूप से खेत में पर्याप्त नमी न होने की दशा में बुवाई से पहले सिंचाई अवश्य करें। खेत में जब उचित ओट आ जाये तब दो–तीन बार हल्की जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लें तथा बीज की बुवाई करके पाटा चलाकर खेत को समतल करें जिससे नमी संरक्षित रहे। मसूर के लिए बारीक व भुरभुरी मिट्टी की आवश्यकता होती है जिससे अंकुरण अच्छा होता है।

मसूर की खेती प्रायः असिंचित क्षेत्रों में धान की फसल के बाद की जाती है। खेत में नमी की मात्रा अधिक होने पर धान की खड़ी फसल में उतेरा विधि से बीज को छिड़ककर भी बोया जा सकता है। इससे मसूर की बुवाई समय पर हो

जाती है तथा लागत कम लगने के कारण लाभ अधिक होता है। पूर्वी–उत्तर प्रदेश एवं बिहार के कुछ भागों में जहाँ धान की लम्बी अवधि की प्रजातियाँ बोई जाती हैं व धान की कटाई कम्बाइन मशीन से की जाती है वहां पर धान की कटाई के बाद मशीन से कटे फसल अवशेषों को खेत से निकाल दें या हलके रूप से जला दें ताकि बीज आसानी से जमीन की सतह पर पहुंच जाय। खेत में पानी भरकर उतेरा विधि की तरह ही बीज को छिड़ककर बोया जा सकता है। इससे मसूर की बुवाई समय पर हो जाएगी तथा उपज भी प्रभावित नहीं होगी।

cht dh ek=k ,o cokbl dk rjhdk

अच्छी उपज पाने के लिए प्रति इकाई क्षेत्रफल में पौधों की संख्या का पर्याप्त होना अतिआवश्यक है। इसके लिए बड़े दाने वाली प्रजाति का 50–60 कि.ग्रा. एवं छोटे दाने वाली का 35–40 कि.ग्रा. बीज प्रति हे. बोना चाहिए। बीज की बुवाई कतार में करनी चाहिए। समय पर बुआई करने पर कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. व बुवाई में देरी होने पर कतार से कतार की दूरी 25 से.मी. रखनी चाहिए। बीज को 8–10 से.मी. की गहराई पर बोना चाहिए।

cokbl ls igys enk mipkj

गर्मी में खेत की गहरी जुताई करें। मृदाजनित रोगों से बचने के लिए ट्राईकोडरमा विरिडी या ट्राईकोडर्मा हारजायानम के 2 कि.ग्रा. कल्चर को 100 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद में मिलाकर नम करके एक सप्ताह तक ढककर अँधेरे स्थान में रखें इसके पश्चात बुवाई से पहले खेत में फैलायें।

chtkipkj

बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 2 ग्राम थिरम एवं 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम को मिलाकर प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। तत्पश्चात 5 ग्राम राइजोबियम एवं 5 ग्राम पीएसबी कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से मिलाकर थोड़ा पानी छिड़ककर अच्छी तरह मिलाएं जिससे कल्चर बीज से चिपक जाए। इस तरह बीजोपचार के बाद बीज को छाया में सुखाकर बुवाई करें।

[kkn ,o moljd

मृदा परीक्षण के आधार पर की गई अनुशंसा के अनुसार ही खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। गोबर की खाद या कम्पोस्ट की 5 से 10 टन मात्रा का प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। गोबर की खाद प्रयोग करने पर उर्वरकों की आधी मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए। सामान्य रूप से 20–25 कि.ग्रा. नत्रजन व 40–50 कि.ग्रा. स्फुर का प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

flpkbl

सामान्यतः मसूर की फसल असिंचित अवस्था में ली जाती है किन्तु मिट्टी में पर्याप्त नमी न होने की दशा में बुवाई पलेवा लगाकर करनी चाहिए। इससे नमी बनी रहती है तथा अंकुरण भी अच्छा होता है। आवश्यकता पड़ने पर एक सिंचाई फूल आने के पहले (बुवाई के 40–45 दिन बाद) देने से उपज अच्छी होती है। यदि जाड़े की बरसात हो जाए तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है।

fujkbl&xMkbl

बुवाई के 50 दिनों तक खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए 2 लीटर फ्लक्लोरेलिन को 600–700 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से अंतिम जुताई के बाद छिड़क कर मिला दें अथवा पेंडीमेथलीन 1 कि.ग्रा. को 1000 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के 48 घंटे के अंदर छिड़काव करना चाहिये।

jkx fu;=.k

मसूर की फसल में मुख्य रूप से उकठा रोग का प्रकोप अधिक होता है, इसके लिए मृदा उपचार एवं बीजोपचार अति

elj dh mUur fdLe

fdLe	idu dh vof/k ¼fnu½	vkSlr mit ¼d-@g-½	fo'k"krk,¡
के 75	130–135	16–22	बड़ा दाना, उकठा रोग के लिए सहनशील
डीपीएल 62	130–135	22–25	बड़ा दाना, उकठा रोग के लिए सहनशील
आईपीएल 406	125–130	24–26	बड़ा दाना, उकठा रोग प्रतिरोधी
डीपीएल 15	125–130	22–25	रस्ट रोग प्रतिरोधी
आईपीएल 316	120–125	16–18	रस्ट प्रतिरोधी एवं उकठा रोग के लिए सहनशील
आईपीएल 220	120–125	14–16	दानों में लौह तत्व एवं जस्ते की अधिक मात्रा, रस्ट एवं उकठा रोग प्रतिरोधी

आवश्यक है। उकठा प्रतिरोधी जातियों की बुवाई करें। फसल–चक्र अपनाने से भी यह रोग कम हो जाता है। कभी–कभी गेरुआ रोग का भी प्रकोप होता है। इसके नियंत्रण के लिए 12.5 ग्राम डायथेन एम 45 प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें।

dhV fu;a=.k

फॉस 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

dVkbZ ,oa xgkbZ

फसल परिपक्वता की अवस्था में आने पर हरे से भूरे रंग की होने लगती है। लगभग 90 प्रतिशत पौधे भूरे रंग के हो जाने पर फसल की कटाई सुबह के समय, जब तक वातावरण में नमी हो, करनी चाहिए। इससे पकी हुई फलियों के फटने से दानों का नुकसान कम से कम होता है। फसल को काटकर खलिहान में अच्छी तरह सुखाना चाहिए तत्पश्चात मड़ाई करके दानों को साफ कर लेना चाहिए। दानों को अच्छी तरह सुखाकर ही भंडारण करना चाहिए। इसके लिए मसूर के दाने को दातों के बीच रखकर काटने से यदि कट की आवाज आये तो भंडारण के लिए उचित मानना चाहिए।

mit

उन्नत कृषि तकनीकों को अपनाकर मसूर की अच्छी उपज पाने के साथ–साथ अच्छा लाभ भी प्राप्त कर सकते हैं। बोई गई किस्म के अनुसार बारानी क्षेत्रों में 10–12 कु./हे. व सिंचित फसल से 15–20 कु./हे. तक की उपज आसानी से प्राप्त कर सकते हैं।

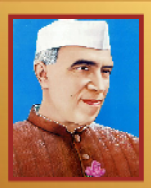

dN ugh djkx] rk dN ugh cukxA

i- Tkokgj yky ug:

जीनोम एडिटिंग की क्रिसपर कैस 9 तकनीकी

'kkyh Bkdj] vkykd 'kDyk] jfo jatu flag] vkykd nkl]
ehuy jkBkj ,oa ,u-ih- flag

जीनोम एडिटिंग एक प्रकार की आनुवांशिक अभियांत्रिकी है, जिसमें एक जीव के जीनोम में डीएनए डाला जाता है, नष्ट किया जाता है या बदल दिया जाता है। इसके लिए अभियांत्रिक न्यूक्लिएजों या आण्विक कैंची का उपयोग किया जाता है। ये न्यूक्लिएज या एन्जाइम इच्छित स्थानों पर उस जगह की विशेषता के अनुसार डबल स्ट्रैंड के भेदन का काम करते हैं। डबल स्ट्रैण्ड ब्रेक्स के सिरों को जोड़कर या पुर्नसंयोजन के माध्यम से त्रुटिमुक्त किया जाता है, जिससे लक्षित उत्परिवर्तन हासिल होते हैं। जीनोम एडिटिंग की क्रिसपर कैस 9 तकनीक इस कार्य के लिए बहुत कारगर सिद्ध हुई है। यह एक क्रांतिकारी जीन एडिटिंग तकनीक है जिसे वैज्ञानिकों ने प्रकृति से लिया है। क्रिसपर (क्लस्टर्ड रेगुलरली इण्टरस्पेस्ड शॉर्ट पैलिन्ड्रोमिक रिपीट्स), डीएनए के हिस्से हैं, जबकि कैस 9 एक एंजाइम है। बैक्टीरिया (जीवाणु) उनका उपयोग विषाणु के हमलों को निष्क्रिय करने के लिए करते हैं।

fØlij dkl 9 dh fØ;kfof/k

क्रिसपर जीनोम को स्कैन कर सही स्थान की तलाश करता है और फिर कैस–9 प्रोटीन का आण्विक कैंची के रूप में उपयोग कर डीएनए को काटता है। कैस–9 इण्डोन्यूक्लिएज को गाइड मार्गदर्शन आरएनए एक विशेष अनुक्रम की ओर निर्देशित करता है ताकि यह संपादित किया जा सके। जब कैस–9 लक्षित अनुक्रम को काटता है तब कोशिकाएँ क्षति को पूरा करने के लिए एक बदले हुए संस्करण को मूल अनुक्रम से प्रतिस्थापित करती हैं।

अन्य जीन एडिटिंग विधियों के विपरीत, यह सस्ती, त्वरित, आसान, सुरक्षित एवं सटीक है, क्योंकि यह आरएनए–डीएनए बेस पेयरिंग पर आधारित है, न कि उन प्रोटीनों की इंजीनियरिंग पर आधारित है जो किसी विशेष डीएनए अनुक्रम से जुड़ते हैं।

हाल ही में संयुक्त राज्य अमेरिका के वैज्ञानिकों द्वारा मानव भ्रूण में जीन एडिटिंग का सफल प्रयोग किया गया। इस प्रयोग की सफलता के परिणामस्वरूप अब विज्ञान के समक्ष तकरीबन 10 हजार आनुवंशिक गड़बड़ियों का इलाज करने संबंधी रास्ते खुलने की उम्मीद दिखी है। इसी प्रकार जीन एडिटिंग तकनीक का उपयोग फसल सुधार में भी किया जा रहा है। ऐसा माना जाता है कि इस तकनीक के माध्यम से फसलों की गुणवत्ता एवं उपज में वृद्धि की जा सकती है। भारत में इस संदर्भ में बहुत सारी परियोजनाएँ संचालित हो रहीं हैं।

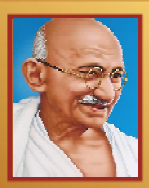

lPpk i;kl dHkh fu"Qy ugh gkrkA

egkRek xka/kh

पानी पिएँ तो रखें ध्यान

cã çdk'k* ,oa xkfoUn dkUr JhokLro

ऑक्सीजन के पश्चात, मानव जीवन के लिए सबसे आवश्यक तत्व पानी ही है जो मानव शरीर के अस्तित्व के लिए परम आवश्यक है। मानव शरीर में प्रत्येक कोशिका, ऊतक तथा तंत्र के सुचारु रूप से कार्य करने हेतु जल अत्यंत आवश्यक है। मानव शरीर के भार का दो तिहाई अंश जल ही होता है। मनुष्य के फेफड़े व यकृत में 81%, गुर्दे व रक्त में 83%, मस्तिष्क, हृदय व मांसपेशियों में 75% तथा हड्डियों में 22% जल ही होता है। जल की पर्याप्त मात्रा के बिना मानव शरीर स्वस्थ नहीं रह सकता।

ekuo 'kjhj d fy, ikuh ihuk vko';d D;k\

Årdk] e#nM o tkMk dh lqj{kk& पानी प्यास बुझाकर शरीर के तापमान का नियमन करता है। पानी शरीर के ऊतकों को नम रखता है। यह आँख, नाक व मुंह जैसे संवेदनशील अंगों में नमी के उचित स्तर को बरकरार रखने के साथ रक्त, हड्डियों व मस्तिष्क में भी नमी की उचित मात्रा बनाए रखने में सहायक होता है। इसके अतिरिक्त, पानी मेरुदंड की भी रक्षा करता है तथा सभी जोड़ों में पानी लुब्रीकेंट्स व कुशन के रूप में कार्य करता है।

'kjhj ls vif'k"V fudkyus esa lgk;d& शरीर में पर्याप्त पानी की आपूर्ति शरीर से पसीना, मूत्र व मल जैसे अपशिष्ट पदार्थों को शरीर से उत्सर्जित करने में सहायक होती है। हमारे गुर्दे व यकृत भी आंतों की तरह पानी की सहायता से अपशिष्ट पदार्थ निकालते हैं। कब्ज को रोकने तथा पाचन तंत्र में खाये हुए भोजन को आगे बढ़ाने में भी जल की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यद्यपि जल की मात्रा बढ़ाने से ही कब्ज के ठीक होने के प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं।

ikpu esa lgk;d& हमारा खाया भोजन मुंह की लार से ही पचना आरंभ हो जाता है तथा उस लार का आधार पानी ही है। लार में उपस्थित एंजाइम्स खाए गए भोजन व क्रेब पदार्थों को पाचन के लिए तोड़ते हैं जिससे लवण व अन्य पोषक तत्व रक्त में घुल जाते हैं। भोजन के उचित पाचन से ही लवण व अन्य पोषक तत्व शरीर के लिए उपलब्ध हो पाते हैं। घुलनशील रेशों के लिए जल एक अत्यंत आवश्यक तत्व है। पानी की मदद से रेशों के आसानी से घुलनशील होने के कारण ही मल आसानी से उत्सर्जित हो पाता है।

ikuh 'kjhj dk fMgkbMªV gksus ls jksdus esa enndxkj& गहन शारीरिक श्रम या एक्सरसाइज करने, गर्मी में पसीना आने अथवा बुखार, उल्टी व दस्त होने पर हमारे शरीर से प्राकृतिक शारीरिक हाइड्रेशन को बरकरार रखने के लिए हमें अधिक मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है। उपरोक्त रोगों के अतिरिक्त, मूत्राशय के संक्रमण तथा मूत्र की नाली में पथरी होने पर भी चिकित्सकों द्वारा अधिक पानी पीने की सलाह दी जाती है। गर्भवती तथा दुग्धपान कराने वाली महिलाओं को भी सामान्य से अधिक मात्रा में पानी पीने की अनुशंसा की जाती है।

ty dh de ek=k ihus ls gkrh gS D;k ij'kkfu;k\

पर्याप्त मात्रा में जल पीने से शरीर में पानी की कमी नहीं होती है। पानी को कम मात्रा में पीने से डिहाइड्रेशन की समस्या हो जाती है जिससे शरीर के विभिन्न अंग अपना सामान्य कार्य नहीं कर पाते हैं। जल के कारण हमारे शरीर के भार में 1–2% की कमी होने पर हमें थकावट प्रतीत होने लगती है। बच्चों व बूढ़े व्यक्तियों में जल की कमी से स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अधिक प्यास लगना, थकान, सिरदर्द, मुंह का सूखना, पेशाब का कम मात्रा में आना या न आना, मांसपेशियो में कमजोरी व चक्कर आना जैसे लक्षण, शरीर में जल की कमी को परिलक्षित करते हैं। पानी की कमी के कारण जोड़ों का दर्द, कब्ज, माइग्रेन, त्वचा पर दाग–धब्बे व मुहाँसे होना, बालों का झड़ना, पेट व आंतों से जुड़ी समस्याओं का लगातार बने रहना, भोजन का उचित प्रकार से नहीं पचना, शरीर में कमजोरी या आलस्य का बने रहना, रात में अच्छी नींद न आना, गुर्दों से जुड़ी बीमारियाँ, त्वचा में सूखापन व झुर्रियां होने के कारण गैस/यूरिक अम्ल का

*भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ 226 002

बढ़ना, मोटापा, शरीर की नसों में कमजोरी जैसी 40 से अधिक बीमारियाँ कम पानी पीने अथवा पानी से जुड़ी गलतियों के कारण होती हैं।

जल की पर्याप्त मात्रा उचित समय व उचित तरीके से पीने से आँखें, हड्डियाँ व बाल जवान बने रहते हैं। पेट सही रहता है व त्वचा चमकती रहती है। इतना ही नहीं, ठीक तरह से पानी पीने से कई तरह की बीमारियों से बचा जा सकता है। सिर्फ पानी पीकर भी आप एक्सरसाइज/वर्कआउट किए बिना भी आप एक माह में अपने वजन को 5 कि.ग्रा. तक कम भी कर सकते हैं।

शरीर के लिए पानी की इतनी अधिक आवश्यकता होने के कारण इससे जुड़े नियमों के बारे में जानकारी होना नितांत आवश्यक हो जाता है क्योंकि पानी पीने का तरीका, पानी पीने का समय तथा पानी पीने की मात्रा हमारे शरीर पर अच्छा व बुरा दोनों प्रकार का प्रभाव डालती है।

ty dh deh dk çHkkfor dju oky dkjd dku\

- एक्सरसाइज व अन्य कोई शारीरिक श्रम करने पर, पसीना निकलने की स्थिति में शरीर से हो रही जल की कमी की क्षतिपूर्ति हेतु अतिरिक्त पानी पीने की आवश्यकता होती है। पानी की अतिरिक्त मात्रा शारीरिक श्रम के दौरान पसीना निकलने की मात्रा व अवधि द्वारा निर्धारित होती है।
- गरम व नम वातावरण में पसीने के अधिक उत्सर्जन होने के कारण अधिक मात्रा में जल पीने की आवश्यकता होती है। जाड़े में हीटर/ब्लोअर के प्रयोग से भी त्वचा से नमी का ह्रास हो जाता है। 2,500 मीटर (8,200 फीट) से अधिक अक्षांश पर पेशाब अधिक मात्रा में आती है तथा सांस तेजी से चलने की दशा में हमारे शरीर के जल का अधिक मात्रा में उपयोग हो जाने के कारण पानी को अधिक मात्रा में पीने की आवश्यकता पड़ती है।
- ज्वर, उल्टी व दस्त आने की दशाओं में शरीर से जल का ह्रास तेजी से हो जाता है। ऐसी दशाओं में जल की अधिक मात्रा का सेवन करना चाहिए। ऐसी दशा में चिकित्सक ओआरएस घोल के सेवन की भी सलाह देते हैं। ब्लैडर में संक्रमण अथवा पेशाब की नली में पथरी आदि होने की समस्या होने पर अधिक मात्रा में पानी का सेवन करना आवश्यक होता है।
- गर्भवती व दुग्धपान कराने वाली महिलाओं को भी सामान्य रूप से अधिक पानी पीना चाहिए जिससे शरीर में पानी की कमी न हों। कुछ संस्थानों द्वारा गर्भवती महिलाओं को प्रतिदिन 10 कप (2.3 लीटर) तथा दुग्धपान कराने वाली महिलाओं को लगभग 13 कप (3.1 लीटर) जल पीने की सलाह दी जाती है।

ty dh fdruh ek=k gkrh gS çfrfnu vko';d\

दिन–भर में एक व्यक्ति को कितना पानी पीना चाहिए, इसके लिए कोई स्पष्ट नियम नहीं है। दिन–भर में पानी पीने की मात्रा व्यक्ति के शरीर के आकार, शारीरिक क्रिया–कलापों व मौसम पर निर्भर करती है। प्रतिदिन हमारे शरीर का पानी पेशाब व पसीने के माध्यम से हमारे शरीर से लगातार निकलता रहता है। इस प्रकार हम प्रतिदिन 2–3 लीटर पानी अपने शरीर से बाहर निकाल देते हैं। इसी कारण प्रतिदिन एक पुरुष को लगभग 2.5 से 3.5 लीटर तथा एक महिला को 2.5 से 3.0 लीटर पानी पीने की सलाह दी जाती है। अधिकांश व्यक्ति प्यास लगने पर ही पानी पीते हैं। सामान्यतया हमारे शरीर की पानी की आवश्यकता हमारे द्वारा पिए जाने वाले पानी, चाय, दूध, कॉफी, रस व सूप आदि से ही पूरी हो जाती है। अतः आप पर्याप्त पानी पी रहे हैं अथवा नहीं, इसकी जांच के लिए उसे आपको अपने मूत्र का रंग देखना चाहिए। यदि उसका रंग साफ है तो आप पर्याप्त मात्रा में पानी पी रहे हैं। यदि मूत्र का रंग पीला या गाढ़ा है तो इसका अर्थ है कि आपको अधिक पानी पीने की आवश्यकता है।

पसीना निकलने, अपशिष्ट पदार्थों के उत्सर्जन तथा फेफड़ों से हवा के उत्सर्जन के साथ वाष्प के रूप में जल निकलने से होने वाली क्षति की पूर्ति हेतु पर्याप्त पानी पीना आवश्यक होता है। गर्मी के मौसम में अधिक शारीरिक श्रम करने, अधिक मात्रा में चाय, दूध, कॉफी, रस, जूस व अल्कोहल का सेवन करने, बुखार, उल्टी व दस्त होने पर शरीर से जल की अधिक मात्रा में क्षति होने के कारण अधिक मात्रा में पानी पीने की आवश्यकता होती है। प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम 8–10 गिलास पानी पीने की आवश्यकता होती है। शारीरिक श्रम करने पर, विशेषतया गर्मी के मौसम में पानी की मात्रा 3–4 गिलास बढ़ा देना चाहिए। यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति के लिए

पीने वाले पानी की आदर्श मात्रा भिन्न–भिन्न होती है।

ikuh ihu d mfpr le; g D;k\

- सवेरे उठने के बाद 1–2 गिलास गुनगुना पानी पीने से आपके परिसंचरण तंत्र से फ्री रेडिकल्स आसानी से निकल जाते हैं तथा रात में शरीर द्वारा हुई चयपचय के दौरान प्रयुक्त ऊर्जा के अवशेष से मुक्ति मिल जाती हैं।
- जब आप पर्याप्त मात्रा में पानी पिए होते हैं तो पेट भी खाने के लिए तैयार रहता है। पानी से टेस्ट बड्स सक्रिय हो जाती हैं तथा आमाशय की भीतरी भित्ति भी नम हो जाती है जिससे अम्लीय भोजन भी अधिक परेशान नहीं करता। पानी का एक गिलास मुंह को नम करता है तथा पूर्व में खाये गए बचे भोजन, ड्रिंक्स या धूम्रपान के स्वाद को साफ कर देता है।
- यदि आपको भूख लग रही हैं तो आप ताजे जल का एक बड़ा गिलास पानी पीकर देखें कि आप वस्तुतः भूखे हैं या आपको प्यास लग रही थी। नाश्ते से पूर्व अथवा नाश्ते के साथ पानी पीने से पेट जल्दी भर जाता है जिससे कुछ कैलोरी बच जाती हैं।
- तापमान, नमी तथा शरीर में फ्लुड के स्तर के आधार पर आपको डिहाइड्रेशन से बचने हेतु वर्कआउट से पूर्व तथा बाद में पानी पीने की आवश्यकता होती है।
- गरम मौसम में लू तथा ठंडे मौसम में शीतदंश से बचाने हेतु पर्याप्त मात्रा में पानी पीना आवश्यक होता है क्योंकि आपके शरीर का परिसंचरण तापमान की दोनों सीमाओं पर सुरक्षात्मक भूमिका निभाता है जिसके सही कार्य करने के लिए पानी अत्यंत आवश्यक होता है।
- वर्कआउट व एक्सरसाइज करने के बाद पसीने व मूत्र से हुई पानी की क्षतिपूर्ति के लिए पर्याप्त पानी पीने की आवश्यकता होती है। पानी की यह मात्रा आपके भार, स्वास्थ्य, गर्म व नर्म दशाओं में एक्सरसाइज की समयावधि पर निर्भर करती है। परंतु एक साथ बहुत अधिक मात्रा मैं पानी नहीं पीना चाहिए अथवा आपके पेट में क्रेम्प्स हो सकते हैं।
- यदि आप अस्पताल, कार्यालय या विद्यालय में बीमार व्यक्तियों के संपर्क में हैं तो सामान्य से अधिक पानी पीने से आपके शरीर से जीवाणु व विषाणु निकल जाते हैं। अच्छी तरह से हाइड्रेटेड शरीर में जीवाणु व विषाणु रुक नहीं पाते तथा आपके शरीर में बहुगुणन भी नहीं कर पाते।
- बीमार होने पर पानी सहित अधिक फ्लूड्स लेने से शरीर शीघ्र स्वस्थ हो जाता है। अधिकांश लोगों के लिए प्रतिदिन 8 गिलास पानी पीना बेहतर होता है परंतु अन्य फ्लूड्स जैसे चाय, कॉफी, रस व सूप पीने पर पीने वाले पानी की मात्रा कम हो सकती है।
- यदि आपको दिन में नींद आ रही हो और आप सोने की स्थिति में नहीं हैं, तो एक या दो गिलास पानी पीना उचित रहता है। थकान भी शरीर में पानी की कमी दर्शाती है। शरीर में तेजी से चलने की क्षमता के कारण पानी आपके मस्तिष्क में शीघ्रता से पहुँचकर किसी महत्वपूर्ण बैठक अथवा किसी कार्य को करने की अंतिम तिथि के पूर्व आपको बूस्ट प्रदान करता है।

ge ikuh dc&dc ihuk pkfg,\

प्रत्येक मनुष्य को उचित समय पर पानी अवश्य पीना चाहिए। उत्तम स्वास्थ्य के लिए पानी से प्राप्त होने वाले आवश्यक तत्वों से सम्पूर्ण लाभ उठाने के लिए दिन का आरंभ चाय के स्थान पर ठंडे पानी से करना चाहिए। प्यास लगने या न लगने पर भी सुबह–सुबह एक से दो गिलास (500 मि.ली.) पानी अवश्य पीना चाहिए। सुबह–सुबह खाली पेट पानी पीने से आंतों की अच्छी सफाई हो जाती है व रात्रि में जीभ व मुंह में जमी लार पेट में पहुँच जाती है। प्रातःकाल मुंह में बनने वाली लार बहुत सारे लाभकारी एंजाइम्स की उपस्थिति के कारण अत्यंत लाभदायक होती है। सुबह–सुबह खाली पेट पानी से यह लाभकारी एंजाइम्स पेट में पहुँचकर हमारे शरीर को लाभ पहुंचाते हैं। एक गिलास में 250 मि.ली. पानी आता है। इस प्रकार एक व्यक्ति को प्रतिदिन 2.5–3.0 लीटर पानी अवश्य पीना चाहिए।

सुबह खाली पेट – 2 गिलास

नाश्ते के आधे घंटे पहले व आधे घंटे बाद – 1–1 गिलास

सुबह के भोजन के 40 मिनट पहले व 40 मिनट बाद – 1–1 गिलास

शाम को एक–एक घंटे के अंतराल पर – 1–1 गिलास

शाम के भोजन के 40 मिनट पहले व 40 मिनट बाद – 1–1 गिलास

इसके अतिरिक्त, प्रतिदिन एक्सरसाइज या वर्कआउट

करने के बाद भी पानी की अतिरिक्त मात्रा का सेवन करना चाहिए। यदि आपको अपने रोजगार के दौरान घूमना–फिरना पड़ता है अथवा शारीरिक श्रम करना पड़ता है तो अपने कार्यालय की कार्य अवधि के दौरान भी आधे से एक गिलास पानी 3–4 बार पिया जा सकता है।

ge ikuh dc ugh ihuk pkfg,\

पानी पीने के उचित समय पर तो पानी पीना ही चाहिए परंतु इससे भी आवश्यक यह है कि गलत समय पर पानी न पिया जाए क्योंकि गलत समय पर पानी पीने से हमारे शरीर पर बहुत अधिक दुष्प्रभाव पड़ता है। कभी भी भोजन करने के तुरंत बाद पानी नहीं पीना चाहिए। खाना खाने के तुरंत बाद पानी पीने से खाने का पाचन सही तरह से नहीं हो पाता, इसका कारण यह है कि भोजन का पहला निवाला खाते ही हमारे मुंह में पाचक रस बनना प्रारम्भ हो जाता है। यह पाचक रस ही अपनी गर्मी से भोजन को पचाता हैं। खाना खाने के तुरंत बाद पानी पीने से खाने के पचने की प्रक्रिया धीमी हो जाती है, पेट में गॅस बनने लगती है जो शरीर के अन्य अंगों में भी फैलकर जमा होने लगती है जिससे पेट, सिर व जोड़ों के दर्द जैसी समस्याएँ उत्पन्न होने लगती हैं। खाना के उचित तरह से न पचने से शरीर में एसीडिटी की समस्या होने लगती है व शरीर का कोलेस्टेरोल व यूरिक अम्ल भी बढ़ने लगता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि भोजन करने के तुरंत बाद पानी पीने से नाना प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। अतः भोजन करने के लगभग 40 मिनट पश्चात ही पानी पीना चाहिए। यदि आप बहुत सूखा भोजन कर रहे हैं तो भोजन के दौरान अथवा बाद में दो–तीन घूंट पानी पी सकते हैं। सुबह के खाना खाने के उपरांत बहुत अधिक प्यास लगने पर छाछ, नींबू पानी, मौसमी फलों का रस आदि पिया जा सकता है। इसी प्रकार रात के खाना खाने के उपरांत बहुत अधिक प्यास लगने पर पानी के स्थान पर दूध का सेवन किया जा सकता है। सुबह खाली पेट पेशाब करने से पूर्व पानी पीना उचित होता है परंतु कभी भी पेशाब करने के तुरंत बाद पानी नहीं पीना चाहिए। इसका कारण यह है कि पेशाब करने पर हमारे शरीर के अंग तेजी से सिकुड़ते हैं। ऐसी अवस्था में तुरंत पानी पी लेने से पेशाब न रोक पाने व पानी के ठीक से न पचने की समस्या उत्पन्न हो जाती है तथा पानी पीते ही बार–बार पेशाब लगने लगती है। चाय अथवा कॉफी जैसे गर्म पेय पदार्थ पीने के तुरंत बाद पानी नहीं पीना चाहिए। ऐसा करने पर गले व टॉन्सिल्स पर दुष्प्रभाव प्रभाव पड़ता है। ठंडी प्रकृति वाले फल, खट्टे फल, पानी की अधिक मात्रा वाले फल खाने के तुरंत बाद पानी नहीं पीना चाहिए क्योंकि पानी पीने से वे फल पेट में ठीक से नहीं पच पाते तथा इससे सर्दी, खांसी व पेट खराब होने की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

i;kIr ek=k e ikuh ihu gr fdu ckrk dk vo'; j[k /;ku\

- प्रातःकाल उठते ही 1–2 गिलास पानी अवश्य पीना चाहिए।
- सदैव पानी की बोतल अपने साथ रखनी चाहिए। सोते समय भी पानी की बोतल बेड के पास रखकर सोना चाहिए जिससे रात में जागने व प्यास लगने पर तुरंत पानी पी सकें।
- सदैव शुद्ध व साफ पानी ही पीना चाहिए। यदि आप कुएँ या भूमि के जल पर निर्भर रहते हैं तो आपको प्रक्षेत्र से बहे जल, औद्योगिक लेंडफिल्स व अन्य संभावित संदूषित रसायनों से बचने हेतु बोतल बंद पानी बाजार से खरीदना श्रेयस्कर है। यदि आप बोतलबंद पानी नहीं खरीदना चाहते हैं तो एक फिल्टर खरीदकर उसका पानी प्रयोग करें। इससे 99% संदूषित पदार्थ पेय जल से निकलने से पानी शुद्ध हो जाता है।
- यदि आप पेयजल की सुरक्षा से आश्वस्त नहीं हैं तो आप अपने स्थानीय सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा से पानी परीक्षण तंत्र से संदर्भ हेतु संपर्क कर सकते हैं। विशेषज्ञ आपके पानी का परीक्षण करके आपको इसे उपचारित करने की विधि की सलाह दे सकते हैं।
- प्यास लगने के पहले ही पानी पी लेना चाहिए।
- अधिक शर्करायुक्त पेय के प्रयोग से बचना चाहिए।
- पीनेवाले पानी में नींबू के रस को मिलाकर पीना लाभदायक रहता है।
- बगैर शर्करायुक्त फ्लेवर्ड ड्रिंक्स का ही प्रयोग करना चाहिए।
- खीरा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूजा, अनार, संतरा, टमाटर, लेट्टुस व सेलरी जैसे अधिक पानी वाले फलों का अधिक सेवन करना चाहिए।
- रस को कभी गरम करके नहीं पीना चाहिए तथा इसमें कभी भी शर्करा व नमक डालकर नहीं पीना चाहिए,

अपितु इसे प्राकृतिक अवस्था में ही पीना चाहिए।

- कभी भी बहुत गरम पानी में नींबू या शहद डालकर नहीं पीना चाहिए। हमेशा गुनगुने पानी में ही नींबू या शहद मिलाकर पीना चाहिए।
- सब्जी व फलों के रस अलग–अलग पीने चाहिए।
- टिन में पैकेज्ड रसों में प्रीजरवेटिव्स की उपस्थित के कारण इसके प्रयोग से बचना चाहिए।

झील, नदी या गलत तरीके से बने कुएं व ठीक से नहीं खुदे कुएं व जमीन से कम से कम 6 मीटर के भूजल स्तर से जलरोधन केसिंग के न होने से सभी पानी के स्त्रोत असुरक्षित होते हैं। इन असुरक्षित स्त्रोतों का जल कभी भी संदूषित हो सकता है। अतः यह पीने के लिए उपयुक्त नहीं होता है। संदूषित जल से स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने से गंभीर बीमारी अथवा मौत तक हो सकती है। स्वास्थ्य पर पड़ने वाला प्रभाव व्यक्ति की आयु व सामान्य स्वास्थ्य, संदूषित पदार्थ के प्रकार व मात्रा तथा ऐसा पानी पीने की अवधि पर निर्भर करता है। संदूषित पानी पीने का प्रभाव तुरंत भी हो सकता है व कुछ वर्षों बाद भी हो सकता है। संदूषित पानी पीने से गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल व पेट से जुड़े रोग, उल्टी, दस्त, मिचली, पेट–दर्द, डिहाइड्रेशन व ऐंठन जैसी समस्याएँ पैदा हो सकती हैं।

thok.k

जल के परीक्षण में जीवाणुओं की उपस्थिति जल को पीने के अयोग्य बनाती है। परंतु जीवाणु की उपस्थिति न होने पर भी पानी पीने के लिए उपयुक्त नहीं हो जाता। वर्षा के जल व बहुत दिनों तक सूखा रहने पर, कुएं में टूट–फूट होने पर व जलग्रहण क्षेत्र में परिवर्तन होने से कुएँ का पानी पीने के लिए उपयुक्त नहीं रहता। यदि आपके पानी में ई–कोलाई पाया जाता है इसका अर्थ है कि उस पानी में सीवर का पानी या पशुओं का मल मिल रहा है। वातावरण में पाये जाने वाले कॉलीफौर्मस समूह के जीवाणुओं की उपस्थिति दर्शाती है कि आपके जल में जीवाणु, विषाणु व परजीवियों से होने वाले रोग के कारक मौजूद हैं।

निजी कुएं जीवाणुओं व रसायनों जैसे नाइट्रेट्स से संदूषित हो सकते हैं। पानी में नाइट्रेट का समावेश कृषि क्रियाओं जैसे उर्वरक देने या सैप्टिक तंत्रों के रिसाव से हो जाता है। एक लीटर पानी में 10 मि.ग्रा. से अधिक नाइट्रेट होने पर शिशुओं में "ब्लू बेबी सिंड्रोम" रोग हो जाता है जिसमे शरीर के रक्त में ऑक्सीजन ले जाने की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। खेती में प्रयुक्त होने वाले खरपतवार व कीटनाशी रसायनों से भी पीने का जल प्रदूषित हो जाता है। कई बार प्रदूषित जल भी रंगहीन, गंधहीन व स्वादहीन होता है। पानी में सीसा, फ्लोराइड, आर्सनिक, रेडियम, रेडॉन, दवाईयां, खरपतवारनाशी व कीटनाशी रसायन, मल–मूत्र, सूक्ष्मजैविक रोगकारक, परजीवी, विषाणु तथा पैट्रोरसायन जैसे संदूषित पदार्थ पानी को प्रदूषित कर देते हैं।

पानी पीने के साथ–साथ कुल्ला करने से पूर्व भी पानी का स्वास्थ्य के प्रति सुरक्षित होना अवश्य सुनिश्चित कर लें। खाना पकाने वाले बर्तनों को भी स्वच्छ पानी से ही धोना चाहिए। कभी भी अनुपचारित पानी का सेवन नहीं करना चाहिए। आपातकाल में सदैव असुरक्षित पानी को उबालकर ही प्रयोग करना चाहिए जिससे उसमें उपस्थित अधिकांश प्रकार के परजीवी, जीवाणु व विषाणु नष्ट हो जाते हैं। यदि पानी का रंग साफ न हो तो पानी को उबालने से पूर्व पानी के फिल्टर, कॉफी फिल्टर, कागज या सूती तौलिए अथवा कीप में रुई का फाया रखकर छानना भी अत्यंत आवश्यक होता है। पानी उबालने के लिए भी साफ बर्तन का प्रयोग करना चाहिए तथा कम से कम तीन मिनट तक अवश्य खौलाना चाहिए। यदि आप समुद्र तल से 5,000 फीट से ऊपर हैं तो कम से कम 5 मिनट तक पानी को अवश्य खौलाना चाहिए। उबले पानी को ठंडा करके ही प्रयोग करना चाहिए तथा पानी को ठंडा करने के दौरान भी बर्तन को ढककर ही रखना चाहिए। विषाक्त पदार्थ व सीसा, मर्करी, एस्बेस्टोस, कीटनाशी रसायनों अथवा नाइट्रेट्स से संदूषित पानी को उबालने से कोई लाभ नहीं होता अपितु उबालने की प्रक्रिया के दौरान पानी के वाष्पन से अन्य संदूषित पदार्थों की सांद्रता पानी में बढ़ जाती है।

xje ikuh ihuk pkfg, vFkok BMk\

गरम पानी पीना भी स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है। बगैर कुछ मिलाये भी गरम पानी पीने से मेटाबौलिज्म स्तर बढ़ने से शरीर का अतिरिक्त मोटापा कम होता है। सुबह खाली पेट एक गिलास गरम पानी पीने से शरीर डिटौक्सीफाई हो जाता है। इसमें नींबू का रस या शहद मिलाने से भी स्वास्थ्य पर अतिरिक्त लाभ होते हैं। प्रतिदिन गरम पानी पीने से उम्र बढ़ने के लक्षण शीघ्र प्रकट नहीं होते तथा त्वचा चुस्त व सुंदर बनी रहती है। गरम पानी पीने से त्वचा के तापमान

में वृद्धि होने से त्वचा के संक्रमण व मुहांसों की समस्या भी नहीं होती है। गरम पानी पीना बालों की वृद्धि में भी सहायक होता है। गरम पानी पीने से खोपड़ी में भी हाइड्रेशन का स्तर बरकरार रहता है जिससे रूसी की समस्या से भी निजात मिलती है। रात मैं सोने से पूर्व गरम पानी पीने से आँतें उचित रूप से कार्य करती हैं जिससे कब्ज की समस्या भी नहीं होती। गरम पानी पीने से अंगों द्वारा एंजाइम्स के अधिक स्त्राव होने के कारण पाचन प्रक्रिया भी सुगम हो जाती है। गरम पानी पीने से महिलाओं को पीरियड्स के दौरान क्रैम्प्स की समस्या भी नहीं होती। सर्दी, खांसी व गले के संक्रमण से आराम पाने हेतु गरम पानी में अदरक उबालकर पीना लाभप्रद होता है।

गरम पानी पीने के लाभ के साथ–साथ कुछ नुकसान भी है। वॉटर प्योरीफायर से निकले पानी को ही गरम करना चाहिए। नल के पानी की टोंटी व पाइप की जंग से नल से सीधा निकला पानी प्रदूषकों के कारण अस्वास्थ्यकर व विषाक्त होता है। गरम पानी पीने से मुंह व गला जल सकता है। अतः हमेशा गुनगुना पानी ही पीना चाहिए। गरम पानी पीने से मस्तिष्क के अलग प्रकार से कार्य करने के कारण पढ़ाई या काम करते समय एकाग्रचित्त ध्यान नहीं रह पाता है। नींद न आने वाले व्यक्तियों को गरम पानी पीने से नींद की समस्या बढ़ सकती है। अधिक गरम व अधिक ठंडा पानी पीना गुर्दों को भी नुकसान पहुँचाता है। अधिक गरम पानी पीने से रक्त वाहिकाओं में रक्त पतला हो जाता है जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है।

ठंडा पानी पीने से शरीर में वसा बढ़ जाती है। अधिक ठंडा पानी पीने से शरीर को अधिक कार्य करना पड़ता है व उसमें अच्छी–खासी ऊर्जा व्यय हो जाती है, यह कथन पूर्णतया सही नहीं है क्योंकि शरीर का कम तापमान वसा को कठोर कर देता है जिससे वसा का पाचन नहीं हो पाता तथा वह पेट सहित शरीर के विभिन्न अंगों पर जमा हो जाती है। ठंडा पानी पीने से शरीर की डिहाइड्रेशन प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है क्योंकि शरीर को पहले शरीर का तापमान सामान्य करना पड़ता है। सिर्फ लंबी दौड़ लगाने वाले खिलाड़ी इसका अपवाद हैं जिनको इस देर से होने वाली प्रक्रिया का लाभ मिलता है। ठंडा पानी पीने से व्यक्ति उस समय तो फ्रेश महसूस करता है परंतु दीर्घ अवधि में शरीर के ठंडे पानी को गरम करने में अतिरिक्त ऊर्जा का व्यय करना पड़ता है। ठंडा पानी पीने से आमाशय गड़बड़ हो जाता है तथा पेट में दर्द, गड़गड़ाहट व उबकाई जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। ठंडा पानी पीने से आमाशय के सिकुड़कर अधिक टाइट हो जाने से खाने का पाचन प्रभावित होता है। ठंडा पानी पीने से हृदय के धड़कने की दर कम हो जाती है। अपनी गर्दन के पीछे स्थित वेगस तंत्रिका ठंडा पानी पीने से प्रभावित होने के कारण आपात स्थित में हृदय दर को धीमा करके शरीर के तापमान में वृद्धि करती है। ठंडा पानी पीने से आपका शरीर ठंडे पानी या ठंडी हवा से लड़ने के लिए प्राकृतिक हयूमिडीफायर की भांति कार्य करता है तथा अतिरिक्त वसा श्लेष्मा पाइपों में एकत्रित होकर गले में सूजन पैदा कर देती है। अधिक ठंडा पानी पीने से सिरदर्द भी हो सकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि ठंडा एवं गरम पानी दोनों ही स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाते हैं। अतः अधिक गरम अथवा अधिक ठंडे पानी पीने से बचना चाहिए।

D;k g ikuh ihu dk rjhdk\

पानी को चाय या कॉफी की तरह एक–एक घूंट करके पीना चाहिए। पानी कभी भी खड़े होकर नहीं पीना चाहिए। पानी सदैव बैठकर तथा गिलास को हाथ में पकड़कर मुँह से लगाकर आराम से धीरे–धीरे पीना चाहिए। पानी पीने के दौरान पानी को मुँह में थोड़ी देर रोकना भी चाहिए। यदि भोजन की तरह पानी चबा–चबा कर पी सकें तो और भी अच्छा है। खड़े–खड़े अथवा लेटकर पानी नहीं पीना चाहिए। इससे पानी न सिर्फ सांस नली में जाने का खतरा बढ़ जाता है अपितु नाक में पानी आ जाने का डर भी रहता है। खड़े होकर पानी पीने से शरीर का तापमान अचानक से कम होने के कारण आपको चक्कर भी आ सकता है व आप गिर भी सकते हैं।

बाजार में पानी की सीलबंद बोतलें दुकानों के बाहर धूप में रखी रहती हैं। दुकानदार आवश्यकतानुसार उनको फ्रिज या फ्रीजर में रखकर ठंडी करके बेचते हैं। गर्मी से बोतल के प्लास्टिक रसायनों के साथ प्रतिक्रिया करता है जो पानी में डाइऔक्सिन को रिलीज करते हैं। डाइऔक्सिन एक स्तन कैंसर ऊतक में तेजी से बढ़ सकता है। अतः बाजार से ऐसी बोतलों को खरीदने से बचना चाहिए तथा घर में भी प्लास्टिक की बोतल के स्थान पर काँच की बोतल का प्रयोग करना चाहिए।

ikuh e: VhMh,l D;k gkrk g\

टीडीएस अर्थात *'टोटल डिजॉल्वड सोलिड्स'* पानी में उपस्थित कार्बनिक व अकार्बनिक तत्वों का संयोग हैं जिनमें शरीर के लिए आवश्यक लवण होते हैं। पीने के पानी में 1–500 मि.ग्रा. प्रति लीटर टीडीएस का स्तर उचित माना जाता है। 500 से अधिक का टीडीएस स्तर शरीर के लिए हानिकारक होता है। पानी के टीडीएस स्तर की जांच के लिए टीडीएस मीटर बाजार में उपलब्ध हैं। आरओ अथवा बोतल बंद पानी में टीडीएस का स्तर 1–100 मि.ग्रा. प्रति लीटर हो सकता है। टीडीएस स्तर कम होने पर शरीर को आवश्यक लवण नहीं मिल पाते। परंतु कम टीडीएस पानी के सेवन से किसी बीमारी होने के प्रमाण अभी उपलब्ध नहीं हैं। यद्यपि आरओ को लगवाते समय ऐसे आरओ का चयन करना चाहिए जिससे टीडीएस का उचित स्तर बना रहे।

पीने के पानी का पीएच स्तर 6.5 से 7.5 उपयुक्त माना जाता है। जल निगम भी पानी की सार्वजनिक आपूर्ति के समय पीएच स्तर का ध्यान रखते हैं। परंतु घर में बोरिंग के दौरान पीएच स्तर कम या अधिक हो तो इसके लिए बाजार में पीएच मान सही करने वाले रसायन सुगमता से उपलब्ध हैं। जल निगम के साथ बोतलबंद पानी बनाने वाली कंपनियाँ भी इन्हीं रसायनों का उपयोग कर पानी का पीएच सही रखती हैं। पानी का पीएच 6.5 से कम होने पर पीएच बढ़ाने के लिए बूस्टर बायो का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार पीएच स्तर घटाने के लिए पीएच बायो रिएक्टर नामक रसायन पानी में डाला जाता है। घर में बोरिंग करा रखने पर पानी के पीएच स्तर की जांच के लिए बाजार से पीएच मीटर खरीदा जा सकता है परंतु पीएच स्तर को बरकरार रखने के लिए किसी रसायन का प्रयोग करने से पूर्व किसी विशेषज्ञ की राय अवश्य ले लेना चाहिए।

इस प्रकार, पानी पीते समय यदि आप उपरोक्त बातों का ध्यान रखेंगे तो आप कई बीमारियों से बचे रहेंगे तथा दीर्घकाल तक स्वस्थ्य रहेंगे।

lkfjJe dhft,] bldk dkbZ fodYi ugh gA

Lokeh foodkuUn

डिजिटल पुस्तकालयों की प्रासंगिकता

jf'e ;kno] mek Ikg ,oa Inhi 'kek

सूचना प्रौद्योगिकी के बढ़ते प्रभाव के फलस्वरूप पुस्तकालयों के स्वरूप में भी आमूलचूल परिवर्तन आया है। सूचना विस्फोट के युग में सूचना पर नियंत्रण, सूचना सामग्री का संरक्षण डिजिटल पुस्तकालय के कारण आसान हुआ है। वर्तमान समय में आंकिक पुस्तकालय, पुस्तकालय सेवाओं को बेहतर बनाने व आर्थिक संकट से निपटने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। कम्प्यूटर आधारित पुस्तकालय की परिकल्पना अब व्यावहारिक रूप में हमारे सामने है। कई ऐसे संस्थान हैं जो कागज के बजाय इलेक्ट्रानिक संसाधनों (सूचना स्त्रोतों) पर अपने आधे से अधिक अधिग्रहण बजट खर्च करते हैं। वित्तीय संकट का सामना कर रहे कितने ही विश्वविद्यालय व शोध संस्थान, नई सूचना प्रौद्योगिकी की ओर आशान्वित हैं। प्रकाशनों की संख्या में वृद्धि, पुस्तकों व शोध पत्रिकाओं की कीमतों में वृद्धि आदि कुछ ऐसे कारण है जिनकी वजह से पुस्तकालय अपनी मांग के अनुरूप प्रकाशनों को अधिग्रहण में अक्षम है। दूसरी ओर पुस्तकालय में प्रकाशनों की कम खरीद अप्रत्यक्ष रूप से पुस्तकों की कीमतों में वृद्धि का कारण बन रही हैं। इसके अतिरिक्त पुस्तकालयों के पास प्रकाशनों की भण्डारण क्षमता की भी कमी है। पुराने प्रकाशनों के पृष्ठों के भंगुर हो रहे हैं अतः उनके संरक्षण की आवश्यकता है। पुस्तकालयों के सामने दोहरी समस्या है, प्रकाशनों के लिए वित्तीय संसाधन की कमी और पुराने प्रकाशनों के भण्डारण तथा संरक्षण की समस्या। इलेक्ट्रानिकी इन दोनों समस्याओं का हल प्रस्तुत करने में सक्षम है।

आंकड़ों पर यदि ध्यान दें तो सूचना के प्रमुख उत्पादकों जैसे लेखक, संपादक व प्रकाशकों के पास पुस्तकालयों द्वारा किए गये खर्च का केवल 30 प्रतिशत हिस्सा ही पहुँच पाता है और बाकी का पैसा प्रिंटिग खर्च व समस्त वितरण प्रणाली पर व्यय होता है। दूसरी ओर यदि सूचना को इलेक्ट्रानिक स्वरूप में सीधे शोधकर्ताओं व विद्यार्थियों तक पहुंचाया जाए तो लगभग 90 प्रतिशत बजट सूचना के प्रमुख उत्पादकों तक पहुंचाया जा सकता हैं। अब सी.डी./डी.वी.डी. की कम मूल्य पर उपलब्धता व दूसरी तरफ जीर्ण–क्षीर्ण हो रही पाठ्य सामग्री के लिए भी इलेक्ट्रानिकी महत्वपूर्ण हल प्रस्तुत करती है। जीर्ण–क्षीण हो चुकी पुस्तकों को स्कैन करके सुरक्षित रखा जा सकता है और यह पुस्तकालयों में कम हो रही भण्डारण क्षमता की परिस्थिति में भी उपयुक्त है। इस प्रकार भवन निर्माण की लागत के कुछ अंश मात्र को तकनीकी पर आने वाले खर्च में बदला जा सकता है।

पुस्तकालयों का डिजिटाइजेशन अनेक समस्याओं का हल प्रस्तुत करने के साथ ही पारम्परिक सूचना स्रोतों तक पाठकों की पहुँच को बढ़ा रहा है। डिजिटल पाठ्य सामग्री का संरक्षण आसान हो गया है जिससे पुस्तकालय अपने सूचना संग्रह को विस्तार दे सकते हैं। इलेक्ट्रानिकी की वजह से सूचना सामग्री की खोज करना भी आसान हो गया है। पहले ही संक्षेपीकरण पत्रिकाओं (Abstracting Journals) के मुद्रित संस्करणों की जगह सी.डी. ले चुकी है। इसी प्रकार संदर्भ पुस्तकें जैसे कि इन्साइक्लोपीडिया और विभिन्न संकलनों, विशेषतया बहुखण्डीय प्रकाशनों को मुद्रित प्रारूप की बजाय इलेक्ट्रानिक संस्करण में पसन्द किया जा रहा है। यह सूचना प्राप्ति को अत्यन्त आसान बना देता है। सी.डी./डी.वी.डी. संस्करण छोटे, सस्ते व उपयोग की दृष्टि से अत्यन्त प्रभावशाली हैं।

यद्यपि पुरानी इलेक्ट्रानिक सामग्री अक्सर छवि प्रारूप में उपलब्ध होती थी किन्तु अब अधिकतर छपाई भी कम्प्यूटर के माध्यम से हो रही है तो यह सामग्री ASCII प्रारूप में भी आसानी से उपलब्ध है जोकि वांछित सूचना की खोज में काफी सहायक है और कम स्थान लेती है। संदर्भ स्रोत प्रायः विस्तृत अध्ययन की बजाय विशिष्ट सूचना खोजने के उपयोग में आते हैं। उनके लिए नई तकनीकी काफी लाभदायक है। गहन अध्ययन के लिए कुछ लोगों को यह तरीका कुछ असुविधाजनक प्रतीत हो सकता है। इसके अतिरिक्त सूचना तकनीक पुस्तकालयों में पुस्तकों की चोरी की दर को काफी हद तक कम करने में सहायक है। आनलाइन सेवा के द्वारा एक ही समय पुस्तक की एक प्रति को विभिन्न जगहों पर बैठे उपयोगकर्ता/पाठक पढ़ सकते हैं। कम्प्यूटर पर एक साथ कई किताबों/सूचना स्त्रोतों को पढ़ा जा सकता है और तीव्र गति से पुस्तकों की प्रतियां विभिन्न स्थानों पर बैठे पाठकों की

मेज तक पहुंचायी जा सकती हैं। पाठक अपनी सुविधानुसार पुस्तक का फार्मेट (प्रारूप) भी बदल सकते हैं।

सूचना तकनीक का एक दूसरा महत्वपूर्ण लाभ पुस्तकों का संरक्षण है। पाठ्य सामग्री की डिजिटल प्रति बिना किसी त्रुटि के आसानी से बनायी जा सकती है। आज के डिजिटल युग में पुस्तकें एक स्थायी वस्तु के रूप में पहरे में रखी जाने वाली चीज नहीं रह गयी हैं। बल्कि माना जाता है कि पाठ्य सामग्री की कई प्रतियाँ बना ली जायें ताकि समयान्तराल के बाद भी कुछ एक प्रतियाँ बाकी रह जायें और सूचना सामग्री समूल रूप से खत्म न हो जाये जैसा कि पुरातन साहित्य व ज्ञान के साथ हुआ। आज के युग में जब सभी स्कैन करने प्रकाशित करने के लिए स्वतन्त्र है तो सवाल यह उठता है कि पूरे सिस्टम को चलायेगा कौन तो इसके लिए विभिन्न संस्थान अपना अधिकार क्षेत्र होने का दावा करते हैं जैसे आनलाइन सेवा प्रदाता, टेलीफोन कम्पनियां, प्रकाशक, टेलीकम्यूनिकेशन ऑफिस और स्टार्ट अप कम्पनियां। पुस्तकालय स्वयं को एक मात्र सूचना प्रदाता होने का दावा नहीं कर सकते हैं। पुस्तकालयों की पारम्परिक जिम्मेदारी है कि वह सूचना सामग्री को अनन्त काल तक संरक्षित व संग्रहित करके रखें, जबकि दूसरी संस्थाएं आज के आर्थिक युग में करने में न तो सक्षम हैं न अपना उत्तरदायित्व ही समझती हैं।

पुस्तकालय यदि किन्हीं कारणों से किसी शोध पत्रिका को खरीदना बन्द भी कर देता है तो वह उसकी पुराने अंकों को संभालकर रखता है। जबकि प्रकाशक पुराने अंकों को आनलाइन पढ़ने के लिए उपलब्ध करवाना आर्थिक दृष्टि से लाभकारी नहीं समझते हैं क्योंकि नये अंकों की मांग अपेक्षाकृत रूप से बहुत अधिक होती है। इंटरनेट पर सूचनाओं व सूचना स्रोतों का अम्बार है और सूचनाओं के इस समुद्र में से वांछित सूचना को निकाल पाना भी जटिल कार्य है और इन सूचनाओं की विश्वसनीयता भी संदेहात्मक हो सकती है। यही समस्या पाठकों को पुस्तकालय तक पुनः वापस लाती है। सूचना व सूचना स्त्रोतों को अधिकाधिक मात्रा में खरीदने से अधिक जरूरी है सही सूचना को सही रूप में सही पाठक तक पहुंचाना और सही सूचना स्त्रोतों का चुनाव व उनका अधिग्रहण। उपरोक्त कार्य पुस्तकालय पारम्परिक रूप से भली–भांति कर रहे हैं जो कि सूचनाओं के अम्बार की समस्या का समाधान निकालता है।

अगर हम भविष्य में सूचना को समुद्र के रूप में देखते हैं तो पुस्तकालन का कार्य अपने पाठकों को पानी प्रदान करने की बजाय नाव प्रदान करने का है ताकि वे वांछित सूचना तक पहुँच पायें।

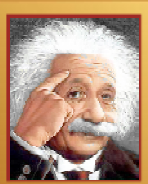

Ekkuo dh i.krk viuh vi.krk dk tku yu e gA

vkbU Vhu

साइबर विस्तार : आधुनिक कृषि सूचना तंत्र

nojkt] xkfon jke ikxrh] jkt'k dekj ,oa vkfnR; çdk'k

साइबर विस्तार एक कृषि सम्बन्धी जानकारी के आदान–प्रदान का सरल तंत्र है। यह कृषि के क्षेत्र में सूचना तकनीकी (आईसीटी) का उपयोग कर किसानों को जानकारी प्रदान करता है। इसके माध्यम से सामान्य कृषि की नवीनतम तकनीक एवं प्रोद्योगिकी के सम्बन्ध में जानकारी, मौसम सम्बन्धी पूर्वानुमान सूचना, रोग एवं कीट प्रबंधन, खाद एवं बीज की कीमतों एवं बाजार में उनकी उपलब्धता, सरकारी योजनाएं (फसल बीमा योजना, कृषि सिंचाई योजना, मृदा सम्बन्धी जानकारी, ग्रामीण विकास कार्यक्रमों एवं सब्सिडी के सम्बन्ध में सम्पूर्ण जानकारी, फसल की कटाई के बाद की प्रौद्योगिकी की नवीनतम जानकारी, फसल भंडारण की वैज्ञानिक जानकारी) आदि अनिवार्य आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सहायता प्राप्त होती है, जो कि कृषि के विकास के लिए अति महत्वपूर्ण है। साइबर विस्तार एक आधुनिक कृषि सूचना तंत्र है, जिसके माध्यम से विभिन्न प्रकार की कृषि सम्बन्धी नवीन जानकारी कृषक भाईयों को पूरे वर्ष में चौबीसों घंटे प्राप्त होती रहती है। इसके अंतर्गत संचार प्रक्रिया में ई–मेल, चर्चा समूह एवं नवीन समूहों के माध्यम से क्रियाशील रहना, संचार तीव्रता में गतिशील रहना ऐसे अनेकों सुविधाओं को प्राप्त करना सम्मिलत है। उक्त सुविधा के माध्यम से इनपुट विक्रेता किसानों से सम्पर्क कर सकते हैं एवं सूचनाओं को प्रेषित कर सकते हैं। साइबर विस्तार करने के लिए कुछ आवश्यक यन्त्र स्थापित किये जाने चाहिए जैसे वेब–पोर्टल, ई–मेल, ई–संचार, विषय–विशेषज्ञ पेनल प्रदर्शन, वीडिओ कॉन्फ्रेंसिंग, कॉलसेंटर एवं उपग्रह संचार तंत्र, दूरदर्शन कार्यक्रम आदि प्रमुख हैं।

आधुनिक वैज्ञानिक युग में साइबर विस्तार एक सशक्त तंत्र है जिसके माध्यम से विभिन्न प्रकार की विस्तारित योजनाओं को सफल रूप से क्रियान्वित किया जा सकता है। इंटरनेट के माध्यम से कृषि के क्षेत्र में समय–समय पर तीव्र गति से जब चाहें सुविधानुसार नवीनतम सूचनाएं प्राप्त करके किसान भाई विकसित की गयी नवीन प्रोद्योगिकी की जानकारी भी आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। कृषि अनुसन्धान, विपणन एवं किसानों के हित के लिए कृषि विस्तार का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। किसान के मध्य साइबर विस्तार एक सम्पूर्ण सूचना तंत्र के रूप में सुसज्जित आधार का कार्य करता है। परिणामस्वरूप सम्पूर्ण भारत के कृषि क्षेत्र में नवीनतम अनुसन्धान के साथ विकास की भी पहल को एक नई दिशा प्राप्त होती है।

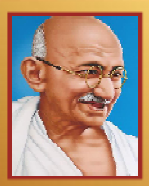

lPpk i;kl dHkh fu"Qy ugh gkrkA

egkRek xka/kh

लेजर लेवलर : संसाधन संरक्षण के लिए एक उपयोगी यंत्र

eu ekgu no ,o çlu oek

एक तरफ जहाँ हमारी जनसंख्या दिनों–दिन बढ़ती जा रही है, भूमि पर दबाव भी उसी तरह बढ़ता जा रहा है। इस कारण, हमें उपलब्ध भूमि का सही रूप से उपयोग करना होगा ताकि हम अपने लोगों के लिये आवश्यक भोजन की पूर्ति कर सकें। आज हमारे पास जो भी भूमि उपलब्ध है, उसके समतलीकरण द्वारा हम न सिर्फ संसाधनों की बचत कर सकते हैं, वरन भूमि की उत्पादकता को भी बढ़ा सकते हैं। भूमि समतलीकरण, सभी सस्य क्रियायों के साथ ही भूमि एवं फसल प्रबंधन के लिए भी आवश्यक प्रक्रिया है। इसके द्वारा न सिर्फ सिंचाई के लिए उपलब्ध जल की बचत होती है अपितु समस्त सस्य क्रियाएं भी सहजता से की जा सकतीं हैं। भूमि समतलीकरण फसल की उपज और उत्पादकता को भी बढ़ाता है।

Hkfe leryhdj.k d fy, mi;kxh ;=

लेजर लेवलर, भूमि समतलीकरण के लिए एक बहुत ही जरूरी यंत्र है। यह लेजर आधारित तकनीक का प्रयोग करता है जो कि कृषि भूमि में आवश्यक श्रेणी के समतलीकरण को प्राप्त करने में उत्कृष्ट रूप से सहायक है। यह 360 डिग्री पर चारों तरफ लेजर किरणों को उत्सारित कर एक प्राप्तकर्ता (रिसीवर) के माध्यम से नियंत्रक इकाई (कण्ट्रोल यूनिट) को संचालित करता है जो कि भूमि के कटाव व भराव के लिए हाइड्रॉलिक सिस्टम की सहायता से खुरचनी (स्क्रैपर) की भूमि से ऊँचाई को नियंत्रित करता है और उपयुक्त मात्रा में मिट्टी को काटकर एवं उसका भराव कर जरूरी समतलीकरण प्राप्त करता है।

ytj yoyj d ?kVd

लेजर नियंत्रण प्रणाली के निम्न घटक हैं :

- एक लेजर ट्रांसमीटर
- एक लेजर रिसीवर
- एक विद्युत नियंत्रण पैनल
- एक जुड़वां सोलेनोइड हाइड्रोलिक नियंत्रण वाल्व और
- एक लेवलर स्क्रैपर (खुरचनी)
- एक शक्ति का स्रोत– ट्रैक्टर (खेत के आकार के अनुसार ट्रैक्टर का आकार 30–100 हार्सपावर तक हो सकता है। दो व्हील ड्राइव की तुलना में चार पहिया ड्राइव ट्रैक्टर होना बेहतर है और हॉर्सपावर जितना अधिक होगा, प्रक्रिया उतनी ही तेज होगी।

ytj yoyj dk mi;kx djus dh fof/k

1) लेजर लेवलर चलाने से पहले खेत की अच्छी तरह से जुताई कर पाटा कर लेना चाहिए।

2) इसके बाद उत्सारक (ट्रांसमीटर) को एक समतल जगह पर त्रिपाद स्टैंड पर स्थिर कर रख देना चाहिए।

3) इसके बाद खेत में ऊँचे और निम्न स्तर की पहचान करने के लिए ग्रेड रॉड जिस पर रिसीवर (लेजर आई) लगा होता है, का उपयोग करके एक ग्रिड सर्वेक्षण किया जाता है और औसत ग्रेड निकाला जाता है। (भूमि सर्वेक्षण के लिए खेत के आकार के अनुसार 10 मीटर × 10 मीटर या 15 मीटर × 15 मीटर की ग्रिड दूरी को लेकर, सर्वेक्षण किए जा सकते हैं।)

4) इसके बाद उच्च क्षेत्रों एवं निम्न क्षेत्रों को इंगित करते हुए एक नक्शा तैयार किया जाता है। जिससे ये पता चलता है कि कहाँ मिट्टी को काटने की आवश्यकता है और कहाँ मिट्टी को भरने की आवश्यकता है।

5) फिर खुरचनी (स्क्रैपर) को उस जगह पर लाया जाता है जहाँ का स्तर औसत ग्रेड के सबसे नजदीक होता है।

6) जब ट्रांसमीटर और रिसीवर दोनों लेजर किरणों की एक लाइन में रहते हैं तो कण्ट्रोल यूनिट में हरी बत्ती जल उठती है। जो यह इशारा करती है कि अब समतलीकरण की प्रक्रिया शुरू की जाय।

7) ट्रैक्टर चालित लेजर लेवलर को तब तक चलाते रहना चाहिए जब तक कि एक समतल भूमि न मिल जाए।

y:tj y:oyj dh egÙkk

आज की कृषि में किसानों की आय बढ़ाने की बात हो रही है तो उसके लिए आवश्यक है कि एक ओर जहाँ उनकी उत्पादकता को बढ़ाया जाय तो दूसरी ओर उनकी लागत को कम किया जाय। लेजर संचालित लैंड लेजर लेवलर, भूमि समतलीकरण के माध्यम से उनकी विभिन्न प्रकार से सहायता करता है और संसाधन की भी बचत करता है। इनसे अनेकों लाभ हैं :

1) जल प्रयोग दक्षता (वाटर एप्लीकेशन एफिशिएंसी) में 50% तक की वृद्धि करता है।

2) भूमि की तैयारी के लिए आवश्यक पानी की मात्रा को 20–30% तक कम करता है, इसलिए सिंचाई में लगने वाली ऊर्जा (डीजल/बिजली) में बचत करता है।

3) फसल उपज में 10–15% तक की वृद्धि करता है।

4) फसल के लिए क्षेत्रफल में 8–10% तक की वृद्धि (मेड़ों की आवश्यकता कम करके)।

5) सिंचाई के लिए कम श्रम की आवश्यकता।

6) खरपतवार की समस्याओं (धान के लिए 40% तक) को भी कम करता है।

7) फसल प्रबंधन में लगने वाले समय की बचत के साथ ही बीजों की दर, उर्वरकों की भी बचत करता है।

8) खेतों में पानी के समान वितरण को सुनिश्चित करता है।

9) फसलों में सामान परिपक्वता को पाने में मदद करता है।

10) पूरे खेत में अगले मौसम के लिए यातायात को सुविधाजनक बनाता है।

11) परंपरागत समतलीकरण में जहाँ 5–10 से.मी. का औसत विचलन होता है, की तुलना में लेजर निर्देशित भूमि समतलीकरण में अधिकतम 1–2 से.मी. का ही औसत विचलन होता है।

12) इस यन्त्र की सहायता से कृषि भूमि को ढलाव पर भी व्यवस्थित किया जा सकता है।

y:tj y:oyj dk ç;ksx djr: le; dN egRoi.k ckr:

- लेजर ट्रांसमीटर और लेजर आई को पूरी तरह चार्ज किया जाना चाहिए या खेत में ले जाने से पहले पर्याप्त बैटरी बैक–अप के साथ प्रतिकृति बैटरी से लैस होना चाहिए।
- ट्रैक्टर पर नियंत्रण बॉक्स एवं डबल एक्ट्यूएटिंग वाल्व के बीच के विद्युत कनेक्शन ठीक से किया जाना चाहिए।
- लेजर ट्रांसमीटर को तिपाई पर स्थापित करने के लिये खेत में ऐसा स्थान चुनें जहाँ लेजर किरणों के मार्ग में

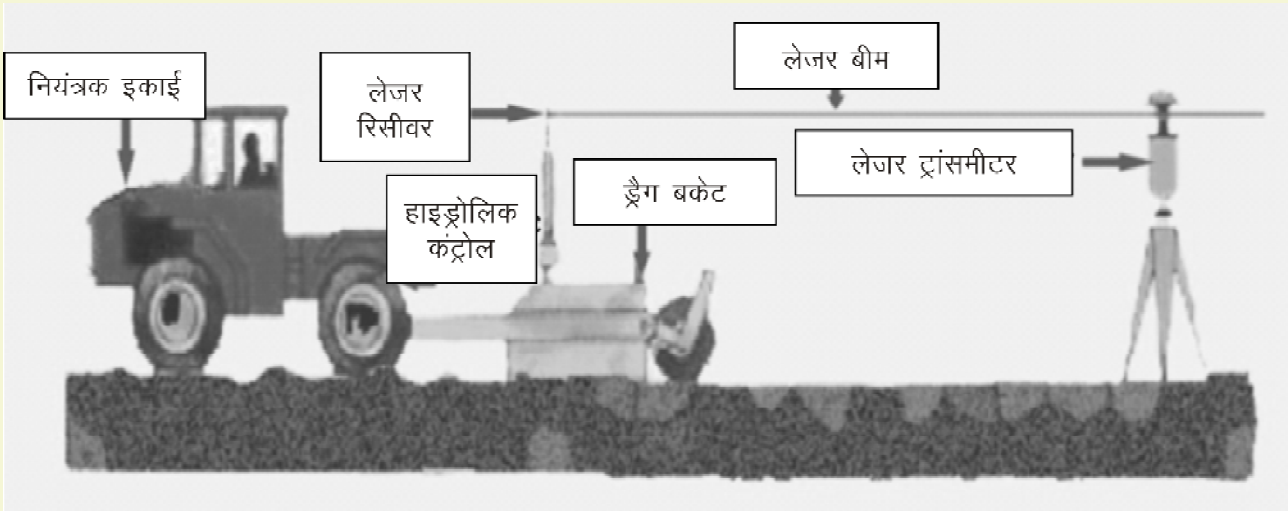

पेड़ और भवन जैसे अवरोध नहीं हों। स्क्रैपर पर लेजर रिसीवर हर समय ट्रांसमीटर के लेजर किरण को प्राप्त करने में सक्षम होना चाहिये।

- जहां तक संभव हो, लेजर किरणों के रास्ते में किसी भी अवरोध से बचने के लिए और चालक को भी इससे बचाने के लिए, ट्रैक्टर के कैनोपी से ऊपर की ऊँचाई पर ही लेजर ट्रांसमीटर और रिसीवर को स्थापित करना चाहिये।
- सर्वेक्षण के दौरान क्षेत्र में विभिन्न बिंदुओं को चिह्नित करने के लिए पर्याप्त मात्रा में लौह या लकड़ी के खूंटे की व्यवस्था होनी चाहिये।

ytj yoyj dh lhek,a

- लेजर लेवलर की उच्च आरंभिक लागत।
- लेजर लेवलर को समायोजित करने और ट्रैक्टर को संचालित करने के लिए एक कुशल चालक की आवश्यकता।
- बड़े एवं सही आकार के खेतों के लिए ही यह ज्यादा उपयोगी है।

इस प्रकार हम पातें हैं कि लेजर लेवलर हमारे किसान भाईयों के लिए एक बहुत ही जरुरी मशीन है जिसका प्रयोग करके ये अपनी उपज को बढ़ा सकते हैं साथ ही साथ जल व उर्वरक जैसे मूल्यवान संसाधन की भी बचत करने में अपना योगदान दे सकते हैं। चूँकि इसकी आरंभिक कीमत ज्यादा है इसलिये इसका प्रयोग कस्टम हायरिंग (किराये) के लिए करके कृषक अपनी आय को भी बढ़ा सकते हैं। भारत सरकार इस मशीन पर आर्थिक सहायता भी प्रदान करती है। कृषक समूह के क्रय हेतु अधिक सहायता राशि स्वीकृत होती है।

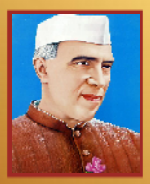

Lke; dh j{kk] /ku dh rjg djA

Tkokgj yky ug:

दलहन उत्पादन प्रौद्योगिकियों के प्रसार में आधुनिक सूचना संचार तकनीक का योगदानः सफल अनुभव

mek lkg ,oa jf'e ;kno

विगत कुछ दशकों में आधुनिक सूचना संचार तकनीकें कृषकों के सूचना सशक्तिकरण द्वारा कृषि विकास का एक महत्वपूर्ण स्तम्भ बनकर उभरी हैं। इन सूचना संचार तकनीकों के प्रयोग ने कृषि के सभी आयामों को प्रभावित कर सफल परिणाम दर्ज किए हैं। कृषकों का सूचना सशक्तिकरण का मुख्य लक्ष्य उनकी आजीविका में सुधार के लिए उपयोगी सूचना को तलाशने और उसका मूल्यांकन कर उपयोग करने के लिए उनकी क्षमताओं को विकसित करना है।

उन्नत कृषि प्रौद्योगिकियाँ जहाँ कृषि उत्पादन, उत्पादकता व स्थायित्व में वृद्धि की कारक हैं, वहीं दूसरी ओर इन प्रौद्योगिकियों को कृषक समुदाय तक प्रभावी प्रसार के माध्यम के रूप में आधुनिक सूचना संचार तकनीकें की महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। इस प्रकार तकनीकों की कृषि विकास में उपयोगिता, भारत में कृषि प्रसार प्रणाली में सीमित मानव व वित्तीय संसाधनों को परिदृश्य में अधिक बढ जाती है। भारत में कृषि परिस्थितियों व फसलों में विविधता व कृषकों की कृषि प्रौद्योगिकी संबंधी सूचना की वृहद मांग के संदर्भ में आधुनिक संचार तकनीकों का प्रयोग अत्यावश्यक हो जाता है। आधुनिक सूचना संचार तकनीकी आधारित सेवाओं में पारम्परिक उपकरण जैसे टेलीविजन, वीडियों, रेडियों, प्रिन्ट मीडिया के साथ–साथ वेबसाइट, वेब पोर्टल, वीडियो कान्फ्रेस, ई लर्निंग, आई.वी.आर.एस., मोबाइल ऐप और सोशल मीडिया जैसी नई सेवायें सम्मिलित हैं।

दूरसंचार नीति में सुधार के परिणामस्वरूप, देश में 1990 के दशक के बाद इन सूचना संचार तकनीकों के प्रयोग को बढ़ावा मिला है। इस परिवर्तन के कारण देश में टेली घनत्व, ब्राडबैंड सदस्यता, वायरलेस फोन कनेक्शन में लगातार बढ़ोत्तरी दर्ज हुई है। 31 मई 2017 तक भारत में टेलीफोन ग्राहकों की संख्या 12,050 लाख थी जिसमें 11,800 लाख वायरलेस फोन कनेक्शन सम्मिलित थे। देश में टेली घनत्व 93.6 प्रतिशत तक पहुंचा है और शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में टेली घनत्व क्रमशः 172.28 और 57.55 प्रतिशत तक दर्ज किया गया है। कृषि प्रसार की राष्ट्रीय नीतिगत ढाँचे (2000) में कृषि प्रसार के लिए प्रौद्योगिकी के दोहन को वरीयता दी गयी है और उनके वृहद स्तर पर शोधकर्ताओं, प्रसारकर्ताओं और कृषकों के बीच कम लागत में संवाद स्थापित करने को बढ़ावा दिया गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के कृषि प्रौद्योगिकी विकास व हस्तांतरण प्रणाली की रूपरेखा में भी भारतीय कृषि ज्ञान पोर्टल बनाने पर जोर दिया गया है जिसमें देश के विभिन्न कृषि अनुसंधान संस्थानों व कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा पोर्टल के लिए प्रसार सामग्री विकसित करने की बात कही गई है। इस दिशा में कृषि एवं सहकारिता विभाग, भारत सरकार द्वारा कृषक समुदाय तक कृषि संबंधी सभी महत्तवपूर्ण जानकारी पहुँचाने के लिए FARMER पोर्टल AGRISET, AGMARKETNET और DACNET का प्रयोजन किया है। कृषि प्रसार में टेलीफोन व मोबाइल फोन के उपयोग पर देश में Mkisan, Kisan Call Center, U-KVK आदि कई सफल प्रयास हुए हैं।

दालें भारतीय आहार का एक अभिन्न अंग हैं जिनका विभिन्न भोज्य पदार्थों के रूप में क्षेत्रीय विविधता के अनुरूप सेवन किया जाता है। भारत विश्व में दलहन का सबसे बड़ा उत्पादक व उपभोक्ता देश है। इस परिदृश्य में देश में दलहनी फसलों की उत्पादन संबंधी सूचना को उत्पादकों व अन्य हितधारकों तक प्रभावी प्रसार देश में दलहन उत्पादन की आपूर्ति में एक महत्वपूर्ण घटक है।

भारत सरकार द्वारा 1 जुलाई 2015 को शुरू की गई डिजिटल इंडिया परियोजना के अंतर्गत देश के सभी नागारिकों का डिजिटल सशक्तिकरण का लक्ष्य निर्धारित किया गया है व साथ ही दिसंबर 2018 तक देश के सभी 6,25,000 गांवों को इस परियोजना से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है।

इसी दिशा में देश में आधुनिक सूचना संचार तकनीकों के कृषि विकास में सफल परिणामों की पृष्ठभूमि में भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान द्वारा कुछ सफल प्रयोग किए गए हैं। इन प्रयोगों में मुख्यतः मोबाइल फोन व इन्टरनेट आधारित

प्रसार सेवाएं सम्मिलित हैं। इन सेवाओं द्वारा दलहन उत्पादन प्रौद्योगिकियों संबंधित विश्वसनीय, क्षेत्र विशेष के लिए अनुकूलित व समसामायिक सूचनाएं दलहन उत्पादकों तक पहुँचायी जा रही हैं। संस्थान द्वारा किए गए सफल प्रयोगों का विवरण निम्नवत है :

¼1½ ekckby ij vk/kkfjr ,l-,e-,l- lsok ^^nygu lans'k**

मोबाइल आधारित दलहन संदेश सेवा कृषक समुदाय की विश्वसनीय, समयबद्ध व फसल विशिष्ट जानकारी की मांग की पूर्ति के लिए मोबाइल आधारित सूचना वितरण पटल, 'दलहन संदेश' को विकसित किया गया। ध्वनियुक्त एस.एम.एस. सेवा "दलहन संदेश" द्वारा किसानों को समयानुसार दलहन उत्पादन प्रौद्योगिकियों से संबंधित परामर्श प्रसारित किए गये। इस सेवा द्वारा उत्तर प्रदेश जनपद के जालौन, फतेहपुर, चित्रकूट, हमीरपुर, कानपुर देहात, बांदा व कानपुर नगर के 3000 से दलहन उत्पादकों को शोध संस्थान के विशेषज्ञों से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ा गया।

¼2½ ,MªkW;M vk/kkfjr f}Hkk"kh ,lyhds'ku% Þpukfe=ß

चना उत्पादकों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं अन्य हितधारकों तक चना उत्पादन प्रौद्योगिकियों संबंधित नवीनतम जानकारी, सलाह के साथ कार्य प्रणालियों को पहुँचाने के माध्यम के रूप में भा.कृ.अनु.प.–भारतीय दलहन अनुसंधान सस्थान, कानपुर द्वारा एंड्रॉयड आधारित द्विभाषी एप्लीकेशन **Þpukfe=ß** विकसित किया गया है। यह एप्लीकेशन उत्पादन परिस्थिमियों अनुरूप चना की संस्तुत उन्नत प्रजातियों, उत्पादन तकनीकों, कीट व रोग प्रबंधन से संबंधित फसल सुरक्षा तकनीकों से संबंधित जानकारी के साथ ही साथ बाजार भाव, मौसम संबंधित उपयोगी जानकारी का भी समावेश किया गया है। ऑफलाइन व ऑनलाइन जानकारी पैनल की उपस्थिति इस ऐप की उपयोगिता बढ़ाती है। विकसित ऐप चना उत्पादकों व शोधकर्ताओं के बीच सूचना प्रवाह के माध्यम का कार्य करता है जिसका प्रयोग कर कृषक अपने खेतों से ही चना उत्पादन संबंधित समस्याओं को शोधकर्ता तक वीडियो, औडियो या लिखित रूप में पहुँचाकर समाधान प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, चना उत्पादन से संबंधित प्रायः पूछे जाने वाले प्रश्नों के उत्तर के समावेश के साथ–साथ संस्थान द्वारा विकसित वीडियो फिल्मों व संस्थान की बेवसाइट का लिंक प्रदान करता है। इस एप को गूगल प्लेस्टोर से निशुल्क डाउनलोड किया जा सकता है। इस एप का विमोचन 22 दिसम्बर 2016 को माननीय केन्द्रीय कृषि और किसान कल्याण मंत्री द्वारा अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष 2016 के समापन समारोह के अवसर पर किया गया था।

¼2½ osclkbV vk/kkfjr igy

देश में बढ़ती इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की आबादी (4,500 लाख) के साथ–साथ स्थानीय भाषाओं में वेबसाइट की सीमित उपलब्धता के परिपेक्ष्य में संस्थान द्वारा हिन्दी वेबसाइट ई–दलहन ज्ञान मंच को तैयार किया गया जिसमें दलहनी फसलों पर आधारित कृषक उपयोगी उपलब्ध ज्ञान संसाधनों को प्रस्तुत किया गया है।

^^b&nygu Kku ep** वेबसाइट का विकास भारत में उगाई जाने वाली प्रमुख दलहनी फसलों की उन्नत उत्पादन तकनीकों से सम्बंधित उपलब्ध ज्ञान संसाधनों को कृषकों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं अन्य हितधारकों तक पहुँचाने के उद्देश्य से किया गया है। भाकृअनुप–भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित इस मंच पर प्रमुख दलहनी फसलों जैसे चना, अरहर, मटर, मसूर, मूंग, उर्द काबुली चना से सम्बंधित कृषक उपयोगी उन्नत प्रजातियों, उत्पादन तकनीकों, कीट व रोग प्रबंधन के लिए फसल संरक्षण प्रौद्योगिकियों संबंधित विस्तृत जानकारी का उचित उपचार व वर्गीकरण कर प्रस्तुत किया गया है। इस वेबसाइट में समावेशित फसल आधारित प्रजाति सूचना प्रणाली [VIS] के प्रयोग द्वारा कृषकों व अन्य उपयोगकर्ता सात प्रमुख दलहनी फसलों में चयनित विशेषताओं आधारित राज्य व जनपद स्तरीय संस्तुत उन्नत प्रजातियों की सचित्र सम्पूर्ण जानकारी उपलब्ध कराने में सक्षम है। इस मंच पर उपस्थित कीट व रोग अभिज्ञान प्रणाली, सभी प्रमुख दलहनी फसलों में क्षति पहुँचाने वाले प्रमुख कीटों व रोगों की पहचान व उनके उन्नत प्रबंधन तकनीकों की विस्तारपूर्वक जानकारी उपयोगकर्ताओं के लिए प्रस्तुत करता है। मंच पर उपलब्ध खरपतवार अभिज्ञान प्रणाली कृषकों को खरीफ व रबी दलहनी फसलों में खरपतवारों की चित्रों के माध्यम से पहचान कराकर, उनकी प्रबंधन तकनीकी की विस्तृत जानकारी दे सकता है। इस वेबसाइट पर उत्पादन प्रौद्योगिकियों आधारित फिल्मों के साथ ही कृषक उपयोगी साहित्य को प्रस्तुत किया गया है। विकसित मंच पर कृषि संबंधित अन्य महत्वपूर्ण वेबसाइट व वेबपोर्टल के लिंक भी उपलब्ध हैं। इस वेबसाइट के मूलभूत

ढांचे को कृषक उपयोगी बनाने के उद्देश्य से इसके संचालन को सरल व विकल्प आधारित बनाया गया है। इस वेबसाइट का विमोचन 5 सितम्बर 2017 को संस्थान के स्थापना दिवस के अवसर पर किया गया था।

¼3½ nygu mRiknu lc/kh oRrfp=k dk mi;ksx

दलहनी फसलों की उत्पादन प्रौद्योगिकियों को कृषकों के बीच प्रचार–प्रसार के लिए लघु वृत्तचित्र तैयार किए गये हैं। संस्थान द्वारा विकसित आई.आई.पी.आर. मिनी दाल मिल को दलहन प्रसंस्करण के क्षेत्र में, ग्रामीण स्तर पर उद्यमिता विकास के एक विकल्प के रूप में विकसित किया गया है। कृषक इस मिल को अपनाकर आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इस मिनी दाल मिल व इससे जुड़े तथ्यों के प्रति कृषकों व अन्य हितधारकों में जागरूकता लाने के उद्देश्य से एक लघु डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म को तैयार किया गया है।

दलहनी फसलों में वांछित उत्पादकता प्राप्त करने में बीजोपचार, कम लागत व आसानी से की जा सकने वाली एक अत्यन्त प्रभावी तकनीक है। बीजोपचार फसलों में रोगों व कीटों के प्रति सुरक्षा प्रदान करने के साथ–साथ यह पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में उचित बढ़वार में भी सहायक होती है। इस तकनीक को दलहन उत्पादक कृषकों को आसान भाषा व अच्छी समझ के लिए, एक ड्रॉक्यूमेन्ट्री फिल्म को तैयार किया गया। साथ ही चना फली भेदक जैसे हानिकारक कीटों से चना व अरहर की फसल के बचाव के लिए समन्वित कीट प्रबंधन प्रणाली पर आधारित लघु फिल्म को तैयार किया गया है। समन्वित कीट प्रबंधन प्रणाली का अंगीकरण प्रभावी है। खरीफ दलहनी फसलों की उन्नत बुवाई तकनीकें खेतों में पौधों की वांछित संख्या सुनिश्चित कर उत्पादकता में वृद्धि करने में सहायक सिद्ध हो रही हैं। इन तकनीकों पर आधारित कृषक उपयोगी लघु ड्रॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों को तैयार किया करने का प्रयास किया गया है।

संस्थान द्वारा विकसित आधुनिक सूचना संचार तकनीक आधारित उल्लिखित प्रसार सेवाओं द्वारा दलहन उत्पादन प्रौद्योगिकियों संबंधित विश्वसनीय, क्षेत्र विशेष के लिए अनुकूलित व समसामायिक सूचना दलहन उत्पादकों व अन्य हितधारकों तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

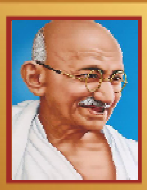

Tkc rd thuk] rc rd lh[kuk] ;gh thou dk ey eU= gA

egkRek xka/kh

ग्रामीण आय सम्वर्धन

çlu oek ,o eu ekgu no

आज के परिपेक्ष्य में अर्थ की महत्ता से सब भली–भाँति परिचित हैं। एक समय था जब लोग जीवन मूल्यों के लिये अपना सर्वस्व अर्पित कर देने को तत्पर रहते थे। समय के साथ व्यवस्था परिवर्तन हुआ और आज किसी भी कार्य को संपन्न करने या कराने के लिये आवश्यकता होती है तो धन की। अन्य क्षेत्रों की तरह कृषि भी धन के प्रभाव से अछूता नहीं रह गया। विडम्बना ये है कि आज देश जवान और किसान से तो अपेक्षा रखता है कि वो देशहित में कार्य करें। जबकि अन्य सभी के लिये व्यक्तिगत स्वार्थ सर्वोपरि है। कृषि आय में उत्तरोत्तर होने वाली कमी ने पूर्णकालिक कृषकों को भी इससे विमुख होने को विवश कर दिया है। वर्ष 2001 से 2011 के बीच, ग्रामीण जनसंख्या में 12.18 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि भारत की शहरी जनसंख्या 31.80 प्रतिशत बढ़ी है। इस अवधि में शहरी जनसंख्या में 50 प्रतिशत से अधिक वृद्धि के लिये ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन को उत्तरदायी पाया गया। वर्ष 2013 में राष्ट्रीय श्रम अर्थशास्त्र अनुसंधान एवं विकास संस्थान, दिल्ली के प्रतिवेदन आँकलन के अनुसार लगभग 2,000 कृषक प्रतिदिन कृषि से पलायन कर रहे हैं। किन्तु इन्हें तकनीकी और व्यावसायिक दक्षता में कमी के कारण सेवा और उद्योग क्षेत्रों में निम्न आय का काम ही मिल पाता है। शहरों में भी जीवनयापन की लागत भी दिनों–दिन बढ़ती जा रही है इसलिये कृषि छोड़ कर भी शहरी–ग्रामीण एक निम्नवर्गीय जीवन जीने को विवश हैं। ग्राम्य अंचल से पलायन को रोकने के लिये अत्यन्त आवश्यक है कृषि क्षेत्र में आय में वृद्धि और नये रोजगार का सृजन।

कृषि ही एक ऐसा उद्यम है जो भारत की निरन्तर बढ़ती जनसँख्या को भोजन ही नहीं, अपितु आजीविका भी दे सकता है। कृषि के अतिरिक्त, सभी उद्योगों में उद्योगपति लागत मूल्य पर अपना लाभांश जोड़कर उत्पाद बेचता है। उससे कभी यह अपेक्षा नहीं की जाती कि बढ़ती मंहगाई या देश की आवश्यकता के आधार पर मूल्य कम या अधिक करे। चूँकि कृषि के साथ हर नागरिक को भोजन की उपलब्धता भी सुनिश्चित करनी होती है इसलिये कृषि उपज का मूल्य कृषि लागत एवं मूल्य आयोग द्वारा तय किया जाता है। वर्तमान में कृषि उपज के न्यूनतम समर्थन मूल्यों में अभूतपूर्व वृद्धि की गयी है। किन्तु शहरी क्षेत्रों की आय और संसाधनों की उपलब्धता को देखते हुये ये वृद्धि संतोषजनक नहीं लगती। आजकल जब लोग मोबाइल, इन्टरनेट, टीवी, फिल्मों और मनोरंजन के साधनों पर अपनी आय का एक महत्वपूर्ण भाग व्यय करता है वहाँ भोजन जैसी आधारभूत आवश्यकता के लिये अधिक मूल्य देना कहाँ अनुचित है। यहाँ कृषक को कृषि कार्यों से विमुख होने से रोकना भी आज की महती आवश्यकता है। इसके लिये लम्बे समय से कृषि को भी उद्योग का दर्जा दिये जाने की बात चल रही है। उद्योग के रूप में ही किसान को अपनी मेहनत और पूँजी निवेश का उचित प्रतिफल मिल सकेगा।

mit ij ykHkka'k सबसे पहले तो आवश्यक है कि कृषक अपने उत्पाद का उचित लागत मूल्य ज्ञात करें। शहरी क्षेत्रों की भूमि का मूल्य सुदूरवर्ती भूमि से अधिक होता है। इस स्थिति में खेती की लागत अधिक होगी किन्तु कृषि उपज का भाव हर जगह समान ही मिलेगा। उद्योग के लागत मूल्य में भूमि, भवन, यन्त्र आदि का मूल्य भी उत्पादन लागत में समाहित होता है। इसी प्रकार कृषि लागत में भूमि, भवन और यन्त्र का मूल्य या किराया समाविष्ट होना चाहिये। यदि कृषक को उसके उत्पाद का उचित मूल्य उचित लाभ के साथ मिलता है तो वो कृषि कार्य करते रहने के लिये प्रेरित होगा। प्रक्षेत्र स्तर पर भण्डारण की पर्याप्त व्यवस्था न होने के कारण कृषक अपनी उपज का न्यूनतम समर्थन मूल्य पर शीघ्र निस्तारण करना चाहता है। यदि वह भण्डारण की व्यवस्था विकसित कर ले तो वह अपनी आवश्यकता और बाजार भाव के अनुसार अधिक लाभ पर बेच सकता है। लागत मूल्य पर लाभांश ही किसी व्यवसाय को सुनिश्चित करता है।

mRiknu eY; e deh कृषि आय में वृद्धि के लिये उत्पादन मूल्य में कटौती करना एक सहज व सरल उपाय है। कृषि अपने आप में एक श्रम साध्य कार्य है। इसमें विभिन्न कार्यों के लिये मानव श्रम की आवश्यकता होती है। वर्तमान सन्दर्भ में श्रमिकों के श्रम मूल्य में भी काफी वृद्धि हुई है जिस कारण कृषि का उत्पादन मूल्य भी बढ़ा है। साथ ही पलायन

के कारण ग्राम्यान्चल में श्रमिकों की कमी ने भी कृषि को और दुष्कर बना दिया है। कृषि कार्य में समय पालन अत्यन्त आवश्यक है। कृषि यन्त्रों के अभाव में कार्यों का संचालन और प्रबन्धन समय से नहीं हो पाता। इस कारण भी उपज का मूल्य बढ़ जाता है। कृषि यंत्रों के उपयोग से खेत की तैयारी, बुवाई, निराई, सिंचाई, कटाई और मड़ाई जैसे कार्य सुविधाजनक रूप से कम समय और कम लागत में हो जाते हैं। यन्त्रों की सहायता से जल और खाद की उचित मात्रा का प्रयोग न केवल उत्पादन लागत कम करता है बल्कि जल व मृदा का संरक्षण भी करता है (तालिका 1)।

rkfydk 1% —f"k ;=hdj.k dk ;kxnku ¼çkDdfyr½

Øe l-	ykHk	vuekfur ek=k ¼%½
1	बीज की बचत	15–20
2	उर्वरकों की बचत	15–20
3	समय की बचत	20–30
4	श्रम की कमी	20–30
5	कृषि सघनता में वृद्धि	5–20
6	उत्पादकता में वृद्धि	10–15

स्रोतः *ट्रेड एंड इन्वेस्टमेंट पॉलिसीज ऑन मैकेनाइजेशन ऑफ एग्रीकल्चर, सेण्टर फॉर सस्टेनेबल एग्रीकल्चरल मैकेनाइजेशन–सीएसएएम (यूएनदृएएसकैप)*

U;ure çlLdj.k % कृषि उपज का मंडी में सही मूल्य प्राप्त करने के लिए भी किसान भाईयों को उपज का न्यूनतम प्रसंस्करण करना आवश्यक है। मंडी में सभी फसलों की खरीद के मानक एफएसएसएआई, एफसीआई और एगमार्क के द्वारा निर्धारित किये गये हैं। उचित नमी और सफाई वाली उपज को सही मूल्य मिलता है। इसलिये आवश्यक है कि ग्राम्य स्तर पर फसल को सुखाने, साफ तथा वर्गीकृत करने की व्यवस्था विकसित हो। अरहर और उर्द के लिये एफसीआई के गुणवत्ता मानक निम्न प्रकार हैं (तालिका 2)।

Hk.Mkj.k% वर्तमान स्थिति में खाद्यान्न का भण्डारण अपने आप में एक उद्योग की तरह उभरा है। कटाई के उपरान्त उत्पादन शिखर पर फसलों का मूल्य अधिकतर कम मिलता है। यदि फसल को सही तरह से सुखा, साफ और वर्गीकृत कर लिया जाय तो इसे लम्बे समय तक भण्डारित भी किया जा सकता है। जब बाजार में उत्पाद का सही मूल्य मिलने लग जाए तब उसका विपणन किया जा सकता है। लम्बी अवधि तक कृषि उत्पाद को भण्डारित करके भी लाभ अर्जित किया जा सकता है।

rkfydk 2% ,Q lhvkbl d vjgj vkj mnl grq x.koÙkk ekud

Øe l-	viorlu	vf/kdre ek=k ¼Hkkj vu lkj½
1	वाह्य पदार्थ	2.0% (खनिज < 0.25%, पशु मल अशुद्धता < 0.1%)
2	मिश्रण	3.0%
3	अन्य खाद्यान्न	1.0%
4	क्षतिग्रस्त/आंशिक क्षतिग्रस्त	3.0%
5	टूटी छिल्कारहित दाल	3.0%
6	घुनी दाल	3.0% (गणनानुसार)
7	नमी	12%
8	अपरिपक्व और सूखे दाने	3.0%

[kk| çlLdj.k % खाद्य प्रसंस्करण के माध्यम से कृषक बन्धु अपनी आय को शीघ्रता से बढ़ा सकते हैं। प्रसंस्करण के द्वारा मूल्य सम्वर्धन के साथ–साथ उत्पाद की जीवनावधि को भी बढ़ाया जा सकता है। विकसित देशों में कृषि उत्पादन की अधिकांश मात्रा का प्रसंस्करण के पश्चात पैक अवस्था में ही विपणन होता है। भारत में प्रसंस्कृत भोजन का उपयोग बढ़ रहा है किन्तु अभी भी विकसित देशों की तुलना में बहुत कम है। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मुख्यतः शहरी क्षेत्रों में सीमित है। कम मूल्य का समस्त कच्चा कृषि उत्पाद प्रसंस्करण हेतु शहरों में आता है और तत्पश्चात वितरित होता है। ढुलाई और भण्डारण के विभिन्न स्तरों पर फसल की हानि होने की सम्भावना तो रहती ही है, साथ ही उत्पाद का मूल्य अकारण बढ़ जाता है। ग्राम्य स्तर पर लघु प्रसंस्करण इकाइयाँ न सिर्फ गाँव की आवश्यकता की पूर्ति करेंगी अपितु ग्रामीण आय और रोजगार का सृजन भी करेंगी। प्रयास ये होना चाहिये कि ग्राम्यांचल से कृषि उत्पाद प्राथमिक प्रसंस्करण के बाद ही द्वितीयक या तृतीयक स्तर के प्रसंस्करण के लिए ही बाहर जाए।

—f"k 0;kikj % कृषि व्यापार मुख्य रूप से बिचौलियों पर निर्भर है। इस कारण कृषक को अपनी उपज का सही मूल्य नहीं मिल पाता। न्यूनतम समर्थन मूल्य में वृद्धि का लाभ मुख्य उत्पादक यानि किसान को नहीं मिल पाता। बिचौलिये उत्पादन चरम पर कृषकों की भण्डारण क्षमता न होने के कारण उत्पाद को कम मूल्य पर क्रय कर लेता है और उसी उत्पाद को मंडी में समर्थन मूल्य पर बेच देता है। इस प्रकार कृषक के परिश्रम और उपज–आशंका का अधिकांश लाभ बिचौलिए उठा लेते हैं। इस व्यवस्था में परिवर्तन हेतु गाँव के शिक्षित युवाओं को

कृषि व्यापार को रोजगार के रूप में अपनाना चाहिये ताकि कृषक को उसकी उपज का सही मूल्य मिल सके और उन्हें भी सम्मानजनक सेवा का अवसर मिले। ये युवा गाँव और शहर के बीच की कड़ी बनकर शहरवासियों को उचित लाभ के साथ शुद्ध आहार उपलब्ध करा सकते हैं। ग्राम्य आय में वृद्धि के लिये बिचौलियों के चक्रव्यूह को तोड़ना अत्यावश्यक है।

कृषक को कृषि से और ग्रामीण को गाँवों से जोड़े रखना आज की महती आवश्यकता है। इसके लिए ग्राम्य स्तर पर समस्त शहरी सुविधाओं का सृजन भी करना पड़ेगा। इस प्रक्रिया में ग्रामीण युवाओं को अपने क्षेत्र में ही आजीविका के अवसर मिलेंगे। कृषि उपज विपणन के माध्यम से बिचौलिये सर्वाधिक लाभ अर्जित करते हैं। यदि यही कार्य कृषकों की समिति या शिक्षित युवाओं द्वारा किया जाए तो ग्रामीण आय में वृद्धि अवश्यम्भावी है। कृषि के विभिन्न आयामों, जैसे कृषि यन्त्रों का परिचालन किराया, सिंचाई, कीटनाशक और सिंचाई–जल का समुचित उपयोग, उपज की कटाई–मड़ाई–सफाई–सुखाई, पैकिंग, भण्डारण, प्राथमिक और द्वितीयक स्तर का प्रसंस्करण तथा कृषि उपज विपणन में भागीदारी से ग्रामीण आय में वृद्धि की आपार संभावनायें हैं।

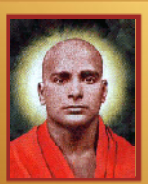

fcuk mRlkg dh fdlh y{; dh ikfIr ugh gksrhA

Lokeh jkerhFk

जड़त्व का सिद्धान्त

çlu oek

दुनिया में गति विषयक नियमों के प्रतिपादन का सारा श्रेय न्यूटन महोदय को दिया जाता है। लेकिन भारत के ज्ञानी लोग जानते और मानते हैं कि विज्ञान के सभी विषयों का उद्भव भारत में ही हुआ था। हम लोग तो खुद अपने लोकल जर्नल्स, वेद और पुराण, लिखने में इतने बिजी थे कि अपने ज्ञान को किसी तथाकथित विश्वस्तरीय जर्नल में छापने की सोच भी नहीं पाये। अन्यथा गणित, भौतिकी, रसायन और वनस्पति शास्त्र के सारे के सारे नियम हमारे खाते में ही आते। मियाँ न्यूटन जब सेब के पेड़ से गिरने का इंतजार कर रहे थे, तब तक हम उन नियमों का अपने जीवन में आत्मसात कर चुके थे। वो धरती गोल या चौकोर पर विमर्श कर रहे थे तब हम बच्चों को भूगोल पढ़ा रहे थे। अब भला हमें कोई गुरुत्वाकर्षण और जड़त्व क्या सिखाएगा। ऊपर से नीचे जाने और यथास्थिति को बनाये रखने में आजतक हमारा कोई सानी नहीं रहा। गंगा जी को जब आकाश से उतरना था तो कोई ऐसा व्यक्ति चाहिये था जो उस 'मोमेंट ऑफ इनर्शिया' को ब्रेक कर सके। गंगा यदि शिवजी की जटाओं में न उतरतीं तो सीधे पाताल लोक पहुँच जातीं। जड़त्व को तो हमारे मौलिक अधिकारों की लिस्ट में सर्वोच्च स्थान मिलना चाहिए था।

जड़ता हमारे देश के कण–कण में व्याप्त है। जब एक जगह अवस्थित होकर हम अपने भीतर ही आत्मसाक्षात्कार जैसे अनिर्वचनीय सुख का अनुभव कर सकते हैं तो भौतिक सुख–समृद्धि के लिये दुनिया को हिला डालना कहाँ की समझदारी है। ब्रह्मानंद और परमानन्द की खोज कोई और क्यों नहीं कर सका। क्योंकि किसी और को उनके गुरुओं ने स्थिर होकर बैठना सिखाया ही नहीं। दिमाग को हर रोज फॉरमैट करने का प्रावधान किसी और देश से नहीं आरम्भ हो सका। अब जब हम आनंद के अनंत सागर की कल्पना में जड़ हो ही गए तो कोई सिकन्दर आये या बाबर, हमें क्या फर्क पड़ता है। हम तो राजा और रंक में भी विभेद नहीं रखते। तुम जग के राजा तो हम मन के राजा। बात बराबर।

जीवन का सार हमें विरासत में दिया जाता है। क्या लेकर आये हो और क्या लेकर जाना है। जिन्हें ये नहीं पता वो अमरीका खोजें और भारत तक का समुद्री मार्ग तलाशें। हमारा क्या हम तो जिस विधि राखे राम उसी में खुश। इसीलिए हमारे यहाँ क्राँतियाँ नहीं होतीं। मुगल आये तो मुगल हमारे बादशाह, अंग्रेज आये तो रानी हमारी विक्टोरिया। अमरीका में क्राँति होती है तो बीस साल में अंग्रेजों को खदेड़ दिया गया। यहाँ 1857 के बाद कोई क्राँति नहीं हुई। हाँ क्राँतिकारी अवश्य हुये। जिन्होंने अवाम में व्याप्त जड़ता को तोड़ने का प्रयास तो किया, लेकिन जनता में जड़त्व का प्रभुत्व इस कदर छाया रहा होगा कि उसे जन–आंदोलन का रूप नहीं मिल पाया। बल्कि कितने ही क्रांतिकारी देशप्रेम की अलख जगाते–जगाते शहीद हो गये। हरित और सूचना क्राँति जन–चेतना का रूप हैं किन्तु उन्हें आन्दोलन का नाम नहीं दिया जा सकता।

आज भी यही जड़ता हर जगह परिलक्षित होती है। मुझे पूरी उम्मीद हैं कि तब और अब की स्थिति में कोई विशेष अंतर नहीं आया होगा। तब भी सत्य–अहिंसा–न्याय की बात करने वाले अल्पसंख्यक थे। आज भी भगत सिंह पड़ोसी के घर ही अच्छे लगते हैं। ऐसे ही कोई देश सैकड़ों वर्ष की गुलामी नहीं ढोता। आज भी कोई बदलाव की बात करता है तो हम तुरंत उसे नकार देते हैं। कहते हैं भाई, यहाँ तो ऐसा ही होता रहा है। घूस और दहेज हमारी परम्परा का हिस्सा बन चुके हैं। गन्दगी तो बाहर है हम मन साफ रखते हैं। खुले में शौच से कई लाभ हैं एक तो रिहायशी इलाकों से दूर जाने के चक्कर में टहलना हो जाता है और खेतों की मिट्टी को खुराक मिल जाती है।

गाँधी, सुभाष और शास्त्री जी में संभवतः वह नैतिक बल था कि उनके आवाह्न पर देश के लोग बड़े से बड़ा त्याग करने को उद्धत हो जाते थे। तब जमाना मीडिया ट्रायल का नहीं था कि उनकी बातों की बाल की खाल निकाली जाती। ना तब जनता बयान देते नेता की भाव–भंगिमा देख पाती थी। अखबार में जो छप गया, लोगों ने अपनी–अपनी श्रद्धा के साथ ग्रहण कर लिया। अब नेता को देश कैमरे की आँखों से देखता है। देश से आँख मिला के बात कर पाने के लिये भी एक नैतिक बल चाहिये। जो अधिसंख्य लीडरान में नहीं

है। उनकी भाषा और चरित्र दोनों ही लिबलिबे हैं जिसे कैमरे से छिपा पाना असंभव हो जाता है। ये नेता लीड कम और लीद ज्यादा करते हैं। लेकिन फिर भी हमारी जड़ता की जड़ें इतने गहरे पैठीं हैं कि कोई आँखों–देखी पर भी भरोसा करने को राजी नहीं है। जड़ता की एक खूबी ये है कि वो बिना संशय के मान लेती है जो उसे बताया जाता है। आज भी लोग अपनी पसंद का अखबार या चैनल देखना पसंद करते हैं। सरकार के विपक्षी और विरोधी पत्रकार सरकारी योजनाओं की धज्जियाँ उड़ाने में कोई कसर नहीं छोड़ते। और समर्थक उतनी ही शिद्दत से सरकार के पक्ष में पैरोकारी करते नजर आते हैं। कोई तटस्थ तरीके से तथ्यों को नहीं रखता–देखता। यही हाल जनता का है। या तो सरकार के पक्ष में खड़ी होती है या विरोध में। कुछ तो सिर्फ इसलिए विरोध करते हैं कि इसी विरोध पर ही उनकी रोजी–रोटी टिकी है। गलत को गलत और सही को सही कहना हमेशा कठिन रहा है। चाहे घर हो या बाहर। बाप यहाँ बेटे में श्रवणकुमार ढूंढता है और गुरु एकलव्य। जब नयी पीढ़ी इन आदर्शों पर प्रश्न उठाती है, तो लोग जमाने के खराब होने की दुहाई देने लगते हैं।

मैं 'इंसाफ की डगर पर बच्चों दिखाओ चल कर' सुनकर बड़े होने वालों की जमात से हूँ और अब ये दावे से कह सकता हूँ कि हम मानते हैं कि आदर्श और नीति सिर्फ बच्चों के लिए हैं। बड़ा कोई ऐसी बात करे तो बड़े आराम से कह देते हैं कि ये बच्चा ही रह गया। किसी को यदि देश अधोगति में जाता लगता है तो वो बच्चों या युवाओं की वजह से नहीं, बल्कि हमारी वजह से है। शायद हम उनके सामने उचित आदर्श प्रस्तुत करने में विफल रहे हैं। सबसे ज्यादा निराश करता है शिक्षित और संपन्न वर्ग। जो नियम–कानून का पालन करने से गुरेज करता है। मानता है *'रूल्स आर ओनली फॉर फूल्स'*। पढ़े–लिखे लोग सही और गलत में अंतर न कर पाएं तो इस शिक्षा व्यवस्था पर संदेह होना लाजमी है। आज जब स्वच्छता अभियान की बात होती है तो वो सड़क पर किलो भर थूक उगल के कहता है 'सफाई अभियन्वा फेल हुई गवा'। स्वच्छता अभियान का मूल उद्देश्य सम्भवतः लोगों में जागरूकता पैदा करना था कि कम से कम वे कूड़ा फैलाना तो बंद कर दें। सफाई कर्मियों की कठिनाइयों और कर्तव्यों के प्रति लोगों का ध्यान आकृष्ट करना रहा है। लेकिन लोग इसे सरकार की विफलता बता कर खुश हो रहे हैं। लेन में चलना हो या लाइन लगाना इन पढ़े–लिखे अनपढों से आप अधिक उम्मीद नहीं कर सकते।

एक बड़ा वर्ग आज भी ये मान रहा है विमुद्रीकरण और कैशलेस अर्थव्यवस्था का कोई लाभ नहीं हुआ न होने वाला। काला धन, घूस और भ्रष्टाचार को रोक पाना उन्हें असम्भव लगता है। जितनी मेहनत वो सरकार के दावों की हवा निकालने में कर रहे हैं उतनी कोशिश कैशलेस अर्थव्यवस्था को बढ़ाने में करते तो आम आदमी का संशय कुछ कम होता। लेकिन वे तो इस जागरूकता को बढ़ाने के बजाय उल्टे–पुल्टे बयान देते घूम रहे हैं। दलील है कि भारत जैसे कम साक्षरता वाले देश में ये लागू नहीं हो सकता। इनमें वो लोग भी शामिल हैं जो अनपढ़ जनता को फ्री लैपटॉप और स्मार्टफोन बाँटने की वकालत करते हैं। दुकानदार मोबाइल बैंकिंग और स्वाइप मशीनें इसलिए लगाने को तैयार नहीं हैं कि उन्हें व्हाइट मुद्रा में काम करने की आदत नहीं है। एक मिठाई वाला लागत के दुगने मूल्य की मिठाई बेचता है और डिब्बे सहित तौल कर बिना बिल के पैसा वसूलता है। यही हाल लगभग कमोबेश सभी दुकानदारों का है। बिल और टैक्स देना तो इनके ख्वाब में भी नहीं आता। जड़त्व का सिद्धान्त इस मामले में भी एक सार्वभौमिक सत्य के रूप में उभरा है।

जड़ता के आलम का अंदाज इस बात से ही लगाया जा सकता है कि जनता बैंक और एटीएम के आगे इसलिए लाइन लगाए खड़ी है ताकि मिठाई वाले को, दवाई वाले को, किराने वाले को, सब्जी वाले को, दूध वाले को पैसा कैश दे सके। एक मिठाई वाले को जब मैंने स्वाइप और मोबाइल बैंकिंग के लिये प्रेरित करने का प्रयास किया तो उसने सीधा प्रश्न किया कि 'टैक्स कौन भरेगा। हम तो भैया कैश ही लेंगे। किसी को लेना हो तो ले, न लेना हो तो न ले'।

^dRy dh tc mlus nh /kedh e>s]

dg fn;k eSaus Hkh ns[kk tk;sxk*

यकीन मानिये तीन महीने तक मैंने उसकी दुकान का समोसा भी नहीं खाया। उस क्षण मैंने निर्णय लिया कि इनका व्यवसाय चमकाने के लिये मैं कैश नहीं दूँगा। लाइन मैं लगाऊँ ताकि ये रोकड़ा गिनें। शुरुआत में कुछ कष्ट हुआ। पर अब मैंने ऐसी दुकानों को छाँट लिया है जो मोबाईल या स्वाइप मशीनों का इस्तेमाल कर रहीं हैं। कैश का इस्तेमाल आपात स्थिति में तो ठीक है लेकिन उन लोगों का सहयोग करना मुश्किल लगता है जो अभी भी कैशलेस भुगतान के लिये तैयार नहीं हैं। कम से कम मेरे लिए तो ये संभव नहीं है। अब मैं उसी दुकान से क्रय करूँगा जो व्यापार में लाभ के साथ–साथ टैक्स भरने की भी मंशा रखते हों।

हर लेन–देन का हिसाब जिस दिन शुरू हो जायेगा मुझे लगता है चोरी–चकारी, घूसखोरी, दहेज प्रथा, काले धन, बेनामी सम्पत्ति, आदि–इत्यादि सामाजिक बुराइयों का समूल नाश हो जायेगा। जड़त्व को तोड़ने के लिए सबसे पहले जड़ को काटना आवश्यक है। निवेदन है, खुदा के लिये इस फैसले की बुराई न कीजिये क्या पता अच्छे दिन ऐसे ही आ जायें। फिर आप क्या करियेगा। हो सके तो आप भी ये संकल्प लीजिये कि अपने इर्द–गिर्द कैशलेस सेवा का प्रसार–प्रचार करेंगे। वर्ना आपके जड़त्व का फायदा दुकानदार उठाएँगे वो भी डंके की चोट पर। शुरुआत तो उनसे होनी ही चाहिए जो स्वयं को शहरी और शिक्षित समझते हैं। यकीन मानिये अशिक्षित लोगों को यदि नियम–कानून का भान हो तो वो कदाचित ही इसके विपरीत जाते हैं। आज स्लीपर कोच में शायद ही कोई अशिक्षित व्यक्ति बिना उचित टिकट के सफर करता मिले। बैंकर और सीए नेटवर्क इस आंदोलन को फुस्स करने में लगा है। जज साहब को दंगे का अंदेशा होता है तो आयकर विभाग के अधिकारी साफगोई से नेशनल चैनल पर इतने मामलों की तफ्तीश कर सकने की अपनी असमर्थता व्यक्त कर रहे हैं। शायद इन्हें ये नहीं मालूम कि प्राइमरी शिक्षा के लिए भी शिक्षकों की भारी कमी है। इसके बावजूद यहाँ ग्रेजुएट्स की संख्या में दिन–रात वृद्धि ही हुई है और उसी की उत्पत्ति सम्वेदना और संस्कारविहीन लोग उच्च पदों की शोभा बढ़ा रहे हैं।

सरकार ने एक–एक चूड़ी रोज कसने के बजाय पूरा पेंच कस दिया। इसे क्राँति कहने में भी भाई लोग कोताही कर रहे हैं। रोज नये–नये संदेह पैदा किये जा रहे हैं। सौ और हजार सालों में कुछ हो भी गया तो मेरे विचार से उसे क्राँति की संज्ञा देना उचित नहीं होगा। क्राँति तो वो है जो मात्र कुछ सालों में ही परिकल्पित, रूपांकित और क्रियान्वित हो जाये। ये कुछ ऐसा ही कदम है। सफलता या असफलता का आँकलन तो समय करेगा। फिलहाल तो इस क्राँति में सहयोग दीजिये या तटस्थ होकर इसका मजा लीजिये। आप चाहें या न चाहें बदलाव की बयार तो बह चली है। प्रतिरोध का मार्ग छोड़कर इस बदलाव स्वीकार करने का जिगरा दिखाइये। वर्चुअल मोटरसाइकिल चल पड़ी है। जड़त्व को मारिये गोली। एक बार पूरे जोर से बोलिये – ढर्र–ढर्र, हर्र–हर्र, घर्र–घर्र, फर्र–फर्र।

djr&djr vH;kl d] tMefr gkr l|tkuA
jljh vkor tkr d] fly ij djr fu'kkuAA

vkt dk i|#"kkFk gh dy dk HkkX; gA

Mk- Hkhejko vEcndj

मनुष्य का आचरण एवं व्यवहार – एक दृष्टि में

nsojkt ,oa xksfoUn jke ikaxrh

मनुष्य जैसे ही एक दूसरे के संपर्क में आता है सर्वप्रथम उसका व्यवहार ही प्रभावित करता है। व्यक्ति की वाणी, बोल–चाल की भाषा, उसका परिधान एवं आकार को प्रथम आंका जाता है। उसका रहन–सहन, खान–पान, विचार एवं उठने बैठने का तरीका दूसरी श्रेणी में आता है। प्रथम दृष्टया में व्यक्ति के व्यवहार से ही मनुष्य के व्यक्तित्व की परिभाषा परिलक्षित होती है। इसलिए अधिकतर यह कहा जाता है कि व्यक्ति का व्यवहार ही उसका प्रथम सोपान है क्योंकि व्यक्ति के व्यवहार से उसकी मन की बात का बोध भी होता है। मनुष्य की वाणी में मिठास रूपी शब्दों का प्रयोग होना चाहिए, ताकि सुनने वाला व्यक्ति प्रभावित हो, परन्तु वाणी में मधुरता के साथ सरलता का भी संयोग होना चाहिए। व्यक्ति द्वारा कहे जाने वाले शब्द की तीव्रता एवं गति सामान्य होनी अति आवश्यक होती है जिससे सामने वाला व्यक्ति सहज भाव से आपकी बातों को सुन सके एवं ग्रहण कर सके।

सदैव यह प्रयास करना चाहिए कि आपकी वाणी से किसी को दुःख न पहुंचे, जिससे उसकी अंतर आत्मा को कष्ट भी न हो। जहां तक मधुर वाणी की बात है, हर ग्रन्थ में इसकी महत्ता को प्रधानता दी गयी है। महाभारत, भगवत गीता, बाइबिल, कुरान शरीफ, बौद्ध धर्म ग्रन्थ, जैन धर्म ग्रन्थ संत–सूफी ग्रन्थ आदि सभी ग्रंथों में वाणी को सर्वोपरि माना गया है। जो मनुष्य शालीनता एवं शिष्टता को अपने व्यवहार में समाहित करता है उस व्यक्ति को सदव्वहार की श्रेणी में स्थान प्राप्त होता है।

lar dchj nkl th ds 'kCnksa esa

Þ,slh ok.kh cksfy;s eu dk vkik [kks;]
vkSju dks 'khry djs vkigq 'khry gks;ß

मित्रों, अब थोड़ी सी चर्चा की जाय अपने कार्य क्षेत्र की जिसके माध्यम से हम अपने एवं अपने परिवार का भरण–पोषण एवं लालन–पालन करते हैं। अपने कार्य को प्रत्येक माह में पूर्ण करने के बाद हमें वेतन अर्थात पगार प्राप्त होती है, वह स्थान हमारे लिए एक पवित्र मंदिर स्वरूप होता है, जिसकी हम कर्तव्य स्वरूप पूजा के रूप में सफल बनाने का प्रयास करते हैं। जैसे ही व्यक्ति उक्त स्थान पर आकर अपना कार्यभार संभालता है वैसे ही व्यक्ति के मन में कर्तव्य की परिभाषा का बोध होने लगता है, यह तभी संभव है जब आप सत्य हृदय से घर से निकलते समय यह सोच लें कि आज मैं अपने लिए नहीं, परन्तु देश के लिए सत्यनिष्ठा से कार्य करूंगा। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि कार्यस्थल पर आने के बाद अपने से कनिष्ठ एवं वरिष्ठ लोगों का मुस्करा कर अभिवादन स्वीकार करें साथ ही प्रसन्न मन से उनको प्रणाम भी करें जो व्यक्ति के प्राकृतिक गुणों में समाहित है।

जिस वाणी में अमृत रूपी शब्दों की वर्षा होने का अनुभव हो, वह वाणी निर्मल होती है एवं हृदय को स्पर्श करती है। जो वाणी मन को स्पर्श करते हुये अपने मार्ग का निर्माण करती जाती है, उस वाणी के माध्यम से अनगिनत मनुष्यों के जीवन में विलक्षण परिवर्तन होना स्वाभाविक है। इतना ही नहीं, पालतू जानवर एवं वन्य जीव–जंतु भी उस अनमोल वाणी से आकर्षित होकर मनुष्य को अपना प्रिय मित्र बना लेते हैं। इतिहास में हमने "एनड्रोक्लीज एवं बब्बर शेर" की मित्रता की एक रोचक कहानी सुनी है जिसका अनुसरण करते हुए विश्व में अनेकों लोगों एवं जीव प्रेमियों ने शेर, मगरमच्छ, विषैले सर्प, हाथी, चिम्पैन्जी आदि अनेकों जानवरों से प्रेम करके अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। इसे भी मनुष्य के आचरण एवं व्यवहार का ही दूसरा रूप कहा जा सकता है। इतना ही नहीं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी मधुर वाणी वाले व्यक्ति को शारीरिक लाभ होता है क्योंकि उसके आंतरिक ग्रंथियों में विशेष प्रकार के लाभकारी एंजाइम एवं हार्मोन का संश्लेषण होता है। फलस्वरूप व्यक्ति सदैव स्वस्थ एवं प्रसन्न रहता है।

सौ ऊँट – समस्या हल करने की सीख देती कहानी

jktsUnz dqekj JhokLro ,oa ns'k jkt

अजय राजस्थान के किसी शहर में रहता था। वह स्नातक था और एक प्राइवेट कंपनी में नौकरी करता था पर वह अपनी जिन्दगी से खुश नहीं था। हर समय वह किसी न किसी समस्या से परेशान रहता था और उसी के बारे में सोचता रहता था।

एक बार अजय के शहर से कुछ दूरी पर एक फकीर बाबा का काफिला रूका हुआ था। शहर में चारों ओर उन्हीं की चर्चा थी। बहुत से लोग अपनी समस्याएं लेकर उनके पास पहुँचने लगे। अजय को भी इस बारे में पता चला और उसने भी फकीर बाबा के दर्शन करने का निश्चय किया।

छुट्टी के दिन सुबह–सुबह ही अजय उनके काफिले तक पहुँचा। वहाँ पर सैकड़ों लोगों की भीड़ जुटी हुई थी। बहुत इंतजार के बाद अजय का नंबर आया।

अजय बाबा से बोला ''ए बाबा मैं अपने जीवन से बहुत दुःखी हूँ। हर समय समस्याएं मुझे घेरे रहती हैं, कभी आफिस की टेंशन रहती है तो कभी घर में अनबन हो जाती है और कभी अपनी सेहत को लेकर परेशान रहता हूँ। बाबा कोई ऐसा उपाय बताइये कि मेरे जीवन में सभी समस्याएं खत्म हो जाएं और मैं चैन से जी सकूँ।''

बाबा मुस्कराये और बोले ''पुत्र आज बहुत देर हो गयी है। मैं तुम्हारे प्रश्न का उत्तर कल सुबह दूँगा लेकिन क्या तुम मेरा एक छोटा सा काम करोगे?'' अजय उत्साह के साथ बोला जरूर करूँगा।

देखो बेटा हमारे काफिले में सौ ऊँट है और उनकी देखभाल करने वाला आज बीमार पड़ गया है। मैं चाहता हूँ कि आज रात तुम इनका ख्याल रखो और जब सौ के सौ ऊँट बैठ जाएं तो तुम भी सो जाना ऐसा कहते हुए बाबा अपने तम्बू में चले गये। अगली सुबह बाबा अजय से मिले और पूछा कहो बेटा नीद अच्छी आई।

कहाँ बाबा, मैं तो एक पल भी नहीं सो पाया। मैंने बहुत कोशिश की पर मैं सभी ऊँटों को नहीं बैठा पाया। कोई न कोई ऊँट खड़ा ही हो जाता है। अजय दुखी होते हुए बोला।

मैं जानता था यही होगा आज तक कभी ऐसा नहीं हुआ है कि वे सारे ऊँट एक साथ बैठ जाएं, बाबा बोले। अजय नाराजगी के स्वर में बोला तो फिर आपने मुझे ऐसा करने को क्यों कहा।

बाबा बोले बेटा कल रात तुमने क्या अनुभव किया। यही ना कि चाहे कितनी भी कोशिश कर लो, सारे ऊँट एक साथ नहीं बैठ सकते। तुम एक को बैठाओगे तो कही दूसरा खड़ा हो जायेगा इसी तरह तुम एक समस्या का समाधान करोगे तो किसी कारणवश दूसरी खड़ी हो जायेगी। पुत्र जब तक जीवन है ये समस्याएं तो बनी रहेगी। कभी कम तो कभी ज्यादा। तो हमें क्या करना चाहिये, अजय ने जिज्ञासावश पूछा।

इन समस्याओं के बावजूद जीवन का आनंद लेना सीखो। कल रात क्या हुआ। कई ऊँट रात होते होते खुद ही बैठ गये। कई तुमने अपने प्रयास से बैठा दिये। पर बहुत से ऊँट तुम्हारे प्रयास के बाद भी नहीं बैठे और जब बाद में तुमने देखा तो पाया कि तुम्हारे जाने के बाद उनमें से कुछ खुद ही बैठ गये। कुछ समस्याएं भी ऐसी ही होती हैं कुछ तो अपने आप ही खत्म हो जाती हैं। कुछ को तुम अपने प्रयास से हल कर लेते हो और कुछ तुम्हारे बहुत कोशिश करने पर भी हल नहीं होती हैं। ऐसी समस्याओं को समय पर ही छोड़ दो। उचित समय पर वे खुद ही खत्म हो जाती हैं और जैसा कि मैंने पहले कहा, जीवन है तो कुछ समस्याऐं रहेंगी ही। पर इसका मतलब यह नहीं है कि तुम दिन–रात उन्हीं के बारे में सोचते रहो। ऐसा होता तो ऊँटों की देखभाल करने वाला कभी सो ही नहीं पाता। समस्याओं को एक तरफ रखो और जीवन का आनंद लो। चैन की नीद सोइए। जब उनका समय आएगा वो खुद ही हल हो जाएंगी। पुत्र ईश्वर के दिये हुए आशीर्वाद के लिये उसे धन्यवाद करना सीखो। पीड़ाएं खुद ही कम हो जायेगी। फकीर बाबा ने अपनी बात पूरी की।

जलवायु परिवर्तन

jk/kk —".k

बादल तो आते हैं हर साल
वैसे ही जैसे गर्मी और जाड़े आते हैं
बरखा की ऋतु भी आती है
पर न वैसी गर्मी है
न ठण्ड
न बारिश
जिसका लोग बरस भर करते थे इंतजार
मौसम परिवर्तन की मार है
हर कोई लाचार है
जाड़ों में न सूट पहनने का मौका मिलता है
न गर्मी में खादी
बारिश के इंतजार में जब आँखें पथरा जाती हैं
तो
वो बरस जाता है छिटपुट
खेतों के ऊपर
और शहरों में बरसता है तबाही की हद तक
अब तो रेगिस्तानों में आती है बाढ़
और पहाड़ों पर फटते हैं बादल
नहीं बरसता तो बारिश का मौसम
हर जगह एक तरह
किसान के लिए कुछ योजनायें हैं
बीमे की
फसल सुरक्षा की
किन्तु
उस पर जिम्मेदारी है
पूरे देश के भोजन की
जिसके खुद के खाने के लिये
देश निर्विकार है
ये
मौसम की नहीं
इंसानियत की मार है।

अन्न का भाव

eu ekgu no

सरे बाजार यूहीं कौड़ियों के भाव
नीलाम करते देखा है किसी ने
खून पसीने की गाढ़ी कमाई को
हाँ, देखा है मैंने
पसीने का भाव लगाते
शहरी साहूकारों को
अरमानों को लूटते
गरीबों के ठेकेदारों को
ये कैसा है मंजर, कैसी है व्यवस्था
लुट रहे किसान, उनकी हालत है खस्ता
उनके मेहनत की कमाई का
भाव है कोई और तय कर रहा
मर रहे वो, राजनीति कोई कर रहा
जो हैं अन्नदाता, उनका भी कोई मोल है क्या?
जो हैं जीवन देते, उनका भी कोई तोल है क्या?
लगाना ही है भाव, तो लगा दो
अन्न का नहीं
भाव अपनी जिन्दगी का।

Lk[k lk/kuk e ugh g] ;g rk eu dh vuHkfr gA
Lokeh foodkUkUn

परम ज्ञान

cã çdk'k ,o jk/kk –".kk

कुछ बातें सभी को पता नहीं होतीं, चाहे हों वे कितने भी बुद्धिमान।
यही सोचकर मैंने सोचा कि करा दूँ कुछ बातों का आपको भी ज्ञान।।

आज का काम कल पर छोड़ा है, तो रखिए महाशय एक बात का ध्यान।
कुछ काम परसों के लिए भी छोड़िए, नहीं तो हो जाएंगे कल परेशान।।

बिल्ली आपका रास्ता काट भी जाए तो, मत होइए महाशय परेशान।
हो सकता है बिल्ली का समय हो, आपसे भी कहीं अधिक मूल्यवान।।

चार लोग क्या कहेंगे हमारे बारे में, सोचा करतें हैं हम यही नित्य।
मृत्यु के उपरांत ही चार लोग ही बताते हैं कि राम नाम है सत्य।।

पता है कि हर सफल आदमी के पीछे, होता है किसी महिला का हाथ।
लगातार यदि असफल हो रहे हों तो थामिए, किसी नयी महिला का हाथ।।

जब तक जिंदगी है अपनी दोस्तों, फेसबुक की डीपी को रोज बदलना है।
मृत्योपरांत तो एक ही फोटो पर, फूल व माला चढ़कर टंगे ही रहना है।।

बचपन में हमारे बुजुर्ग सही कहा करते थे, रुपये पैसों में होती है बड़ी गर्मी।
यही कारण है कि बैंकों के सभी एटीएम में, चलाना पड़ता है 24 घंटे एसी।।

भारत में रहना है यदि तुमको, याद रखो अत्यंत आवश्यक एक कार्ड आधार।
भारत से यदि भागना है तुमको, ले लो किसी भी बैंक से दस–बीस करोड़ उधार।।

पढ़ने लिखने में जान लगा दी, हमने अपने नाम को दस्तखत बनाने में।
पर क्या करें इस बायोमेट्रिक युग में, जमाना फिर अंगूठे पर आ गया।।

बादाम–अखरोट खाने से किसी मनुष्य का, कभी चलता नहीं दिमाग।
फेसबुक तथा व्हाट्सएप नियमित चलाएं, चलेगा तभी आपका दिमाग।।

जिंदगी की दौड़ में दौड़ते, न जाने हमसे, कितनी चीजें पीछे छूट गयीं।
इस भाग–दौड़ में आभास ही नहीं हुआ कि कब अपनी तोंद आगे निकल गयी।।

यदि आप चाहते हैं जीवन सार्थक रहे आपका, बेकार में यूँ ही व्यर्थ न जाए।
तो तुरंत जंगल में ले जाकर सबसे पहले अपने मोबाइल को ईंट से कूँच आएँ।।

सफलता चूमेगी कदम आपके कोई संशय नहीं, जो यह बात मान लें आप।
हर उस बात पर करें अमल जिसे, करने की सलाह दूसरों को देते हैं आप।।

ईश्वर के भक्तों जरूरत से ज्यादा अच्छा नहीं, भगवान को करना याद।
लेने के देने पड़ जाएंगे यदि भगवान ने भी कर लिया आपको याद।।

दो ही चिंताएँ हर माँ–बाप की, दिमाग में आजकल रहतीं हैं सदा लोड।
इंटरनेट पर बेटा क्या डाउनलोड कर रहा, बेटी क्या कर रही अपलोड।।

इतना तो बगुला भी मछली पकड़ने हेतु, नहीं निकालता होगा अपनी चोंच।
आजकल की लड़कियां सेल्फी लेते समय, जितने निकालती हैं अपने होंठ।।

व्हाटसएप के लाख नुकसान हों, परंतु एक है सबसे बड़ा फायदा।
बहुत सारी औरतें बात भी कर लें, पर नहीं हो कोई आवाज पैदा।।

जो नियम कानून से नहीं चलेगा, रहेगा वह व्यक्ति सदा अभिशापित।
सुखी आज वही है जो बीवी, नौकरी व स्मार्टफोन में रखे सामंजस्य स्थापित।।

जो अपनी–अपनी पत्नी से परेशान हैं, सिर्फ उनके लिए ही है यह परम ज्ञान।
चुपचाप उनके साथ जिंदगी काटो, किसी के भी पास नहीं, इसका कोई निदान।।

ऑफिस में किसी से न बिगाड़िए संबंध, जब तक आपकी चल रही है सांस।
न जाने कब लेने के देने पड़ जाएँ, अगर वही व्यक्ति बन गया आपका बॉस।।

किसी के साथ अपने बुरे रिश्तों को तोड़कर, सच्चाई से कभी नहीं जाएँ आप भाग।
प्यास नहीं बुझा सकता गंदा पानी तो क्या, वह भी बुझा तो सकता है हर आग।।

ऐसे लोग बहुत मिलेंगे जिन्होंने, पैसे की कमी के कारण अपनी पढ़ाई दी हो छोड़।
ऐसा एक न मिलेगा आपको जिसने, इस वजह से दारू गुटखा, ही हो दिया छोड़।।

ऑफिस में काम करते–करते, एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात भूले से भी भूलें नहीं।
आप अपना घर चलाने ऑफिस आते हैं, अपने ऑफिस चलाने के लिए नहीं।।

ऑफिस का मेहनत से काम करते–करते, चाहे क्यों न दे दें आप अपनी जान।
ऑफिस बस आपको दो मिनट की श्रद्धांजलि देगा, सदा रखिए इसका ध्यान।।

सुगन्ध माटी की

xkfoUn] iolrh;

भीनी–भीनी सुगन्ध माटी की।
जग में है अद्वितीय महान महान।।

तेरे रंग में विविध भिन्न हैं
रंग–रंग अखण्डित बहुत अन्न है
चहुँ दिशाओं में तेरी महिमा
विभिन्न रंग दर्शाया ज्ञान
जग में है अद्वितीय महान महान।।

भेद रहित तेरी निराली भाषा
जन–मन में समाहित आशा
उदर–उदर की पूर्ति करें जो
सम्पूर्ण जगत करें गुण गान
जग में है अद्वितीय महान महान।।

अनोखी तुझ में सहनशीलता
गर्मी न देखी गर्म दुर्बलता
प्रेरणा जग में विश्व पटल पर
जगत–जगत तेरा सम्मान
जग में है अद्वितीय महान महान।।

Lkkeu gl dj ckyuk vkj ihB ihN cjkbl djuk iki gA

jkekuUn

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

1.	डा. नरेन्द्र प्रताप सिंह निदेशक	अध्यक्ष
2.	डा. शिव सेवक विभागाध्यक्ष (फसल सुधार)	सदस्य
3.	डा. कृष्ण कुमार विभागाध्यक्ष (फसल सुरक्षा)	सदस्य
4.	डा. पी.एस. बसु विभागाध्यक्ष (मौलिक विज्ञान)	सदस्य
5.	डा. सी.एस. प्रहराज विभागाध्यक्ष (फसल उत्पादन)	सदस्य
6.	डा. राजेश कुमार विभागाध्यक्ष (सामाजिक विज्ञान)	सदस्य
7.	डा. राज कुमार मिश्रा वरिष्ठ वैज्ञानिक (पादपरोग विज्ञान)	सदस्य
8.	डा. राजेश कुमार श्रीवास्तव वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (राजभाषा)	सदस्य सचिव

vkYkL; dh dc e lHkh lnx.k nQu gk tkr gA

bfUnjk xk/kh

हिन्दी दिवस का आयोजन

भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान में दिनांक 26 सितम्बर, 2017 को हिन्दी दिवस समारोहपूर्वक मनाया गया। डॉ. कमल मुसद्दी कवि, साहित्यकार एवं प्रवक्ता, आयुध निर्माणी कालेज, अर्मापुर, कानपुर इस समारोह की मुख्य अतिथि थीं। समारोह की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक, डॉ. नरेन्द्र प्रताप सिंह ने की। स्वागत भाषण डॉ. जी.पी. दीक्षित, परियोजना समन्वयक (चना) ने प्रस्तुत किया। संस्थान में राजभाषा की प्रगति आख्या श्री दिवाकर उपाध्याय, मुख्य संपादक ने प्रस्तुत की। समारोह में संस्थान के सभी वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक एवं सहायक वर्ग के कर्मचारियों ने भाग लिया। अपने उद्‌बोधन में श्रीमती मुसद्दी ने कहा कि हिन्दी अपनी सरलता और सहज बोधगम्यता के कारण पूरे देश में समझी और बोली जाती है और राष्ट्रीय सम्पर्क सूत्र की महती भूमिका निभा रही है। हमारे बहुभाषी देश में, सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हिन्दी एक समृद्ध भाषा है। सभी क्षेत्रों में हिन्दी की सफलता का परचम लहरा रहा है। प्रतिभाओं के मुखर होने में भाषा का प्रबल योगदान होता है।

अध्यक्षीय उद्‌बोधन में संस्थान के निदेशक, डॉ. एन.पी. सिंह ने कहा कि हमारे बहुभाषी देश में, सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आज विकास की गति में हमारी राजभाषा हिन्दी एक मजबूत सूत्रधार का कार्य कर रही है। हम अपनी भाषा में अधिक स्पष्ट एवं प्रभावी ढंग से अपने विचार एवं विषय को प्रकट कर सकते हैं। यही हमारी उन्नति का संवाहक होता है। अतः हमें अपनी राजभाषा हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग करना होगा निजी कार्यों में और सरकारी कामकाज में भी। उन्होंने कहा कि हिन्दी जीवन के हर क्षेत्र में व्यापक स्तर पर उपयोग की जा रही है। सरकारी कामकाज में भी हिन्दी का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है। उन्होंने वैज्ञानिकों का आहवान किया कि नई तकनीकी जानकारी किसानों तक उन्हीं की भाषा में पहुँचाने के लिए सतत प्रयास करें। उन्होंने हिन्दी के नये प्रकाशनों पर भी बल दिया। यदि हमें भारत को उन्नत राष्ट्रों की श्रेणी में लाना है तो इसकी एक राष्ट्रव्यापी भाषा का होना उतना ही आवश्यक है जितना की नवीन प्रौद्योगिकियों का। इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'दलहन आलोक 2017' का विमोचन भी किया।

हिन्दी पखवाड़े में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजयी प्रतिभागियों, डॉ. आदित्य प्रताप, श्रीमती कीर्ति त्रिपाठी, डॉ. गोविन्द कान्त श्रीवास्तव, सर्वश्री, आलोक कुमार सक्सेना, राजेन्द्र कुमार, श्रीमती मीनाक्षी वार्ष्णेय, श्री अखिल कुमार गंगल, श्री देवी प्रसाद तथा कार्यालयीन कामकाज में हिन्दी का उत्कृष्ट प्रयोग करने के लिए श्री आलोक कुमार सक्सेना, श्रीमती कीर्ति त्रिपाठी, श्रीमती श्रुति श्रीवास्तव, श्रीमती रीता मिश्रा, श्रीमती मीनाक्षी वार्ष्णेय, सर्वश्री शिव शरण, राजेन्द्र कुमार, प्रोमित डायस एवं मो. शब्बीर को मुख्य अतिथि ने पुरस्कार और प्रमाण पत्र प्रदान किए। कार्यक्रम के अन्त में डॉ. आई.पी. सिंह, परियोजना समन्वयक (अरहर) ने धन्यवाद ज्ञापित किया। कार्यक्रम का संचालन, डॉ. राजेश कुमार श्रीवास्तव, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी ने किया।

वर्ष 2017 में दिए गए राजभाषा पुरस्कार

1- fgUnh fucU/k ifr;kfxrk & iFke % डॉ. आदित्य प्रताप
& f}rh; % श्रीमती श्रुति श्रीवास्तव
& r`rh; % श्रीमती कीर्ति सिंह

2- fgUnh okn&fookn ifr;kfxrk & iFke % श्रीमती कीर्ति सिंह
& f}rh; % डा. आदित्य प्रताप
& r`rh; % श्रीमती श्रुति श्रीवास्तव

3- fgUnh i`'ukÙkjh ifr;kfxrk &

iFke
1. डा. जी.के. श्रीवास्तव (टीम लीडर)
2. श्री देवी प्रसाद

f}rh;
1. श्रीमती कीर्ति सिंह (टीम लीडर)
2. श्री अखिल कुमार गंगल

r`rh;
1. श्री राधाकृष्ण (टीम लीडर)
2. श्री राजेन्द्र कुमार

4- dk;kZy;hu dkedkt esa fgUnh esa vf/kdkf/kd dk;Z dju gsrq ijLdkj

iFke
1. श्रीमती कीर्ति सिंह
2. श्री आलोक कुमार सक्सेना

f}rh;
1. श्री राजेन्द्र कुमार
2. श्री शिव शरण
3. श्रीमती मीनाक्षी वार्ष्णेय

r`rh;
1. श्रीमती रीता मिश्रा
2. श्रीमती श्रुति श्रीवास्तव
3. श्री प्रोमित डायस
4. श्री मो. शब्बीर

संस्थान के हिन्दी प्रकाशन

1. उत्तर प्रदेश में दलहन उत्पादन प्रौद्योगिकी
2. दलहनी फसलों में जैविक उर्वरकों की उपयोगिता
3. दलहनी फसलों में विषाणुजनित मुख्य रोग एवं उनकी रोकथाम
4. अरहर की उन्नत खेती
5. मसूर की उन्नत खेती
6. दलहन (डा. राजेन्द्र प्रसाद पुरस्कार 2003–04 से पुरस्कृत)
7. चना की उन्नत खेती
8. मटर की उन्नत खेती
9. राजमा की उन्नत खेती
10. दलहन उत्पादन तकनीक
11. मूँग और उर्द की उन्नत खेती
12. दलहनी फसलों में सस्य विधियों द्वारा कीट प्रबन्धन
13. प्रशिक्षण पुस्तिका : दलहन उत्पादन, सुरक्षा एवं प्रसंस्करण
14. भारत में दलहनों की महत्ता, उत्पादन तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार
15. हिन्दी सहायिका
16. उन्नत तकनीकों का विकास : सफलता की गाथा
17. अरहर बीज उत्पादन तकनीक
18. दलहन उत्पादन तकनीक (संशोधित)
19. मटर की उन्नत खेती (संशोधित)
20. चना की उन्नत खेती (संशोधित)
21. चना बीज उत्पादन तकनीक
22. आई.आई.पी.आर. लघु दाल मिल द्वारा व्यवसाय सृजन
23. भारत में दलहन उत्पादन बढ़ाने की प्रौद्योगिकी
24. भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान : एक परिचय
25. चना फली भेदक – एक परिचय
26. चना फली भेदक का प्रबन्धन
27. यौन रसायन आकर्षक जाल – चना फली भेदक के प्रकोप के पूर्व ज्ञान की विधि
28. न्यूक्लियर पॉलीहाइड्रोसिस विषाणु – चना फली भेदक के नियंत्रण की एक जैविक विधि
29. दलहन प्रश्नोत्तरी – सामान्य
30. दलहन प्रश्नोत्तरी – उर्द
31. दलहन प्रश्नोत्तरी – मूँग
32. दलहन प्रश्नोत्तरी – मसूर
33. दलहन प्रश्नोत्तरी – मटर
34. दलहन प्रश्नोत्तरी – चना
35. दलहन प्रश्नोत्तरी – अरहर
36. मूँग एवं उर्द की उन्नत खेती एवं उपयोग
37. कृषक भागीदारी द्वारा मसूर का बीज उत्पादन
38. वार्षिक प्रतिवेदन 2011–12
39. कृषक भागीदारी द्वारा मसूर का बीज उत्पादन
40. दलहनी फसलों के प्रमुख कीट एवं व्याधियों का समेकित प्रबन्धन
41. काबुली चना की उन्नत खेती
42. भारत में दलहन उत्पादन बढ़ाने की प्रौद्योगिकी
43. दलहन प्रश्नोत्तरी – चना (संशोधित)
44. दलहन प्रश्नोत्तरी – मूँग (संशोधित)
45. दलहन प्रश्नोत्तरी – मटर (संशोधित)
46. दलहन प्रश्नोत्तरी – अरहर (संशोधित)
47. दलहन प्रश्नोत्तरी – उर्द (संशोधित)
48. दलहन प्रश्नोत्तरी – मसूर (संशोधित)
49. वार्षिक प्रतिवेदन 2012-13

50. अलीलोरसायन एवं आधुनिक खेती में उनकी उपयोगिता
51. दलहन आलोक 2013
52. चना फली भेदक कीट का समेकित प्रबन्धन
53. चना उत्पादन तकनीक
54. मसूर उत्पादन तकनीक
55. चना में एकीकृत रोग एवं कीट प्रबन्धन
56. संतुलित पोषक तत्व प्रबन्धन हेतु मृदा परीक्षण
57. वार्षिक प्रतिवेदन 2013-14
58. दलहन आलोक 2014
59. बुन्देलखण्ड क्षेत्र हेतु मसूर की उत्पादन तकनीक
60. बुन्देलखण्ड में चना उत्पादन की उन्नत तकनीक
61. मूँग एवं उर्द के प्रमुख रोगों एवं कीटों का प्रबन्धन
62. अरहर के प्रमुख रोगों व कीटों का प्रबन्धन
63. अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों के द्वारा उन्नत दलहन उत्पादन प्रौद्योगिकीयों का सार्वजनिकीकरण
64. वार्षिक प्रतिवेदन 2014-15
65. दलहन आलोक 2015
66. वार्षिक प्रतिवेदन 2015-16
67. दलहन आलोक 2016
68. वार्षिक प्रतिवेदन 2016-17
69. दलहन आलोक 2017
70. दलहन प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण में प्रसार तकनीकों के सफल प्रयोग
71. किसानों की आय बढ़ाने हेतु गेहूँ की उन्नत खेती
72. किसानों की आय बढ़ाने हेतु बसंतकालीन उर्द एवं ग्रीष्मकालीन मूंग की उन्नत खेती
73. दलहनी फसलों में खरपतवार प्रबन्धन
74. चना की फसल में एकीकृत रोग एवं कीट प्रबन्धन
75. बुंदेलखण्ड में चना उत्पादन की कार्यप्रणालियाँ
76. चना मित्र एप्लिकेशन पुस्तिका
77. दलहन ज्ञान मंच पुस्तिका
78. वार्षिक प्रतिवेदन 2017-18
79. फार्मर फर्स्ट डायरी
80. मसूर : एक पौष्टिक एवं लाभदायक फसल

eu"; tSlk lkprk g] oSlk gh ,d fnu cu tkrk gA
Lokeh foodkuUn

दृश्यावलोकन (2017–18)

दृश्यावलोकन (2017–18)

दृश्यावलोकन (2017–18)

दृश्यावलोकन (2017–18)

नवीनतम गतिविधियाँ

पुर, 6 सितंबर 2018 | **कानपुर जागरण** | दैनिक जागरण (06/9/2018)

25वें स्थापना दिवस पर बोले कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान मंत्री, भारतीय गन्ना अनुसंधान परिषद में तीन दिवसीय आयोजन होगा

प्रदेश में पहली बार कृषि का महाकुंभ अक्टूबर में

जागरण संवाददाता, कानपुर : प्रदेश में पहली बार कृषि के महाकुंभ का आयोजन होने जा रहा है। लखनऊ में होने वाले इस महाकुंभ में प्रदेश भर से एक लाख से अधिक किसान शामिल होंगे। 26 अक्टूबर से आरंभ होकर मेला तीन दिनों तक चलेगा। इसमें नवीन प्रजातियों के साथ ही नई कृषि तकनीकों की प्रदर्शनी लगाई जाएगी। यह घोषणा कृषि, कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान मंत्री सूर्यप्रताप शाही ने की। वह बुधवार को भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान (आइआइपीआर) के 25वें स्थापना दिवस समारोह में बतौर मुख्य अतिथि किसानों और कृषि विशेषज्ञों को संबोधित कर रहे थे।

उन्होंने बताया कि कुंभ मेले के लिए भारतीय गन्ना अनुसंधान परिषद, लखनऊ की 17 हेक्टेयर भूमि ली गई है। इसमें प्रदेश भर के कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञ, शोध कार्य से जुड़े और किसान विकास केंद्र के अधिकारी सम्मलित होंगे। मेले में कई विदेशी कृषि उपकरणों, जैविक खाद, उन्नत बीजों की प्रदर्शनी लगेगी।

धान की नई प्रजातियों के लिए वाराणसी में साउथ एशिया कैंपस : कृषि मंत्री के मुताबिक धान की फसलों की नई प्रजातियां विकसित करने के लिए वाराणसी में साउथ एशिया कैंपस खोला जाएगा। इसका उद्घाटन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी करेंगे।

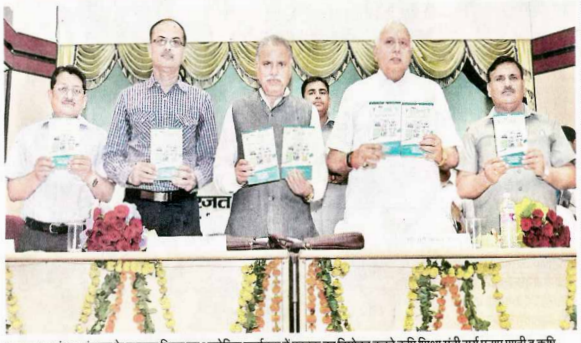

दलहन अनुसंधान संस्थान के स्थापना दिवस पर आयोजित कार्यक्रम में पुस्तक का विमोचन करते कृषि शिक्षा मंत्री सूर्य प्रताप शाही व कृषि शिक्षा राज्यमंत्री रणवेंद्र प्रताप सिंह, निदेशक डॉ. नरेन्द्र प्रताप सिंह, गिरीश प्रसाद दीक्षित और डॉ. कौशल • जागरण

पांच किसानों का हुआ सम्मान

- किरण सिंह चौहान, करछरपुर गांव, फतेहपुर
- सत्येंद्र सिंह, करछरपुर गांव, फतेहपुर
- जगन्नाथ, करछरपुर गांव, फतेहपुर
- रज्जन पासवान, मिराई गांव, फतेहपुर
- विमला देवी, मिराई गांव, फतेहपुर

फैकल्टी और स्टाफ सम्मानित

अनुसंधान संस्थान के 25वें स्थापना दिवस समारोह में डॉ. पीके कटियार, डॉ. एके परिहार, कृष्ण अवतार, सतीश चंद्र, मदन को सम्मानित किया गया।

शोध करें वैज्ञानिक : विशिष्ट अतिथि कृषि, कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान राज्यमंत्री रणवेंद्र प्रताप सिंह ने बताया कि उन्नत प्रजातियों के बीज और उत्पादन तकनीक से दलहन उत्पादन अपने आप बढ़ जाएगा। उन्होंने वैज्ञानिकों से नई प्रजातियों के शोध करने का आह्वान किया। आइसीएआर विंटर स्कूल (कार्यशाला) का उद्घाटन किया गया। यह कार्यशाला 25 सितंबर तक चलेगी। स्थापना दिवस पर 'मसूर एक पौष्टिक एवं लाभकारी फसल' का विमोचन हुआ। इस मौके पर निदेशक डॉ. नरेंद्र प्रताप सिंह ने संस्थान की विभिन्न गतिविधियों और उपलब्धियों के बारे में जानकारी दी। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के बारे में बताया। परियोजना समन्वयक गिरीश प्रसाद दीक्षित, डॉ.उमा शाह, डॉ. मीनल राठौर, डॉ. कौशल, डॉ. राजेश श्रीवास्तव समेत अन्य लोग उपस्थित रहे।

पोषाहार की कमी से बढ़ रहा कुपोषण

जासं, कानपुर : कृषि मंत्री सूर्यप्रताप शाही के मुताबिक उत्तर प्रदेश में पोषाहार की कमी है, जिसकी वजह से कुपोषण को बढ़ावा मिल रहा है। राज्य में दलहन का उत्पादन जरूरत का सिर्फ 39 फीसद ही होता है। बाकी की पूर्ति अन्य राज्यों और विदेशों से मंगवाकर करनी पड़ रही है। दालों की कमी शाकाहारी लोगों को प्रभावित कर रही है। यह किसानों और कृषि वैज्ञानिकों के लिए चुनौती है।

लक्ष्य से ज्यादा दलहन का उत्पादन : मंत्री ने बताया कि भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान (आइआइपीआर) ने 497 प्रजातियां विकसित की हैं। इनका फायदा किसानों और देश की जनता को मिल रहा है। प्रधानमंत्री ने 2021 तक देश में 22 लाख मिलियन टन दलहन उत्पादन का लक्ष्य रखा था, लेकिन यह 2016-17 में 23 लाख मिलियन टन तक पहुंच गया।

आवेदकों को 14 सितंबर तक मौका : कृषि उपकरणों में छूट के लिए ऑनलाइन आवेदन करने वाले किसानों को 14 सितंबर तक दस्तावेज प्रस्तुत करने का मौका मिलेगा। प्रदेश में 456 करोड़ रुपये का मुआवजा सीधे किसानों के खाते में भेजा जा चुका है।

बोले कृषि मंत्री

- राज्य में जरूरत का सिर्फ 39 फीसद ही दलहन उत्पादन, बाकी करना पड़ता आयात
- दालों की कमी शाकाहारी लोगों को प्रभावित कर रही, यह वैज्ञानिकों, किसानों के लिए चुनौती

(हिन्दुस्तान) 06/9/2018

आईआईपीआर में मनाया रजत जयंती समारोह, प्रदेश के कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने किया संबोधित

दक्षिण एशिया के देश खाएंगे यूपी की दाल

कानपुर | कार्यालय संवाददाता

देश के साथ प्रदेश में दलहन का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है। हम अपनी खपत के अनुसार दलहन का उत्पादन करने लगे हैं। जल्द वह समय आएगा, जब हमारी दाल का स्वाद दक्षिण एशिया के देश लेंगे। दलहन का उत्पादन प्रति वर्ष बढ़ रहा है। इसलिए निर्यात करने की तैयारी शुरू हो गई है। यह बात प्रदेश के कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने कही। उन्होंने बुंदेलखंड को लेकर चिंता जताई।

भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान का 25 साल पूरे होने पर बुधवार को रजत जयंती स्थापना दिवस मनाया गया। इसका शुभारंभ मुख्य अतिथि कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही, विशिष्ट अतिथि कृषि राज्यमंत्री रणवेंद्र प्रताप सिंह और संस्थान के निदेशक डॉ. एनपी सिंह ने दीप प्रज्वलित कर किया। सूर्य प्रताप शाही ने कहा कि प्रदेश में गंगा, जमुना के साथ जलवायु कृषि योग्य है। बावजूद हम उत्पादन कम कर रहे हैं। इसलिए कृषि को बढ़ावा देना जरूरी है। वैज्ञानिकों को अब बुंदेलखंड की जलवायु के अनुसार विशेष प्रजाति तैयार करनी चाहिए।

लखनऊ में प्रदेश का पहला कृषि महाकुंभ : शाही ने कहा कि कृषि को बढ़ावा देने के लिए सरकार प्रयासरत है। लखनऊ में प्रदेश का पहला कृषि कुंभ आयोजित होगा। 26 से 28 अक्तूबर के बीच होने वाले कुंभ प्रदेशभर के सभी वैज्ञानिक हिस्सा लेंगे। आईसीएआर के सहयोग से यह कुंभ भारतीय गन्ना संस्थान परिषद के परिसर में लगेगा। इसमें सभी वैज्ञानिक अपनी सर्वश्रेष्ठ प्रजाति का प्रदर्शन करेंगे।

भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान के 25 साल पूरे होने पर आयोजित रजत जयंती समारोह में मौजूद अतिथिगण।

वैज्ञानिकों को मिला सम्मान

वैज्ञानिक	सम्मान
• डॉ. पीके कटियार	उत्कृष्ट वैज्ञानिक (वरिष्ठ श्रेणी)
• डॉ. एके परिहार	उत्कृष्ट वैज्ञानिक (युवा श्रेणी)
• कृष्ण अवतार	सर्वोत्तम कार्यकर्ता (तकनीकी अधिकारी)
• सतीश चंद्र	सर्वोत्तम कार्यकर्ता (प्रशासनिक)
• मदन	सर्वोत्तम कार्यकर्ता (सहायक)
• डॉ. पीके कटियार	उत्कृष्ट टीम अवार्ड (बीज)

पांच किसानों का उत्साहवर्धन

कार्यक्रम में किरन सिंह चौहान, सत्येंद्र सिंह, जगन्नाथ, रज्जन और विमला देवी का सम्मान उत्साहवर्धन किया गया।

चना और मटर की कम पानी में अच्छी पैदावार

विशिष्ट अतिथि रणवेंद्र प्रताप सिंह ने कहा कि चना व मटर की कम पानी में अच्छी पैदावार हो रही है। कम पानी वाली अन्य प्रजातियों को भी तैयार करें। वैज्ञानिक इस तरह की प्रजाति पर भी शोध करें, जिसका कम बारिश या अतिवृष्टि का अधिक असर न पड़े। दलहन की नई प्रजातियों के बीज किसानों तक पहुंचाना जरूरी है।

संस्थान में ट्रांसजेनिक विकास कार्यक्रम

आयोजित कार्यक्रम में डॉ. एनपी सिंह ने कि मध्यम अवधि की अरहर की संकर प्रजाति के विकास में संस्थान को सफलता मिली है। संस्थान में ट्रांसजेनिक विकास कार्यक्रम चल रहा है। आईसीएआर विंटर स्कूल का पांच से 25 सितंबर के बीच आयोजन चल रहा है। कार्यक्रम में डॉ. राजेश श्रीवास्तव की संपादित तकनीकी पुस्तिका 'मसूर-एक पौष्टिक एवं लाभकारी फसल' का विमोचन किया।

सीएसए का किया औचक निरीक्षण : आईआईपीआर से कृषि मंत्री सीधे सीएसए विवि पहुंचे। वहां उन्होंने अधिकारियों के साथ बैठक की। उन्होंने विवि के वैज्ञानिकों से नई प्रजाति तलाशने की बात कही। उन्होंने आश्वस्त किया कि 15 दिन के अंदर विवि के शिक्षकों को भी सातवें वेतनमान का लाभ मिलेगा। इस मौके पर डॉ. एचजी प्रकाश, डॉ. पूनम सिंह, डॉ. धूम सिंह, डॉ. डीपी सिंह मौजूद रहे।

रजत जयंती समारोह का दीप जलाकर शुभारंभ करते मुख्य अतिथि कृषिमंत्री सूर्य प्रताप शाही, विशिष्ट अतिथि कृषि राज्यमंत्री रणवेंद्र प्रताप सिंह व अन्य। • हिन्दुस्तान

06/9/2018 (अमर उजाला)

दलहन की कम समय वाली प्रजातियां तैयार करें : सूर्य प्रताप शाही

अमर उजाला ब्यूरो

कानपुर। कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने विज्ञानियों से कहा है कि दलहन की ऐसी प्रजातियां तैयार की जाएं जो कम से कम समय में तैयार हों। इससे उत्पादन पर न तो सूखे का प्रतिकूल पड़ेगा और न ही अतिवृष्टि का। कृषि मंत्री शाही ने बुधवार को भारतीय दलहन संस्थान के रजत जयंती समारोह में कहा कि किसान खपत के अनुसार दलहन का उत्पादन करने लगे हैं। जल्द वह समय आएगा जब हमारी दाल का स्वाद दक्षिण एशिया के देश लेंगे। दलहन के निर्यात करने की तैयारी शुरू हो गई है।

कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने बुंदेलखंड को लेकर चिंता जताई और विज्ञानियों से अपेक्षा की जल्दी से जल्दी नई प्रजातियां तैयार की जाएं जिन पर जलवायु परिवर्तन का कम असर हो। कार्यक्रम का शुभारंभ दीप प्रज्जवलित कर किया। शाही ने कहा कि प्रदेश में गंगा, जमुना के साथ जलवायु कृषि योग्य है। इसके बावजूद अपेक्षित उत्पादन नहीं है। यहां दलहन का उत्पादन और बढ़ाया जा सकता है।

वैज्ञानिकों को अब बुंदेलखंड की जलवायु के अनुसार विशेष प्रजाति तैयार करनी चाहिए। उन्होंने कहा कि खाद्यान्न अधिक होने के बाद भी कुपोषण खत्म नहीं हो रहा है, यह चिंतनीय विषय है। वैज्ञानिक ऐसी प्रजाति तैयार करें, जिसमें पोषण की मात्राएं अधिक हो। इससे पूरी तरह शाकाहारी रहने वाले व्यक्ति को भी पूरा पोषण मिल सके।

विशिष्ट अतिथि रणवेंद्र प्रताप सिंह ने कहा कि चना व मटर की कम पानी में अच्छी पैदावार हो रही है। कम पानी वाली अन्य प्रजातियों को भी तैयार करने की जरूरत है। डॉ. एनपी सिंह ने कहा कि मध्यम अवधि की अरहर की संकर प्रजाति के विकास में संस्थान को सफलता मिली है।

दलहन संस्थान का रजत जयंती समारोह

वैज्ञानिकों को मिला सम्मान

डॉ. पीके कटियार को उत्कृष्ट वैज्ञानिक (वरिष्ठ श्रेणी), डॉ. एके परिहार को उत्कृष्ट वैज्ञानिक (युवा श्रेणी), कृष्ण अवतार को सर्वोत्तम कार्यकर्ता (तकनीकी अधिकारी), सतीश चंद्र को सर्वोत्तम कार्यकर्ता (प्रशासनिक), मदन को सर्वोत्तम कार्यकर्ता (सहायक), डॉ. पीके कटियार व टीम को उत्कृष्ट टीम अवार्ड (बीज)

पांच किसानों का सम्मान

किरन सिंह चौहान, सत्येंद्र सिंह, जगन्नाथ, रज्जन और विमला देवी।

दलहन संस्थान ने मनाया २५ वां स्थापना दिवस

कानपुर। दलहन अनुसंधान संस्थान का २५ वां स्थापना दिवस समारोह मनाया गया। इस अवसर पर सूर्य प्रताप शाही कृषि शिक्षा एवं कृषि अनुसंधान मंत्री, उत्तर प्रदेश सरकार मुख्य अतिथि और रणवेन्द्र प्रताप सिंह, राज्य मंत्री कृषि, कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान उत्तर प्रदेश सरकार, विशिष्ट अतिथि रहे दीप प्रज्जवलन के पश्चात संस्थान के निदेशक डा. नरेन्द्र प्रताप सिंह ने अतिथियों एवं सभागार में उपस्थित सभी जनों का स्वागत किया। मुख्य अतिथि ने कहा कि आज खाद्यान्नों का उत्पादन कई गुना अधिक है हैं फिर भी कुपोषण की समस्या बनी हुई है। उन्होंने दलहनों के प्रति व्यक्ति घटती उपलब्धता तथा शाकाहारी लोगों पर इसके कुप्रभाव पर चिंता व्यक्त की। बदलते जलवायु परिदृश्य, पर्यावरण प्रदूषण तथा खेती पर इसके दुष्प्रभाव पर चिंता व्यक्त करते हुए उन्होंने स्वस्थ पर्यावरण पर जोर दिया और उर्वरकों के संतुलित उपयोग की सलाह दी। संस्था के निदेशक डा. सिंह ने कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों एवं राष्ट्रीय कार्यक्रमों के अन्तर्गत दलहनों पर चल रही विभिन्न परियोजनायें अत्यन्त लाभप्रद रही हैं और उनसे उन्नत प्रजातियां, तकनीकी तथा मानव संसाधन विकास में सफलता मिलती है।

ISO 9001-2008

भाकृअनुप-भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान

कानपुर - 208 024

फोन : 0512-2580986, 2580988, फैक्स : 0512-2580992

ई-मेल : director.iipr@icar.gov.in
diriipr.icar@gmail.com

वेबसाइट : http://www.iipr.res.in

army printing press
www.armyprintingpress.com
Lucknow (0522) 6565333